भारत सरकार
विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय
विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग
द्वारा पुरस्कृत

पर्यावरण प्रदूषण
कारण और निवारण

(पानी हवा दूध व मांस स्वास्थ्यविज्ञान एवं
स्वच्छता और वृक्षारोपण)

डॉ एस के पुरोहित

औषध विभाग

बी वी एस सी एण्ड ए एच एम वी एस सी, पी एच डी

पशुचिकित्सा एवं पशुविज्ञान महाविद्यालय

राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय

बीकानेर 334 001

एस के पब्लिशर्स

आल इन्डिया रेडियो स्टेशन रोड, बीकानेर (राजस्थान) 334 001

प्रकाशक

एस के पब्लिशर्स
E 10 पशुचिकित्सा एव पशुविज्ञान महाविद्यालय
आल इण्डिया रेडियो स्टेशन रोड
बीकानेर (राजस्थान)

शाखा
43 बछराज का बाग
12 वी रोड सरदारपुरा
जोधपुर 342 001

एस के पुरोहित (1946)

प्रथम सस्करण नवम्बर 1988
द्वितीय सस्करण जनवरी 1990
मूल्य 80 रु
आवरण श्रीमती उषा पुरोहित

एस के पब्लिशर्स बीकानेर (राजस्थान) 334 001 भारत के लिए श्रीमती उषा पुरोहित द्वारा प्रकाशित एव बन्धु प्रिंटिंग सर्विस, शाहदरा, दिल्ली 32 में मुद्रित

पूजनीय माताजी श्रीमती श्यामप्यारी पुरोहित
एवं पिताश्री शिवदत्त जी पुरोहित के लिए
जिनके आशीर्वाद और प्रेरणा से यह पुस्तक पूरी हुई।

प्रस्तावना

जीवन के लिये पानी हवा, दूध, मास व वनस्पति बहुत ही आवश्यक हैं। मनुष्यो और पशुओ का स्वास्थ्य अच्छा बनाये रखने के लिये इन सभी का शुद्ध व आरोग्यप्रद अवस्था मे उपलब्ध होना अति आवश्यक है। आज स और अभी से ही हमारा ध्येय यह होना चाहिये कि अच्छे स्वास्थ्य के लिये हम हमारे पर्यावरण को प्रदूषित नही करे। हर व्यक्ति को स्वास्थ्यविज्ञान के नियमो का दृढता से पालन करते हुए प्रदूषण पर नियत्रण पाने के लिए मिल जुल कर सामुहिक योग दान देना चाहिये। भारत मे पर्यावरण प्रदूषण की समस्या विकराल रूप लिये खडी है। प्रदूषण के कारण पानी, हवा, दूध व मास का सदूषण होता है जिससे प्रतिवष वडी सख्या मे मनुष्य, पशु, मुर्गी व मछली आदि रोग ग्रस्त होते है या मर जाते हैं। आम व्यक्ति स्वास्थ्यविज्ञान के अध्ययन द्वारा ही स्वच्छ व प्रदूषण रहित पर्यावरण बनाये रख सकता है। इस पुस्तक मे पर्यावरण प्रदूषण के कारणो का विस्तृत ज्ञान और उससे बचाव के लिये अत्य त महत्वपूण सामग्री प्रस्तुत की गई है।

हि दी म अपने विषय की प्रथम पुस्तक होने के कारण इसमे कुछ कमिया और दोष रह जाना स्वाभाविक है। विद्यार्थियो, अध्यापको और अ य पाठको से मेरा निवेदन है कि वे इस पुस्तक की त्रुटिया दूर करने और इसको और भी अधिक उप योगी बनाने के लिए आवश्यक सुझाव लेखक को भेजने की कृपा करें।

इस पुस्तक की भाषा सुधार हेतु मुझे श्री ऋषि कुमार रगा, राजकीय मुद्रणालय, बीकानेर और डा सत्यनारायण स्वामी, राजस्थान अभिलेखागार विभाग, बीकानेर से पर्याप्त सहायता मिली है। मैं आपका आभारी हू।

मैं अपने सुयोग्य प्रकाशक श्रीमती उषा का आभारी हू जिनके सतत् प्रयत्न से यह पुस्तक इतनी सु दरता से प्रकाशित हो सकी है।

बीकानेर
नवम्बर, 1988

एस के पुरोहित

विषय सूची

प्रथम भाग

पर्यावरण प्रदूषण कारण और निवारण

द्वितीय भाग

पानी और हवा का विश्लेषण (प्रायोगिक)

प्रथम भाग

पर्यावरण प्रदूषण कारण और निवारण

1

पानी

पानी का बढता दुरुपयोग और प्रदूषण

मनुष्यो, पशुओ और पौधो के जीवन और बढोत्तरी के लिये पानी प्राथमिक महत्त्व रखता है। यह शरीर म पानी की मात्रा और उसका तापक्रम बराबर बनाये रखने मे सहायक है। हमारे शरीर मे कुल भार के अनुपात मे 75 प्रतिशत पानी की मात्रा होती है। यह पसीने, मल और मूत्र के द्वारा शरीर म काम न आने वाले और हानिप्रद पदार्थों को शरीर से बाहर निकालने म सहायता करता है। पानी के मामले मे इस देश की गिनती दुनिया के सम्प न देशो मे होती है मगर दुर्भाग्य की बात है कि कही पर वर्षा बहुत और कही पर नही के बराबर हाती है इसलिये इस देश मे पानी की समस्या एक विकट समस्या है। साथ ही साथ पानी का रख रखाव व उप योग ठीक से नही होने के कारण पानी के प्रदूषण की समस्या विकराल रूप धारण कर चुकी है। ज्यादा पानी बरसना, बाढ आना, सूखा पडना एव घरो और कारखानो से निकलने वाला गदा पानी आदि इस समस्या मे आग मे घी डालने का काम कर रहे हैं। इनसे प्रदूषण इतना बढ रहा है कि नलकूपा, हैंडपम्पो और पानी के स्रोतो से रगीन पानी आने लगा है। पानी मे मनुष्यो और पशुओ मे बीमारी पैदा करन वाले सूक्ष्म जीवाणु, रासायनिक विष, कारखाने और घर की नालियो का पानी और कार्बनिक तथा अकार्बनिक पदार्थ पाए जाये तो उसे प्रदूषित पानी कहते हैं। पानी का प्रदूषण मुख्यतया मनुष्यो और पशुओ के द्वारा ही होता है।

पानी के रासायनिक मिश्रण म दो भाग हाइड्रोजन और एक भाग आक्सीजन का होता है। वाष्प रूप म पानी बहुत शुद्ध होता है लेकिन जब वर्षा के रूप मे यह धरती पर बहता है तब वायुमण्डल और धरती की अशुद्धिया अपन साथ घोल लेता है। पानी मे पदार्थों को घोलने का गुण होने के कारण यह आसानी से दूषित हो जाता है, इसलिये यह कभी भी शुद्ध रूप म नही पाया जाता।

पानी के उपयोग

1 घरेलू उपयोग

(ए) मनुष्यो के पीने के लिये (बी) खाना पकाने के लिये (सी) धाने के लिये (डी) पशुओ के पीने और उनके घरा की सफाई के लिये (ई) नहाने के लिये

(एफ) गाडिया धोने के लिये (जी) बागवानी के लिये (एच) घरों को ठडा रख के लिये।

2 सार्वजनिक उपयोग

(ए) नालियो की सफाई (बी) गलियो की सफाई (सी) अस्पताल की सफाई (डी) नहाने के कुड के लिये (इ) मूत्रालय की सफाई (एफ) पीने के लिये सावजनिक नल।

3 कारखानों के लिये

(ए) लोहा (बी) स्टील (सी) कागज (डी) कपडा (इ) रेल व चमडा उद्योग (एफ) मछली पालन (जी) दाना बनाने का कारखाना (एच) दूध की डेयरी और अन्य उद्योग।

4 कृषि सम्बन्धी उपयोग

पानी द्वारा मनुष्यों और जानवरों मे फैलने वाले रोग

प्रदूषण द्वारा मनुष्यो और पशुओ मे सूक्ष्म जीवो और रसायनों की उपस्थिति के कारण बहुत से रोग हो जाते हैं जो इस प्रकार हैं—

(ए) पानी मे सूक्ष्म जीवाणुओं की उपस्थिति के कारण मनुष्यो में होने वाले रोग —

सक्रामक रोगो के कारण	सूक्ष्म जीवाणुओं की किस्मे/वग	रोग
वाइरस	हिपटाइटिस वाइरस ए और बी	वाइरल हिपटाइटिस
	पोलियो वाइरस	पोलियोमाइलाइटिस
बैक्टीरिया	क्लोस्ट्रीडियम वैलशाई	गस गेंग्रीन
	ऐस्करिटोया कोलाई	गैस्ट्रोएन्टराइटिस
	पास्चुरेला टूलेरेन्सिस	टूलेरिमिया
	साल्मोनीला टायफी	टायफोयड
	साल्मोनीला पेराटायफी	पेराटायफोयड
	शिगला स्पीशीज	बसिलरी डिसेन्टरी
	स्ट्रेप्टोकोक्स फीकलिस	एन्टराइटिस
	विब्रियो कौलेरा	कोलेरा (हैजा)
स्पाइरोकीटस	लेप्टोस्पाइरा— इक्टीरोहिमोरैजिका	वेल्स रोग
प्रोटोजोआ	एन्टेअमीबा हिस्टोलिटिका	अमीबिएसिस
	जिआरडिया लेम्बलिया	जिआरडियेसिस

हैल्मिन्थ	ऐकैस्रिस लम्ब्रीक्वायडस	ऐस्केरिस रूग्णता (दस्त लगती है)
	एन्ट्रोबियस वर्मीकूलरिस	अ ड वम, इनसे रुकावट, न्युमोनिया आदि होता है।
	इकाइनोकोकस ग्रेन्यूलोसस	हाइडेटिड रोग
	ड्रेकनकूलस मीडीनसिस	नारू रोग (इस रोग के भ्रूण साइक्लोप मे पनपते हैं और इन्हें मनुष्य पानी के साथ पी लेता है)
	सिस्टोसोमा जापानिक्म सिस्टोसोमा मान्सिनि सिस्टोसोमा हिमेटोबियम	सिस्टोसोमिएसिस-रूग्णता (यह पानी म रहने वाले सिरवेरिया मे पाया जाता है)

(बी) पानी म सूक्ष्म जीवाणुओ की उपस्थिति के कारण पशुओ मे होने वाले रोग –

सक्रामक रोगो के कारण	सूक्ष्म जीवाणुओ की किस्मे	रोग
वायरस	खुरपका मुहपका रोग की वायरस	खुरपका–मुहपका रोग
	रिन्डरपस्ट वाइरस	पशु प्लेग या रिन्डरपैस्ट
	न्यू कसल वाइरस या रानीखेत रोग की वायरस	न्यू कसल रोग या रानीखेत की बीमारी
बैक्टीरिया	बैसिलस एन्थ्रेसिस	एन्थ्रैक्स
	ब्रूसेला एबाटस	ब्रूसेल्लोसिस
	क्लोस्ट्रीडियम वेलशाइ	गस ग्रेंग्रीन
	क्लोस्ट्रीडियम शोभिआइ	लगडी रोग
	एरिसिपेलोथ्रिक्स रूजियोपेथी	सुअरो मे एरिसिपेलास
	ऐस्करिटीया कोलाई	बछडो मे दस्त लगना
	माइकोबैक्टीरियम—पैराटयुबरक्युलोसिस	जोने रोग
	माइकोबैक्टीरियम—टयुबरक्युलोसिस (गाय, मनुष्य और मुर्गी म क्षय रोगा के जीवाणुओ की किस्मे)	क्षय रोग

	बैसिलस मेलिआई	ग्लैंडस
	स्ट्रेप्टोकोकस इक्वाई	स्ट्रेंगल्स
स्पाइरोकीटस	लेप्टोस्पाइरा बोविस	गायो मे लेप्टोस्पाइरा का रोग
	लेप्टोस्पाइरा केनिकोला	केनिकोला ज्वर
	लेप्टोस्पाइरा—इक्टोरोहिमोरेजिका	वेल्स रोग
प्रोटोजोआ	आइमेरिया की किस्म	पशु पक्षियो मे कॉक्सीडीयोसिस का रोग
	एन्टेअमीबा हिस्टोलिटिका	कुत्तो मे अमीबिएसिस का रोग
हैल्मिन्थ	फैसियाला हिपैटिका	फसियोला रुग्णता
	सिस्टीसरकस बोविस	मासपेशियो मे सिस्टीसरकस की अवस्था
	डाइफाइलोबोथ्रीयम लेटम	साइक्लोप्स मे मध्य अवस्था और मछली मे प्लीओसर्कोइड लार्वल अवस्था
	इकाइनोकोकस ग्रेन्यूलोसस	पशुओ मे हाइडेटिड रोग
	टोक्सोकेरा केनिस	ऐस्केरिस रुग्णता (दस्त लगती है)
	ऐस्केरिस सम्म	एस्केरिस के कारण फेफडो में सूजन आना

(सी) मनुष्यो और पशुओ म निम्न रसायन पानी मे होने पर कई तरह के रोग पदा करते हैं—

(ए) अम्ल (बी) क्षार (सी) साबुन को घोलने वाले रसायन (डी) आर्सेनिक (इ) सायनायड (एफ) सीसा (जी) नाइट्रोजिनस पदाथ (एच) जीवो को हानि पहुचाने वाले कार्बनिक पदार्थों के मिश्रण (आइ) सल्फाइड (जे) पिगमेन्टस (के) डाइज (एल) ब्लीचिंग पदाथ।

जल प्रदूषण के कारण—

1 घरो से निकलने वाला गदा पानी (मल, मूत्र, रसोईघर और स्नानघर)	(ए) रोग पैदा करने वाले जीवाणु और (बी) मौलिक पदार्थों म पृथक होने योग्य कार्बनिक पदाथ।
2 कारखानो से निकलने वाला गन्दा पानी	(ए) विषले रसायन (धात्विक और अधात्विक) और (बी) रोग पैदा करने वाले जीवाणु।

3 वायुमण्डल	(ए) अम्ल (बी) क्षार (सी) कार्बनडाइ-आक्साइड और (डी) सल्फर डाइऑक्साइड ।
4 कृषि सम्बन्धी प्रदूषक	(ए) उर्वरक (बी) कीटनाशक रसायन और (सी) पत्तियों का सड़ना ।
5 भौतिक प्रदूषक	(ए) गर्मी और (बी) आणविक विकिरण ।
6 शवों का उचित ढंग से निस्तारण नहीं करना ।	

भारत मे 80 प्रतिशत लोग गावों मे बसे हैं, और उनमे से ज्यादातर अनपढ़ हैं। ये लोग स्वास्थ्य सम्बन्धी जानकारी से अनभिज्ञ हैं । ग्रामीण लोग ज्यादातर कृषि और पशुओ पर निर्भर रहते हैं। मनुष्यो और पशुओ के मल मूत्र का सही ढंग मे निस्तारण नही होने से और कृषि के काम मे लाये जाने वाले रासायनिक उर्वरक और कीटनाशक रसायन का फसलो पर सही तरीके से उपयोग नही कर पाने के कारण पानी के प्रदूषण की समस्या बढती जा रही है। बहते हुए पानी मे शवो को और कारखानों के पानी को छोडना एक आम बात हो गई है, और इसी से नदियो मे प्रदूषण की समस्या उठ खडी हुई है। गावो मे लोग पीने और दूसरे काम के लिए पोखर या तालाब के पानी पर निर्भर रहते हैं। पशु भी इन्ही पोखरो और तालाबो मे अन्दर तक जाकर पानी से प्यास बुझाते हैं, लेकिन साथ साथ वे इसे अपने मल और मूत्र द्वारा प्रदूषित भी करते हैं। कुछ पशु जैसे सूअर और भैंस भी गर्मी से बचने के लिए इसमे तरते रहते हैं और पानी को मल और मूत्र द्वारा सदूषित करते हैं।

वर्षा के मौसम मे नालियो का रख रखाव ठीक ढग से नहीं होने के कारण तथा बाढ आने पर अक्सर कुओ और तालावो का पानी दूषित हो जाता है । यह पानी अपने साथ खेतो, फसलो और भूमि के उवरक, कीटनाशक रसायन, कार्बनिक पदार्थ, मल मूत्र, जीवाणु और खरपतवार आदि बहाकर ले जाता है और पानी के स्रोतो मे मिलने पर उन्हे भी दूषित करता है। इस प्रकार ऐसा पानी पीकर मनुष्यो और पशुओ को भारी नुकसान उठाना पडता है।

दूषित पानी का उपयोग दूध की डेयरी और उससे बनने वाले पदार्थों के लिए ठीक नही होता। दूषित पानी से इनका प्रदूषण होता है और इनका उपयोग करने वालो की सेहत पर प्रतिकूल असर होता है । कुछ जीवाणु जैसे क्लोस्ट्रीडियम वेलशाई और ए ब्रकस आदि जब पानी के प्रदूषण से दूध मे मिल जाते हैं तब यदि दूध को कुछ समय के लिए उबाला जाये तो भी वे समाप्त नही होते हैं और ऐसे दूध को पीने पर मनुष्य अक्सर इन रोगो से पीडित हो जाते हैं।

ऐसा सोचा जाता है कि आने वाले समय मे आणविक विकिरण पैदा करने वाले तत्व पानी मे मिलकर प्राणियो के लिये काफी भयकर समस्या पैदा करेंगे।

एटोमिक रिएक्टर से, अणु बिजलीघर से या आणविक विकिरण तत्व रखने वाले कारखानो से विकिरण की अल्प खुराक पानी के स्रोतो मे मिल कर उसे सदूषित कर सकती है। यह किसी दुश्मन देश द्वारा भी किया जा सकता है। आकाश व दूसरी जगह से लगातार एक साल मे 0 1 राड (Rad) विकिरण मिलता है। विकिरण की मात्रा एक साल मे 5 राड स ज्यादा नही बढ़नी चाहिए। राड किसी के द्वारा ग्रहण की गयी विकिरण खुराक की इकाई है। यह एक ग्राम मांस पेशियो या किसी पदाथ के द्वारा ग्रहण की गयी विकिरण खुराक की मात्रा होती है (एक एम राड 0 001 राड)। चिकित्सको के अनुसार विश्लेषण से पता चला है कि जिन स्थानों पर विकिरण का स्तर कम था वहा कैंसर रोग की दर भी कम थी।

जल प्रदूषण से बचाव और नियत्रण

1 लोगों को पानी के प्रदूषण के कारण और इससे होने वाली हानियों के बारे मे शिक्षित करना चाहिये। लोगो को इस बात की शिक्षा लेनी चाहिए कि अच्छा और साफ पानी स्वास्थ्य के लिये जरूरी है, और इसलिये अपनी बुरी आदतो को त्यागें जिससे पानी के स्रोतों को दूषित होने से बचाया जा सके। लोगो को स्वास्थ्य-सम्बधी जानकारी दें जिससे वे अपना स्वास्थ्य अच्छा रख सकें और शुद्ध व आरोग्यप्रद पानी की जानकारी द्वारा वे पानी के प्रदूषण को बचाने और उसे नियत्रण मे रखने को सदा ही तयार रहें।

2 शिक्षा द्वारा हर व्यक्ति को पानी के भौतिक गुणो की जानकारी दी जाये, जिससे वह पानी पीने से पहले उसका स्वास्थ्य की दृष्टि से अच्छे होने की पहचान कर सके। उसे पानी के रग, गध, स्वाद, कार्बनिक पदाथ, मान और गदलापन आदि के बारे मे जानकारी होने से वह पानी का भौतिक परीक्षण तुरत कर सकेगा। इस परीक्षण मे प्रयोगशाला के सामान की ज्यादा जरूरत नहीं रहती है और इसे किसी भी जगह जहा चाहे तुरत किया जा सकता है। इस परीक्षण द्वारा व्यक्ति को प्रदूषण की किस्म के बारे मे तुरत पता लग जाता है और वह आसानी से सोच सकता है कि यह पानी पीने या फिर किसी और जरूरत की पूर्ति के लिए काम मे लिया जा सकता है अथवा नही।

3 घरों और कारखानो से निकली गदगी के ठीक से निस्तारण का ज्ञान होना चाहिए।

पानी में पाई जाने वाली ज्यादातर अशुद्धियो को हटाने के लिए पानी को इकट्ठा करके रखना, उसे साफ करना और स्टरलाइजेसन आदि के तरीके अपनाये जाते हैं। तेल, रग और लवण से प्रदूषित हुए कारखानो के गदे पानी का सही ढग से उपचार करने के पश्चात् ही उसे कारखाने से बाहर छोड़ना चाहिये ताकि इसके द्वारा धरातलीय और भूमिगत पानी दूषित नही हो।

4 कुए पर चबूतरा और उसके पास की नालिया ठीक ढग से बनावें। पक्षियो को जाली लगा कर कुए मे जाने से रोकें और यह भी ध्यान रहे कि उस पानी मे पेड की पत्तिया आदि न गिरने पाए।

5 किसी भी जलस्रोत मे से पानी निकालते वक्त साफ बाल्टी और रस्सी आदि का उपयोग करें।

6 जानवरो को पानी के स्रोतो मे नही जाने दें, उनके पानी पीने के लिए कुडी आदि की व्यवस्था करें।

7 नदी और तालाब मे कपडे धोने पर तुरन्त रोक लगाए।

8 जमीन पर गदा पानी ले जाने के लिए पक्की नालिया बनवाएँ जिससे पानी का रिसाव रोका जा सके।

9 सीवर-लाइन के पाइप से गदे पानी का रिसाव नही होना चाहिए अगर ऐसा होता हो तो उसे तुरन्त रोकें।

10 शवो को पानी के स्रोतो मे या उसके आस पास नहीं डालने देवें।

11 बाढ के समय नदी, तालाब और कुओ का पानी उपचार के बाद ही पीने के काम मे लें। इसके लिए पानी को उबालकर, क्लोरीन द्वारा या पोटेशियम परमैंगनेट आदि किसी एक विधि को अपनाकर, पानी साफ करके पीने के काम मे लें।

12 जब भी पीने के पानी का घरेलू या कारखाने के दूषित पानी से सदूषण हो जाये तो वह स्थिति कानून की मदद से नियत्रण मे लाई जा सकती है। यह कानून पानी के प्रदूषण को नियत्रण मे लाने के लिए ही बनाया गया है (पानी कानून 1974, पानी के प्रदूषण से बचाव और नियत्रण के लिए)।

प्रदूषित पानी के भौतिक, रासायनिक, जविक, सूक्ष्मदर्शी और उसके स्रोतो के आस पास के भौगोलिक परीक्षण और सही उपचार द्वारा मनुष्यो और जानवरो मे पानी के द्वारा फलने वाली बीमारियो का सही ढग से बचाव और नियत्रण किया जा सकता है।

प्राकृतिक पानी मे पाई जाने वाली सामान्य अशुद्धियां

प्राकृतिक पानी कभी भी शुद्ध और आरोग्यप्रद अवस्था मे नही पाया जाता। आसुत पानी 100 प्रतिशत शुद्ध होता है लेकिन यह पीने के लिये ठीक नही होता और काफी महगा होता है। एक अच्छे पीने के पानी मे नुकसानदेह पदार्थ नही होते और यदि इसमे कुछ पदार्थ ऐसे हो तो वे पीने के लिये बताई गयी निश्चित सीमा मे ही होने चाहिये। इसका पता पानी के भौतिक, रासायनिक, सूक्ष्मदर्शी और जैविक परीक्षण द्वारा आसानी से किया जा सकता है और पानी को वितरण

से पहले ही उसमे स नुक्सान देने वाले पदार्थों को उचित विधियां द्वारा हटा दिया जाता है।

पानी मे कार्बनिक या अकार्बनिक पदार्थ, चाहे वे घुली अवस्था मे हो या छोटे छोटे कणो के रूप मे दिखाई देते हो, अशुद्धिया कहलाती हैं। यह जरूरी नहीं है कि पाई जाने वाली सभी अशुद्धिया मनुष्यो और जानवरो के लिये हानिकारक ही हों। कणो के रूप में दिखाई देने वाली अशुद्धिया पानी को कुछ समय तक संग्रह करके रखने से बर्तन के पैंदे मे बैठ जाती हैं या ऐसी अशुद्धियों को छानने की विधि द्वारा भी पानी से हटाया जा सकता है। सामान्यतया निम्न प्रकार की अशुद्धिया पानी मे पाई जाती हैं—

1 अकार्बनिक अशुद्धियां

(ए) घुली हुई अकार्बनिक अशुद्धिया

(बी) तैरती रहने वाली (Suspended) अकार्बनिक अशुद्धिया

(ए) घुली हुई अकार्बनिक अशुद्धियां

प्राकृतिक पानी जब भूमिगत चट्टानो मे से गुजरता है तो अपने साथ इससे खनिज लवण घोल लेता है। इसकी पाई जाने वाली मात्रा चट्टान की किस्म (जिससे पानी गुजरता है) पर निर्भर करती है और ये निम्न है

(i) कार्बन डाइआक्साइड की उपस्थिति मे कार्बोनेटस आफ लाइम पानी मे अस्थाई कठोरता पैदा करते हैं। इसे पानी को उबाल कर हटाया जा सकता है। पानी के उबालने पर कार्बन डाइआक्साइड निकल जाती है और कार्बोनेटस आफ लाइम बर्तन के पैंदे मे बैठ जाते हैं।

(ii) कैल्शियम तथा मैग्नीशियम के सल्फेट, क्लोराइड और नाइट्रेटस की उपस्थिति के कारण पानी मे स्थाई कठोरता उत्पन्न करते हैं। इसे दूर करने के लिये पानी मे चूना और धोने वाला सोडा डाला जाता है। ऐसा पानी भोजन पकाने, बाइलर, दवाई के घोल और भेड को रासायनिक घाल से स्नान कराने के लिये उपयुक्त नही है। ऐसे पानी का उपयोग करने से साबुन का काफी नुक्सान होता है। अधिक कठोर पानी पीने पर दस्त व पेट की बीमारी की शिकायत रहती है।

(iii) पानी म अत्यधिक लवण की मात्रा उसमें नालियो के पानी से सदूषण का होना बताती है। गहरे कुओ और समुद्र के पानी मे भी लवण की अत्यधिक मात्रा होती है।

(iv) जिस पानी म खनिज पदार्थों की मात्रा एम पी एल से ज्यादा हो उसे घरेलू उपयोग मे नही लाना चाहिये। ये पदार्थ सीसा, आर्सेनिक, साइनाइड, ताबा मग्नीज, जस्ता रांगा, एल्यूमिनियम, पारा, आयोडीन, एन्टीमनी और फ्लोरीन हैं।

(बी) तैरती रहने वाली अकाबनिक अशुद्धियां

इस प्रकार की अशुद्धिया मिट्टी, चाक और लोहे के आक्साइड इत्यादि मे होती हैं। इनसे शरीर को हानि नही होती परन्तु कुछ तत्व शरीर की पाचन शक्ति को बिगाडते हैं। उन्हे छानने की विधि द्वारा पानी से हटाया जा सकता है।

2 काबनिक अशुद्धिया

(ए) घुला हुई काबनिक अशुद्धिया

(बी) पानी मे तैरती रहने वाली काबनिक अशुद्धिया

(ए) घुली हुई काबनिक अशुद्धिया

ये अशुद्धिया पानी मे शवो, सड रही खरपतवार या सीधे गटटर के पानी द्वारा पीने के पानी मे मिल जाने से हो जाती हैं। इनमे मुख्यतया क्लोराइड, अमोनिया, नाइट्रेट, नाइट्राइट, ह्यूमिक अम्ल और गट्टर का पानी सम्मिलित है। भूमि मे पडे हुए काबनिक पदार्थों का विघटन होता रहता है और जब पानी इस तरह की भूमि से गुजरता है तब यह वहा पाये जाने वाले काबनिक पदार्थों द्वारा सदूषित हो जाता है। ये पदाथ पेडो से या पानी मे रह रहे जीवो के भी हो सकते हैं। पानी मे नाइट्रोजिनस पदाथ की जरा सी मात्रा प्राकृतिक विघटन की क्रिया के बाद पाई जा सकती है मगर इसका ज्यादा मात्रा मे पाया जाना गट्टर के पानी द्वारा सदूषण होने को बताता है।

(बी) पानी मे तैरती रहने वाली काबनिक अशुद्धिया

इस तरह की अशुद्धिया काफी हानिकारक होती हैं और पानी के प्रदूषित होने का द्योतक होती हैं। ये अशुद्धियां जैसे कि बाल, ऊन, स्टाच, लकडी के टुकडे, पशुओ की मास पेशिया और पौधो के तन्तु आदि हैं और इनकी उपस्थिति हमेशा विकार पैदा करने वाले जीवाणुओ के साथ रहती है। ऐसे जीवाणुओ का पानी मे रहने के कारण इस प्रकार का प्रदूषण काफी हानिकारक माना गया है।

3 घुली हुई गैसें

पानी मे अक्सर आक्सीजन, काबन डाइआक्साइड, हाइड्रोजन सल्फाइड, हाइड्राजन, अमोनिया, नाइट्रोजन और मीथेन आदि गसें घुली हुई रहती हैं। हाइड्रोजन सल्फाइड की उपस्थिति के कारण पानी का स्वाद सडे हुए अण्डे जैसा लगता है। यह गस विषली होती है और धातुओ को पानी मे घोल सकती है।

4 पानी मे स्थिर रहने वाली हल्की अशुद्धियां (Colloidal)

इस तरह की अशुद्धिया पानी को टरबिड बनाती हैं, और पानी मे धुधलापन दिखता रहता है, ये पदाथ जसे लाहे के आक्साइड, सिल्लीका और रग आदि हैं।

5 जीव विद्या सम्बन्धी अशुद्धिया

गहरे कुओ के पानी के अलावा सभी प्राकृतिक स्रोतो के पानी मे वनस्पति

और जीव रहते हैं, जसे जीवाणु, शवाल, फफूदी, प्रोटोजोआ, ब्रसटेशियन, कीडे मकोडे, मछलिया और जल तथा थल मे रहने वाले प्राणी आदि।

(ए) जीवाणु

जीवाणु बहुत हानिकारक होते हैं और सूक्ष्म होने के कारण इन्हे आंखों की सहायता से नही देखा जा सकता है, इनकी किस्मे निम्न हैं

(1) भूमि के जीवाणु

भूमि मे रहने वाले जीवाणु पानी में पाये जाने वाले कार्बनिक पदार्थों को तोड कर कार्बन, हाइड्रोजन और नाइट्रोजन जसे तत्वो मे बदल देते हैं। नाइट्रोजोमोनस जीवाणु अमोनिया तत्वो को नाइट्राइट म परिवर्तित करते हैं। नाइट्रोबेक्टर आक्सीडेसन की क्रिया द्वारा नाइट्राइट को नाइट्रेट मे बदलते हैं लेकिन ये जीवाणु इस क्रिया को आद्रता, तापक्रम और आक्सीजन के होने पर ही पूण कर सकते हैं। अगर इस तरह का वातावरण न मिले तो ये जीवाणु अमोनिया के तत्वों को नाइट्राइट और नाइट्रेट म बदल ही नहीं सकते हैं। जीवाणुओ द्वारा आक्सीडेसन क्रिया नही हो सकने के कारण कार्बनिक पदाथ ह्यूमिक अम्ल बनाते हैं और इससे भूमि मे अम्ल की मात्रा बढती है।

(11) लोहे की धातु पर रहने वाले जीवाणु

क्रिनोथ्रीक्स, लोह जीवाणु हैं जो पानी मे पाये जाने वाले लोहे को हटाते हैं। ये जीवाणु लोह का फेरिक हाइड्रोआक्साइड के रूप म जमा करते हैं जो एक लसलसे पदाथ के रूप मे दिखाई देता है। पानी म लोहे पर रहने वाला दूसरा जीवाणु गेलिओनेला है, जो पानी से लोहा हटाता है और इससे पानी के वितरण के लिये लगाये गये नलो में जग लगना, नल में जग के गोल उभार आना और जग की परतें बनना आम बात हो जाती है। बाद मे नलो का भीतरी भाग छोटा हो जाता है अथवा पूणतया बद हो सकता है। इनके कारण नल कमजोर हो जात हैं और पानी का दबाव बढने से वे क्षतिग्रस्त हो सकते हैं। इन कारणो से जलदाय विभाग को और पानी के आम उपभोक्ता को काफी नुकसान उठाना पडता है। इन जीवाणुओ की पानी मे वृद्धि रोकने के लिये पानी को क्लोरीन से उपचारित किया जाता है।

(बी) शैवाल

पानी मे ज्यादातर तीन किस्म की शवाल पाई जाती है, वे हैं ग्रीन, ब्ल्यू ग्रीन और डायएटम्स। ये अक्सर नाले, पोखर और तालाब के पानी मे पाई जाती हैं। ये सूय की रोशनी म वृद्धि करती है तथा आकार म छोटी बडी भी होती हैं जो सिफ सूक्ष्मदर्शी की सहायता से ही दिखाई देती हैं। इनसे पानी साफ होने मे बहुत मदद मिलती है, किन्तु जब इनकी बढोतरी बहुत ज्यादा हो जाती है तब फिल्टर प्लान्ट ठीक स काम नही दे पाते। ये पानी में रह कर उसमे दुगन्ध पदा करते हैं और पानी

का स्वाद भी बदल जाता है। इनकी बढोतरी रोकने के लिये पानी मे 2 से 10 पौंड प्रति दस लाख गलन के हिसाब से कापर सल्फेट मिलाते हैं। पानी का स्वाद ठीक करने के वास्ते उसमे 0 5 पी पी एम के हिसाब से पोटेशियम परमैंगनेट डालते हैं या फिर एक्टीवेटेड चारकोल, 1 से 5 पी पी एम के हिसाब से मिलाते हैं।

(सी) फफूंदी

गट्टर के पानी मे रहने वाली फफूद सेप्रोफाइटिक होती है। यह भूरे या मले पीले रग की होती है। यह बहते पानी के तल और किनारो पर जैली जैसी दिखाई देती है। इसका पानी मे दिखना, गट्र के पानी द्वारा सदूषित होने की सूचना देता है।

(डी) पानी मे रहने वाले जीव

प्रोटोजोआ, मोलस्का और स्पोज पानी मे रहने वाले प्राणी हैं और ये ज्यादा-तर फिल्टर हाऊस के प्लाट मे देखे जाते है। ये पानी मे किसी तरह की खराबी पैदा नही करते। पानी मे रहने वाली मछलिया इन पर और पानी की वनस्पति पर जीवित रहती हैं इसलिए इनकी सख्या पानी मे सीमित ही रहती है।

धातुओ पर पानी की क्रिया

शुद्ध पानी द्वारा धातुओ को घोलने की बहुत कम या बिल्कुल ही क्रिया नही होती, परन्तु प्राकृतिक पानी मे कुछ पदाथ ऐसे घुले हुए होते हैं, जिनसे यह क्रिया होती रहती है। पानी मे ये पदाथ निम्न प्रकार के होते हैं —

1 जो पदाथ अम्लीय प्रकृति के हो, जसे कावन डाइआक्साइड, ह्यूमिक अम्ल, सल्फर डाइआक्साइड से सल्फूरिक अम्ल और नाइट्रोजन आक्साइड से नाइट्रिक एसिड जो कि तेल शोधक और कोयला काम मे लेने वाले कारखान स निकलते हैं। अम्लीय पानी की वर्षा भारत के लिये एक समस्या पदा कर रही है। यह समस्या अब सिफ धनी देशो की ही नही है। भारत मे इस पर शोध करने पर कुछ नगरो मे (दिल्ली 6 21, मद्रास 5 85, हैदराबाद 5 73, बेलापुर 5 20, बम्बई मे ट्राम्बे 4 85) वर्षा का पानी अम्लीय अवस्था मे पाया गया, जबकि साधारणतया वर्षा के पानी का पी एच 7 होना चाहिए।

अम्लीय पानी सभी धातुओं को घोल लेता है किंतु विशेषत इसका असर सीसा, लोहा और जस्ते जसी धातुओ पर होता है और ताबा एव ब्राज धातुओ पर अपेक्षाकृत कम रहता है।

2 जो पदाथ क्षारीय प्रकृति के हो, जसे सोडियम कार्बोनेट और वस्त्र उद्योग से निकलने वाला पानी। जब वस्त्र उद्योग का पानी बिना उपचार के बहा दिया जाता है, तो यह धरातलीय और भूमिगत दोनो ही प्रकार के पानी के स्रोतो का प्रदूषण करता है। प्राय भूमिगत पानी बिना उपचारित किये ही वितरित किया जाता है,

लक्षण जस्ते की विपाक्तता के कारण पशुओ मे पेट दद, उल्टी और हल्की हरे रग की दस्त लगना जसे लक्षण देखने को मिलते हैं। पशु पेट अ दर की तरफ कर लेते हैं और उनकी कमर उठी हुई रहती है। गायो मे इमेसियेसन और हीमोग्लोबिन मूत्र के साथ आना आदि लक्षण देखे जा सकते हैं। जस्ते की कुछ मात्रा के कारण मनुष्य मे दुष्पचन, कब्ज और कभी-कभी अतिसार रोग हो जाता है।

पानी की कठोरता, इसका महत्त्व और मृदु करना

अकाबनिक पदार्थों की विभि न मात्रा पानी मे घुली हुई हो सकती है। पानी कितना कठोर या मृदु है यह इन घुले हुए पदार्थों की मात्रा पर निभर करता है। पानी की कठोरता उसके साबुन विनाश करने की शक्ति को कहा जाता है। पानी म कठोरता उसमे पाये जाने वाले कल्शियम और मग्नीशियम के बाइकार्बोनेट्स के कारण होती है। अस्थाई कठोरता पानी मे बाइकार्बोनेट्स के कारण उत्प न होती है और इसे दूर करने के लिये पानी को उबाला जाता है। बाईकार्बोनेट प्राकृतिक पानी मे खास तौर से पाये जाते हैं और ये पानी मे काबन डाइआक्साइड की कल्शियम और मैग्नीशियम कार्बोनेट्स से क्रिया करने से बनते हैं। जब पानी को उबाला जाता है तब कार्बन डाइआक्साइड तो निकल जाती है और पीछे पानी मे सिफ कल्शियम और मग्नीशियम कार्बोनेटस अवशिष्ट अवस्था मे रह जाते हैं। पानी म स्थायी कठोरता उसमे कल्शियम और मग्नीशियम के सल्फेटस और क्लोराइड्स के रहने से होती है और ऐसे पानी को उबालने से कठोरता मे कोई अ तर नही आता है। पानी मे लोहा, मैग्नीज और एल्यूमीनियम जसे पदाथ भी कुछ ह तक कठोरता बढाते हैं और ऐसा पानी भी जब उबाला जाये तो पानी की कठोरता पर कुछ असर नही होता है। वर्षा का पानी जब वायुमण्डल से गुजरता है तब अपने साथ हवा म रहने वाली काबन डाइआक्साइड घोल लेता है और जब यह पानी जमीन पर बहता है तब भी सडन वाली पत्तियो से कावन डाइआक्साइड लेता है। इस तरह पानी और काबन डाइआक्साइड के मिलने से कार्बोनिक अम्ल बनता है।

$$H_2O + CO_2 = H_2CO_3 \quad \text{(कार्बोनिक अम्ल)}$$

यह कार्बोनिक अम्ल युक्त पानी जब चूने (चूने का पत्थर, CaCO3, चूना *CaO*, जिप्सम *$CaSO_4$*) *या मैग्नीसिया के समीप आता है तो पानी मे अस्थायी* कठोरता उत्प न हो जाती है।

$$H_2CO_3 + CaCO_3 = Ca(HCO_3)_2$$
$$2H_2CO_3 + CaO = Ca(HCO_3)_2 + H_2O$$
$$H_2CO_3 + MgCO_3 = Mg(HCO_3)_2$$

मैट्रिक प्रणाली मे कठोरता को मिलि इक्यूवलेन्ट प्रति लीटर (mEq/L) आफ कल्शियम म व्यक्त किया जाता है। एक लीटर पानी म एक mEq/L क ठोरता

किंतु अपनी क्षारीय प्रकृति के कारण इस के प्रवाह मे काम आने वाले नल क्षतिग्रस्त हो जाते हैं और इसका मनुष्यो, पशुओ, खेत की भूमि और फसल आदि पर बहुत बुरा प्रभाव पडता है।

3 घुले हुए लवण, विशेषत सोडियम, कल्शियम और मग्नीशियम के नाइट्रेट और क्लोराइड पानी मे पाये जा सकते हैं। यह पानी भी क्षारीय प्रकृति का होने के कारण नलो को क्षति पहुचाता है और इसे पीने पर मनुष्यो और पशुओ के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पडता है।

सीसा

शरीर के लिये सीसा एक सचयी विष होता है। जो पानी सीसा धातु के साथ रहने पर उसे घोल सके उसे प्लबोसोल्वेन्ट (Plumbosolvent) पानी कहा जाता है। यदि प्लम्बोसोल्वेन्ट पानी लगातार पीया जाये, तो उससे पानी पाने वाला सीसा विषाक्तता से पीडित हो जाता है और उसे प्लमबिज्म कहते हैं। सीसा के विषलेपन का प्रभाव मनुष्यो और समस्त पशु जाति पर होता है, परन्तु ऐसा देखा गया है कि इसका प्रभाव गाय और भेड म ज्यादा होता है। सीसा विषाक्तता के और भी कई कारण हैं जसे पानी का सदूषण जब रेड आक्साइड आफ लेड, लेड एसीटेट, सफेद लेड, लेड आरसीनेट, लेड से बने रग, कीटनाशक रसायन जिनमे लेड हो, मोटर गाडी की बटरी, लेड के कारतूस, रग के खाली डिब्बे, काम मे लिया हुआ मोबिल आइल और ग्रीस आदि से होता है। सीसा सचयी धातु होता है, इसलिये सीसे की थोडी थोडी मात्रा वाले पानी को यदि लगातार पीया जाये तो कुछ समय पश्चात् शरीर में इसके विषले प्रभाव के लक्षण दिखाई देने लगेंगे। घरेलू उपयोग के लिये इसका एम पी एल 0 01 है। जिस पानी का पी एच 6 8 से 4 5 होता है वह नलो के साथ क्रिया करता रहता है और ऐसे पानी मे सीसे की कुछ मात्रा घुल जाती है। जब कही पर नया नल लगाया जाता है तो ऐसे म कठोर और मृदु दोनो ही तरह का पानी इस पर क्रिया करता है।

जस्ता

अम्लीय, सोडियम, कार्बोनेट का क्षारीय पानी और क्लोराइड व नाइट्रेट की अधिक मात्रा वाले पानी म जस्ता आसानी स घुल जाता है। जलदाय विभाग द्वारा लोहे के नलो म जस्ते की कलई किया हुआ नल बहुत काम म लिया जाता है। यह जस्ता पानी की प्रकृति क कारण नल से कुछ समय बाद हट जाता है और लोहा ही पानी के सम्पर्क मे रहने लगता है। इसलिये जस्ते की विषाक्तता का काफी खतरा रहता है। अम्लीय पानी, जो जस्ता को घोल सकता है, पाक स उपचारित करना चाहिये। जस्ते के दूसरे मिश्रण जो पानी को विषला करत हैं वे जिक एसीटेट और जिक कार्बोनेट आदि हैं।

लाने वाले आयन करीब 50 मि ग्राम कल्शियम कार्बोनेट के बराबर होते हैं। कठोरता के विभिन्न स्तर इस प्रकार हैं—

श्रेणी	कठोरता की डिग्री (mEq/Litre)	
मृदु पानी	1 से कम	(50 मि ग्राम/लीटर)
थोडा कठोर	1 से 3	(50–150 मि ग्राम/लीटर)
कठोर पानी	3 से 6	(150–300 मि ग्राम/लीटर)
बहुत कठोर पानी	6 से ज्यादा	(300 से ज्यादा मि ग्राम/लीटर)

प्रयोगशाला में परीक्षण द्वारा पानी की कठोर अवस्था का पता लगाया जाता है। थोडी कठोरता की स्थिति वाला पानी पीने के लिये बहुत रुचिकर होता है। अगर पानी की कठोरता 3 mEq/ लीटर से ज्यादा हो तो उसे मृदु करने के योग्य माना जाता है।

कठोर और मदु पानी के महत्त्व

नहुत कठोर और बहुत मृदु पानी शरीर के लिये नुकसानदेय होता है और वह पानी के वितरण के काम मे आने वाले सीसे के नलो से और धातुओं के बर्तन से धातुओ को पानी मे घोलता है। मदु पानी पीने से बच्चो मे कैल्शियम की कमी रहती है और बडे होने पर वे डेन्टल कैरीज नामक बीमारी मे ग्रसित हो जाते हैं। मदु पानी का उपयोग बागवानी कपडा उद्योग, रगाई और कपडे धोने के काम के लिये ठीक रहता है।

जब कठोर पानी को गम किया जाता है तब उसमे से कार्बन डाइआक्साइड निकल जाती है और पानी मे अघुलित कल्शियम और मैग्नेशियम के कार्बोनेट रह जाते हैं जो कि पानी के ठडे होने पर बतन के पैदे पर इक्टठे हो जाते हैं। ये बतनो के और बायलरो के पैदे मे एक परत बना देते हैं। कठोर पानी के कारण इधन पर काफी खर्चा बैठता है और ऐसे पानी के उपयोग से बायलर फटने का भी डर रहता है। कठोर पानी के कारण साबुन का खच भी बढ जाता है। इसके कारण भोजन को पकाने मे ज्यादा खर्चा आता है और भोजन दिखने मे और रग मे उतना अच्छा नही होता है जितना कि मदु पानी मे पकाने पर होता है। कारखानो को भी ऐसे पानी के कारण काफी हानि उठानी पडती है। इसके कारण नल जल्दी ही खराब हो जाते हैं। जो कपडे स्थायी कठोरता वाले पानी से धोये जाते हैं वे जल्दी ही खराब हो जाते हैं। कठोर पानी जीवाणुओं को मारने के लिये तयार किये रासायनिक घोल के लिये और भेड पर से परजीवी हटाने के लिये रसायन घोल के स्नान के लिये भी उपयुक्त नही रहता है। कठोर पानी पीने मे गलगण्ठ, वृक्क–पथरी पाचन क्रिया का खराब

होना, जठर विकार और घोडो मे सूखी व कठोर चमडी जैसे विकार पदा हो जाते हैं। कृत्रिम अवयवो के द्वारा बनाये गये साबुन पर कठोर पानी का असर नही होता।

कठोर पानी का उपचार

1 अस्थायी कठोरता हटाना

(i) उबालकर

(ii) चूने के द्वारा उपचार (ए) क्लाक्स विधि (Clark's Process)

(बी) पोटर क्लाक्स विधि (Porter Clark's Process)

(सी) ह्युस्टन की ज्यादा चूने वाली विधि (Housten's Excess Lime Process)

2 स्थायी कठोरता हटाना

(i) चूने और सोडे की विधि (Lime & Soda Process)

(ii) जियोलाइट या परम्यूटिट या क्षार विनिमय विधि (Zeolite or Permutit or Base exchange Process)

1 अस्थायी कठोरता हटाना

(i) उबालकर

पानी को उबालकर उसकी अस्थायी कठोरता हटाई जा सकती है। इसमे से कार्बन डाइआक्साइड निकल जाती है और पानी मे घुले बाइकार्बोनेट अघुलित कार्बोनेट मे परिवर्तित हो जाते हैं। ये कुछ समय बाद बतन के पैंदे मे इकट्ठे हो जाते हैं। यह विधि काफी खर्चीली होने के कारण पानी की ज्यादा मात्रा को मृदु करने के लिए अनुपयोगी है।

$Ca(HCO_3)_2$ + तापक्रम $= CaCO_3 + H_2O + CO_2$

(ii) चूने के द्वारा उपचार

(ए) क्लाक्स विधि
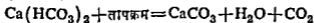
पानी की अस्थाई कठोरता हटाने के लिए बिना बुझाया चूना या बुझा हुआ चूना लेते हैं। चूना पानी मे होने वाली कार्बन डाइआक्साइड सोख लेता है और कैल्शियम कार्बोनेट को अघुलित अवस्था मे ले आता है। यह पानी मे से मैग्नीशियम भी हटाता है। करीब 700 गलन पानी से एक डिग्री कठोरता हटाने के लिये एक औंस बिना बुझा हुआ चूने का उपयोग किया जाता है।

$$Ca(OH)_2 + Ca(HCO_3)_2 = 2\,CaCO_3 + 2H_2O$$
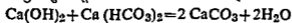
चूने को पानी मे छोडकर जोर से हिलाते हुए मिलाया जाता है। फिर इसे दूसरी टकी मे लेकर पानी को 12 घटे के लिये रहने दिया जाता है। पानी को बिना

हिलाये नियारकर एक दूसरी टकी मे निकाल कर मिट्टी के बने फिल्टर से छाना जाता है।

(बी) पोटर क्लाक्स विधि

यह विधि भी ऊपर लिखी गयी विधि के समान ही है परन्तु फिल्टरेशन के लिए पानी को दबाव वाली फिल्टर द्वारा छाना जाता है जिसमे कि पानी एक लिनन के कपड़े के द्वारा छाना जाता है।

(सी) ह्यूस्टन की ज्यादा चूने वाली विधि

इस विधि मे ऊपर दी गयी चूने की मात्रा से पाँच गुना ज्यादा चूना पानी में डाला जाता है। इसे 12 घटे तक रखने के बाद इसमे जो ज्यादा चूना रह जाता है, उसे पानी मे कार्बन डाइआक्साइड गस को गुजार कर हटाया जाता है। इस विधि के दो फायदे हैं, एक तो पानी की कठोरता हट जाती है और दूसरा यह कि पानी साथ ही साथ स्टरलाइज भी हो जाता है।

2 स्थायी कठोरता हटाना

(i) चूने और सोडे की विधि

कठोर पानी मे चूना और सोडा एक साथ या एक के बाद दूसरा मिलाया जाता है। इसस कलिशयम कार्बोनेट के अवशेष बनते हैं जो पानी की टकी के पैंदे में बठ जात हैं। यह क्रिया 2 से 4 घटे तक होन देते हैं। फिर पानी निथारकर एक दूसरी टकी मे लेत हैं और उसमे सोडियम कार्बोनेट मिलाते हैं। इस प्रकार रासायनिक क्रिया द्वारा पानी म सोडियम या मैग्नीशियम कार्बोनेट और सोडियम या मैग्नीशियम सल्फेट के अवशेष बनते हैं जो टकी के पैंद मे बैठ जाते हैं। अब पानी को निथारकर अगली टकी मे लेते हैं और इसमे 10 हजार गैलन पानी के लिये 5 पाउण्ड कार्बन डाइआक्साइड को 20 मिनट तक मिलाकर रखे रहते हैं। इससे कलिशयम कार्बोनेट क्रिया करके घुलनशील बाइकार्बोनेट बनाता है। इस विधि मे कलिशयम कार्बोनेट की ज्यादा मात्रा को कार्बन डाइआक्साइड की सहायता से हटाया जाता है। अन्यथा यह मिट्टी के फिल्टर पर जमा होकर पानी के छनने मे रुकावट पैदा कर सकता है। कार्बन डाइआक्साइड गस को उपयोग मे लेने से पानी मे कठोरता की कुछ मात्रा फिर से बढ जाती है लेकिन इस विधि म यह कठोरता 30 पी पी एम स ज्यादा नहीं बढ पाती है। सोडा विधि द्वारा लौह युक्त पानी से लोहा भी हटता है। जिस पानी मे क्लोरीन की मात्रा अधिक हो तो इस विधि को अपनाकर पानी से क्लोरीन की मात्रा काफी हद तक कम की जा सकती है।

(ii) जियोलाइट या परम्यूटिट या क्षार विनियम विधि

पानी में स्थायी कठोरता हटाने के लिये बहुत बडे पमाने पर पानी का मृदुकरण करने के लिए इस विधि को काम मे लिया जाता है। यह विधि पानी मे प्राकृतिक

रूप से पाये जाने वाले कुछ खनिज पदार्थों के आयन विनिमय गुणो पर आधारित है। पानी को मृदु करने के काम मे लिये जाने वाले सामान्य जियोलाइट को परम्यूटिट कहते हैं। यह कृत्रिम ढग से बनाया गया सोडियम जियोलाइट ($NaAlSiO_4$) है। यह कोस मिट्टी जैसा दिखता है जिसमे छोटे किन्तु सख्त तारे जैसे चमकीले दाने दिखाई देते हैं। यह नमी सोखता है, इसलिये इसे सूखी जगह पर बन्द डिब्बे मे रखना चाहिये। यह अविलेय और अविनाशी यौगिक है जो पानी से, कल्शियम और मैग्नीशियम आयनो को हटाता है। यह इस तरह सोडियम जियोलाइट बन जाता है। इस विधि द्वारा पानी से स्थायी कठोरता पूणतया हट जाती है। इस तरह का पानी धातुओ को घोल सकता है, इसलिये इसमे कुछ मात्रा मे रा (Raw) पानी फिर से मिलाया जाता है। जियोलाइट से सारा सोडियम हटने के पश्चात् और कल्शियम जियोलाइट बनने पर पानी को मृदु बनाने की क्रिया रुक जाती है। जियोलाइट को फिर से रीजनरेट (Regenerate) करने के लिये इसे ब्राइन (नमक के पानी का गाढा घोल) के साथ मिलाया जाता है, जिसके कारण कल्शियम या मैग्नीशियम जियोलाइट फिर से सोडियम जियोलाइट मे बदल जाता है।

$$Ca(HCO_3)_2 + Na_2Z = CaZ + 2\,NaHCO_3$$
$$CaZ + 2\,NaCl = Na_2Z + CaCl_2$$
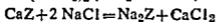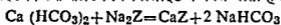
ये दोनों क्रियाएँ एक के बाद दूसरी, क्रम से लम्बी अवधि तक दोहराई जा सकती हैं और इसकी 200 बार इस तरह की क्रियाए दोहराने पर सिर्फ एक प्रतिशत जियोलाइट की ही हानि होती है। पानी से कठोरता हटाने की यह विधि जलदाय विभाग और कारखानो द्वारा बिल्कुल आसानी से उपयोग म ली जा सकती है।

पानी को साफ करना

पीने के पानी को साफ करने का महत्व भारत म बहुत पुराने जमाने से ही स्वीकारा गया है। पूरे भारत मे पानी को कपडे स या फिर मोटी टाट द्वारा छानकर पीने के काम मे लिया जाता है। कुछ गावो म पानी को मिट्टी द्वारा और कंकड की सहायता से भी छाना जाता है। लेकिन इन विधियो द्वारा पानी मे होने वाल केवल बडे कण या कचरो को ही हटाया जा सकता है। पिछले कुछ वर्षों म पानी को साफ करने की बहुत उन्नत विधिया तयार हुई हैं और इस कारण पानी द्वारा फलन वाली बीमारिया काफी नियन्त्रण मे आ गयी हैं।

पानी को इसलिये साफ किया जाता है ताकि यह पीने योग्य हो जाये और पीन पर किसी प्रकार का रोग उत्पन्न न करे (शुद्ध और आरोग्य)। इस तरह या पानी हजारो या लाखो मनुष्यो और पशुओ की जान बचाता है।

निम्नांकित उद्देश्यो के लिय पानी को साफ किया जाता है—

1 पानी से अनुचित रग और गध हटाना।

2 कार्बनिक और अकार्बनिक पदार्थों की मात्रा निश्चित की गयी सीमा मे लाना।

3 हानिकारक सूक्ष्मजीवाणुओं का पानी से हटाना तथा उन्हें समाप्त करना।

4 पानी से कठोरता हटाना और उसमे वायु प्रवाहित करना।

5 पानी को धातुओ के घोलने की प्रवृत्ति स मुक्त कराना।

पानी को साफ करन के तरीके—

1 छोटे पैमाने पर पानी साफ करना (Small Scale Purification)

(ए) सग्रह (Storage)

(बी) उबालना (Boiling)

(सी) डिसटिलेशन (Distillation)

(डी) सूय की किरणें (Sun rays)

(ई) घरेलू फिल्टर (Domestic Filters)

(i) कम दाब वाला फिल्टर (Low Pressure Filter)

(ii) ज्यादा दाब वाला फिल्टर (High Pressure Filter)

(एफ) रसायन (Chemical)

(i) फिटकरी (Alum)

(ii) पोटेशियम परमैंगनेट (Potassium Permanganate)

(iii) ब्लीचिंग पाउडर या क्लोरीन (Bleaching Powder or *Chlorine*)

(iv) ऐसिड सोडियम सल्फेट (Acid Sodium Sulphate)

(v) कापर सल्फेट (Copper Sulphate)

(vi) आइओडिन (Iodine) और

(vii) चूना (Lime)

2 बडे पैमाने पर पानी साफ करना (Large Scale Purification)

पानी का बडे पैमाने पर साफ करने के लिये इन तीन विधियो का उपयोग किया जाता है —

(ए) सग्रह (Storage)

(बी) पानी को सीधे ही फिल्टर करना या इसके लिये अवक्षेपक पदार्थों की सहायता लेना (Filtration with or without the aid of Coagulation)

(i) मद गति वाले रेत के फिल्टर (Slow Sand Filter) और

(ii) तीव्र गति वाले रेत के फिल्टर (Rapid Sand Filter)

(सी) रसायन द्वारा स्टरलाइजेसन (Chemical Sterilization)

(i) क्लोरीनेसन (Chlorination)

(ii) सुपरक्लोरीनेसन (Super Chlorination)

(iii) क्लोरामीन (Chlormine) और

(iv) ओजोनीकरण (Ozonisation)

1 छोटे पैमाने पर पानी साफ करना

इसमे एक ही विधि या उससे अधिक विधियो के उपयोग से पानी को साफ किया जा सकता है। यहा दिए गये तरीके को सिर्फ थोडे समय के लिये उपयोग मे लाया जाता है, खासकर जब कि शहर के फिल्टर प्लान्ट थोडे दिनो के लिये खराब हो जाये या फिर बाढ आ जाने के कारण नदी, झरने, कुए, तालाब या पोखर आदि के पानी का सदूषण हो गया हो। ऐसी हालत मे पानी अक्सर टरबिड हो जाता है। ज्यादातर गाँवो मे फिल्टर प्लान्ट नही होते हैं और ऐसी जगहो पर जब पानी द्वारा बीमारियाँ फल रही हो तब यहा दी गयी कोई विधि द्वारा पानी को साफ करके मनुष्यो और पशुओ के स्वास्थ्य की रक्षा की जा सकती है।

(ए) सग्रह

गावो मे ज्यादातर घरो मे जमीन के नीचे छोटी छोटी कुडिया बना कर वर्षा पोखर या तालाब का पानी इकट्ठा किया जाता है। इनमे दूर दराज से पानी लाकर भी इकट्ठा करते हैं। ऐसी विधि द्वारा पानी का सग्रह करने पर उसमे से 80 प्रतिशत कार्बनिक पदार्थ और छोटे कण या कचरे पानी मे नीचे पैदे पर बठ जाते हैं। सग्रह के दौरान कई प्रकार के सूक्ष्म जीवाणु भी मर जाते हैं। लेकिन जो जीवाणु स्पोर बनाते हैं उन पर पानी के सग्रह करने के दौरान कुछ असर नही होता है, और ऐसा पानी काफी खतरनाक होता है, इसलिये इसे किसी दूसरी विधि द्वारा साफ करके ही उपयोग मे लाना चाहिये। सग्रह करने के बाद पानी के तल म पडे हुए कीचड जसे कचरे (Sludge) को बिना हिलाये पानी निकाल कर काम म लेते रहना चाहिये। अगर पानी को तीन सप्ताह तक सग्रह करके रखें तो कौलेरा जसे खतरनाक जीवाणु भी मर जाते हैं। जबकि टाइफोयड बीमारी के 90 प्रतिशत जीवाणु पानी सग्रह करके रखने पर एक सप्ताह के अन्दर-अन्दर मर जाते हैं। इस प्रकार अगर पानी को एक माह तक सग्रह करके रखें और इसके बाद काम मे लें तो ज्यादातर जीवाणु मर जाते हैं। पानी को बहुत ज्यादा समय तक सग्रह कर के रखते हैं तो उसमे शैवाल की सख्या बहुत बढ जाती है और इससे पानी म खराब गध आती है और यह रगीन हो जाता है।

रेगिस्तान के जीवन के बारे मे सोचने पर लोगो मे कई तरह की जो जिज्ञासाए जागती हैं उनम से सबसे प्रमुख यह है कि यहा के रहने वाले बाशिंदे

अपनी प्यास किस तरह बुझाते होंगे। राजस्थान मे काफी क्षेत्र ऐसे हैं जहां वर्षा कम होती है और भू-जल काफी गहराई पर मिलता है और ज्यादातर वह भी खारा और फ्लोराईड व अन्य पदार्थों की मात्रा भी इतनी होती है कि इसे पीने पर यह स्वास्थ्य पर बुरा असर करता है। रेगिस्तान मे रेत के टीबो की कमी नही है, और अगर ऐसे म जल सग्रह के लिये तालाब बनाया जाये तो सारा पानी रेत सोख लेती है। फिर अगर तालाब बनाया भी जाये तो यहा की गर्मी के कारण पानी जल्दी ही वाष्पीभूत हो जाता है।

किंतु रेगिस्तान के क्षेत्र के कुछ गावो म लोगो ने वर्षा के पानी सचय की अद्भुत तकनीक निकाली है। राजस्थान मे बीकानेर क्षेत्र के कुछेक गाव वर्षा का पानी कुई नाम के कुण्डो मे इकट्ठा करते हैं। इस क्षेत्र म जालवाली गाव इसम प्रमुख है जहा करीब 200 कुइया हैं और पूरे गाव वाले सदियो से इस तकनीक द्वारा पानी इकट्ठा करके अपनी और पशुओ की प्यास बुझाते हैं। कुई राख और चूनें को मिलाकर धरती के नीचे बनाई जाती है। ये कुइया कुछ नीची जगह पर इस तरह बनाई जाती हैं कि बारिश का पानी बहकर उन तक आ जाता है। इन कुइयों के चारो ओर पानी ग्रहण करने के लिये नालिया बनी हुई होती हैं। कुइयो की गहराई ज्यादा से ज्यादा 30 से 35 फीट तक रहती है और व्यास 10 स 12 फीट होता है। इसकी छत फोग की लकडियो को एक के ऊपर एक रखकर अर्ध अडाकार रूप की बनाई जातीहै। यहा के लोग इसे भिडा कहते हैं। इसे भी चूनें और राख से लीप दिया जाता है और पानी निकालन के लिये लोग भिडे पर बने प्लेटफार्म से पानी खीचते है।

अगर भारत के पानी की कमी वाले सभी गाँवो मे इस तरह की कुइया बनाई जाये तो पानी की समस्या काफी हद तक हल हो सकती है और वर्षा का पानी जो जमीन सोख लेती है या वाष्प बनकर उड जाता है इन कुइयो के माध्यम से सग्रह किया जा सकता है। साथ ही ये कुइया पानी सग्रह करके प्रदूषण से भी बचाएँगी क्योंकि पानी जमा होने पर एक माह म काफी साफ हो जाता है। इस प्रकार का पानी बद रहने से उसे जानवर गदा नही कर पायेगें और साथ ही हवा मे जो हानिकारक सूक्ष्म जीवाणु होते हैं उनसे भी पानी को कोई हानि नही होगी जबकि तालाब या खुला रहने वाले पानी का हवा से भी प्रदूषण होता रहता है।

(बी) उबालना

पानी को उबालने स उसमे होने वाले सूक्ष्म जीवाणु मर जाते हैं घुली हुई अशुद्धिया हानिरहित हो जाती है और पानी म पाई जाने वाली अस्थायी कठोरता भी समाप्त हो जाती है। पानी स कुछ गसे जसे हाइड्रोजन सल्फाइड, अमोनिया व कार्बन डाइआक्साइड भी निकल जाती है। यह विधि बहुत ही सुरक्षा प्रदान करती है क्योंकि पानी को उबालने स बीमारी पदा करने वाले जीवाणु समाप्त हो जाते हैं।

पानी को 20 से 25 मिनट तक उबालते हैं और उसी बतन मे ढक कर रखे रहने देते हैं। इस तरह पानी का फिर से सदूषण नही होगा।

गम करने पर पानी से उसमे घुली हुई हवा बाहर निकल जाती है और ऐसा पानी पीने पर बस्वाद और रुचिकर नही रहता है, इसलिये ऐसे पानी को पीने से पहले या कुछ देर तक उसे खुला रखें या दो बतन लेकर उसे ऊपर तक उठाकर एक बतन से दूसरे बतन मे जाने दें ताकि उसमे फिर से हवा घुल सके। पानी को उबालने पर उसमे होने वाली टरबिडिटि पर कोई असर नही होगा। यह विधि काफी महगी पडती है इसलिय यह विधि पानी को छोटे पमाने पर साफ करने के काम में ही ली जाती है।

(सी) डिसटिलेशन

पानी को एक बद बतन म लगातार उबालते हैं और उसम से निकलने वाली बाष्प को ठडा करके पानी मे परिवर्तित कर लेते हैं। एडन और कुवैत मे इस विधि द्वारा समुद्र के पानी से पीने का पानी तयार किया जाता है। यह पानी पीने के लिये हर दृष्टि से उपयोगी होता है पर तु यह काफी खर्चीला होता है।

(डी) सूय की किरणें

सूय की किरणें, जो प्राकृतिक रूप म मिलती हैं, बहुत उपयोगी होती हैं क्योकि इनमे सूक्ष्म जीवाणुओ को मारने की क्षमता होती है। लेकिन यह क्षमता सर्दी के दिनो मे घट जाती है। यह क्रिया पानी की ऊपरी सतह तक ही सीमित रहती है। कृत्रिम साधनो द्वारा भी अल्ट्रावायलेट किरणें पदा की जा सकती हैं जो कि पानी को साफ करन मे सहायक होती हैं। इसके लिय बाजार मे मिलने वाले मरकरी वेपर लेम्प (220 वोल्ट) या क्वाटज ग्लास के बने वल्व या टयूब काम मे लिये जाते हैं। ये किरणें पानी के अन्दर 12 इच तक पहुच सकती है। यह विधि काफी अच्छी है क्योकि इसमे उपचार के बाद पानी मे किसी तरह का खराब स्वाद, रग या गध पैदा नही होती है और साथ ही इन किरणो से किसी प्रकार के विषाक्त पदार्थ नही निकलते हैं। इस विधि का उपयोग दफ्तरो, घरो, स्वीमिंग पूल और होटलो मे निपुणता से किया जा सकता है।

(इ) घरेलू फिल्टर

इस विधि मे पानी को मिट्टी और कपडे से बनी कई परतो से छान कर साफ करते हैं। छना हुआ पानी साफ होता है और इसे जीवाणुओ से भी मुक्ति मिल जाती है। विभिन्न किस्म के फिल्टर, जो काम म लिये जाते हैं, इस प्रकार हैं —

(1) कम दाब वाला फिल्टर

भारत के कई गावो मे काम म लिया जाने वाला यह भारतीय फिल्टर (चित्र 1) चार मिट्टी के घडो द्वारा तयार किया जाता है और ये घडे एक स्टेण्ड मे एक के

ऊपर एक तरकीब से रखे जाते हैं। ऊपर के तीन घड़ो में पेंदों में एक छेद बनाया जाता है जिन्हें रूई या घास की सहायता से बद करके रखते हैं। सबसे ऊपर के घड़े में साफ किया जाने वाला पानी भरा जाता है। इस घड़े के छेद से पानी रिस कर दूसरे घड़े मे गिरता है। दूसरे घड़े मे रेत की परत बिछाई जाती है और उस पर पानी रहता है जो रेत से छन कर तीसरे घड़े में आता है। तीसरे घड़े के पेंदे मे कंकड़ और उसी के उपर लकड़ी के कोयले की परत रहती है। चौथे घड़े में छना हुआ साफ पानी इकट्ठा होता रहता है। इस विधि द्वारा पानी स्टरलाइज नही होता। मगर इसमे कणो के रूप में रहने वाला कचरा दूर हो जाता है। इस विधि को अच्छी तरह् काय रूप मे लाने के लिये समय समय पर घड़े की परतो को साफ करते रहते हैं।
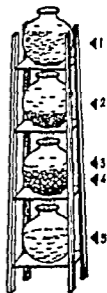
चित्र 1 भारतीय फिल्टर। (1) साफ किया जाने वाला पानी, (2) पानी और रेत की परत, (3) पानी और कोयले की परत, (4) कंकड़ की परत और (5) छना हुआ साफ पानी।

(ii) ज्यादा दबाव वाले फिल्टर

इनमे कुछ किस्म के फिल्टर हैं, जिनम से पानी दबाव से निकलने पर छन कर साफ हो जाता है। इन फिल्टरो की कार्यक्षमता बढ़ाने के लिये इनको निश्चित समय पर साफ करते रहना चाहिये। पानी साफ करने के लिये निम्न प्रकार के दबाव वाले फिल्टर काम मे लिये जा सकते हैं।

पासटयूर चेम्बरलैण्ड दाब फिल्टर (**Pasteur Chamberland Filter**)

इस फिल्टर का बाहरी भाग ब्रास धातु का बना हुआ होता है और इसके अन्दर एक मोमबत्ती के आकार की छिद्र युक्त नली रहती है। यह नली चीनी मिट्टी की बनी होती है और इसमे बने हुए छिद्रो मे से पानी साफ होकर पेंदे म बने छिद्र द्वारा बाहर निकल जाता है। इस विधि द्वारा पानी जीवाणुओं से मुक्त हो जाता है। इस फिल्टर को पानी के वितरण वाले नल से जोड दिया जाता है और इसके लिये पानी का दबाव 20 से 40 पाउण्ड प्रति स्क्वेयर इंच होना चाहिये। कुछ घंटे पानी छनने के बाद इसम लगी हुई नली को बाहर निकालकर रगड कर साफ करें और फिर इसे पानी मे उबालें। इस फिल्टर का उपयोग करने से जीवाणु रहित पानी मिलता है जिससे पानी द्वारा फैलने वाली कुछ बीमारियो से बचने म सहायता मिलती है।

बर्कफील्ड फिल्टर (Berkefeld Filter)

इस फिल्टर मे छिद्र जरा बडे होते हैं इसलिये छनकर निकले हुए साफ पानी मे कुछ प्रकार के जीवाणुओ के होने का सदेह रहता है। इस फिल्टर मे दो भाग होते हैं, ऊपर वाले भाग मे पानी इकट्ठा किया जाता है, और इसके बीचो-बीच एक मोमबत्ती के आकार की छिद्र युक्त नली रहती है। यह नली केओलिन या किसिल गहर (Kieselguhr) की बनी होती है। इस ऊपरी भाग से पानी नली के छिद्रो से छन कर नीचे वाले भाग मे इकट्ठा होता रहता है।

मैटा फिल्टर (Meta Filter)

यह काच के पात्र का गोल आकार का फिल्टर है। इसके दोना सिरो पर धातु के आवरण होते हैं। इसे चालू करने से पहले काच के पात्र मे किसिलगहर का मिश्रण भरते हैं जिस पर चादी और एल्यूमिनियम हाइड्रेट की परतें चढी हुई होती हैं।

जब पानी फिल्टर मे प्रवेश करता है तब किसिलगहर का मिश्रण फिल्टर मे बने छिद्रो पर समान रूप से परत बनाता है। इस प्रकार बनी हुई फिल्टर की तह मे जीवाणु और अन्य कण फस जाते हैं, मगर इस विधि द्वारा साफ किये गये पानी को ब्लीचिंग पाउडर द्वारा उपचार करने के पश्चात् ही काम मे लेना चाहिये। फिल्टर को कुछ घटे तक काम मे लेने के पश्चात् इसका किसिलगहर बदलना पडता है। इस विधि मे जीवाणु सिल्वर आयन की आलिगोडायनेमिक (Oligodyanamic) क्रिया द्वारा मरते हैं। इसमे काम आने वाले फिल्टर को काटाडाइन बीड टाइप स्टरलाइजर कहते हैं जिसमे ग्लास जार बीडस पर चादी चढी रहती है। इसमे पानी भर कर पूरी रात के लिये रख दिया जाता है। सिल्वर आयन जीवाणुओ को समाप्त करते हैं। इसके द्वारा पानी छानने के लिये मोमबत्ती के आकार की नली भी मिलती है, जिस पर सिल्वर की परत लगी होती है। पानी साफ करने की यह विधि छात्रावास, अस्पतालो और दफ्तरो के लिये काम मे लाई जाती है।

शुद्ध माइक्रो फिल्टर (Shuddha Micro Filter)

शुद्ध माइक्रो फिल्टर (चित्र 2) द्वारा 6 से 10 लीटर पानी प्रति मिनट प्राप्त किया जा सकता है। इसके द्वारा साफ किया पानी शुद्ध व आरोग्यप्रद होता है। इस फिल्टर द्वारा धातु की बनी टकी से जग, मिट्टी, कीचड, फफूद, जीवो की मृत कोशिकाए बडी सफलतापूर्वक हटाये जाते हैं यहा तक कि इस फिल्टर द्वारा 0 4 माइक्रोन आकार तक के जीवाणु पानी से हटा लिये जाते हैं जिनमे मुख्यतया अमीबा, स्पोर वाले जीवाणु वेसीलाई, कोक्साई और ई कोलाई सम्मिलित है। इस फिल्टर से साफ किये पानी से 90 प्रतिशत पानी की बीमारियो से छुटकारा मिल जाता है। इससे साफ किया गया पानी छोटे बच्चो और छोटे पशुओ के लिये बहुत उपयोगी है। इसका उपयोग स्कूलो कॉलेजो, दफ्तरो, अस्पतालो, गावो और मेलो

मे बडी सफलता के साथ किया जा सकता है। इसके द्वारा फिल्टर किये गये पानी को उबालने की जरूरत नही पडती। इस फिल्टर को नल (चित्र 3 I) में पाइप
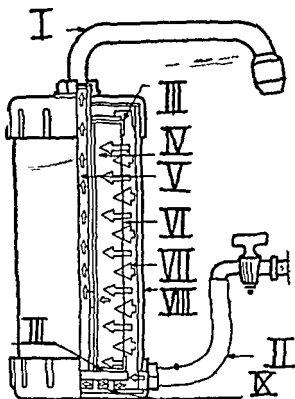
चित्र 2 शुद्ध माइक्रो फिल्टर। (I) पानी के निकास का नल, (II) पानी के प्रवेश के लिए नल, (III) वायु रोधक स्थान, (IV) फिल्टर का खोल, (V) शुद्ध हुए पानी के निकलने का मार्ग, (VI) फिल्टर के खोल से मिट्टी और जीवाणुओ के निकास का मार्ग (VII) साफ किया जाने वाला पानी और (VIII) फिल्टर का बाहरी भाग*।

लगा कर चालू किया जाता है। इससे पहले पहल निकला 7 या 8 बाल्टी पानी पीने के काम मे नही लेना चाहिए। उसके पश्चात् इसका फिल्टर सही काम करने लगता है और साफ पानी प्राप्त होता है। कुछ दिनो के उपयोग के बाद इसके फिल्टर को निकाल कर साफ किया जाता है क्योंकि पानी मे आने वाले कचरे और जीवाणुओ से इसम लगे सेल्यूलोज फिल्टर के छिद्र बन्द हो जाते हैं। इसे खोलने के लिये इसके ऊपर लगे ढक्कन को घुमा कर खोलते हैं (चित्र 3 II) और फिल्टर को उसके बाहरी प्लासटिक के खोल से अलग (चित्र 3 III) कर लेते हैं। सेल्यूलोज

* Available at M/s Emkaypee enterprises Marketing & Allied Services Gandhi Chowk, Jodhpur 342001

फिल्टर को एक बाल्टी पानी (चित्र 3 IV) मे 4 से 6 घटे के लिये भिगो कर रखने मे उस पर लगी मिटटी और जीवाणु इत्यादि हटने लगते हैं और फिर उन्हें पूरी तरह से साफ करने के लिये नाइलोन के कोमल ब्रस द्वारा (चित्र 3 V) उसे ऊपर से नीचे और फिर ऊपर से जाते हुए पूर्णतया साफ करते हैं। इस तरह साफ करने पर हर बार फिल्टर के खोल का कुछ भाग हटता जाता है। फिल्टर को फिर से जोड़कर (चित्र 3 VI) शुरू करें, पहले कुछ देर तक 7 एव 8 बाल्टी पानी बहते रहने दें फिर इससे निकला पानी बिल्कुल साफ आयेगा। फिल्टर का जो खोल काफी काम आ चुका हो और जो कि 50 मी मी ϕ का हो जाये तब नया सेल्यूलोज फिल्टर पेड लगाना चाहिये जो कि 70 मी मी ϕ आकार का होता है।
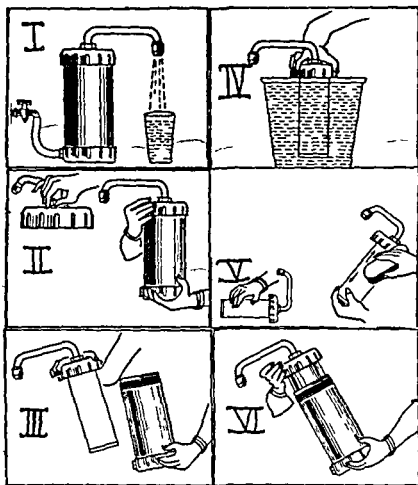
चित्र 3 I से VI शुद्ध माइक्रो फिल्टर की काय प्रणाली* ।

* Available at M/s Emkaypee enterprises Marketing & Allied Services, Gandhi Chowk, Jodhpur 342001

(एफ) रसायन

(i) फिटकरी

फिटकरी या एल्यूमिनियम सल्फेट पानी से रंग, पीट अम्ल, जीवाणु सिल्ट (Silt) और कीचड आदि हटाने के लिये इस्तमाल की जाती है। इसकी क्रिया द्वारा पानी म स्थिर अवस्था म रहने वाली अशुद्धिया अवक्षेपित होकर बतन के पैंदे म बठ जाती हैं। पानी की एक गलन मात्रा को साफ करने के लिये इसमें 1 से 6 ग्रेन फिटकरी मिलाई जाती है। इस विधि द्वारा साफ किये गये पानी को घरेलू कम दबाव वाले फिल्टर से छान कर उपयोग मे लाना ठीक रहता है।

(ii) पोटेशियम परमैंगनेट

यह एक धीमी गति वाला डिसइन्फेक्टेन्ट है। इसके साथ तनु किया हुआ हाइड्रोक्लोरिक अम्ल मिलाने स इसकी स्टरलाईजेशन क्षमता मे तेजी आती है। यह रसायन पानी म कौलेरा विब्रीयो का समाप्त करने की क्षमता रखता है। पानी साफ करने के लिये इसका उपयोग घरो, विहार मे की जान वाली पार्टियों और कुओ के लिये किया जाता है। यह कार्बनिक पदार्थों को आक्सीडाइज क्रिया द्वारा समाप्त करता है और इन पदार्थों मे ही जीवाणु रहा करते हैं। एक कुए मे अगर 1,000 स 1,500 गलन पानी हो तो उसे साफ करन के लिये आधा औंस पोटेशियम परमैंगनेट की जरूरत पडती है (1 गलन पानी के लिये 60 ग्रेन पोटेशियम परमैंगनेट के साथ 180 ग्रेन बिना तनु किया हाइड्रोक्लोरिक अम्ल)। इसे पानी मे मिलाने पर बैंगनी या गुलाबी रग आता है और अगर यह रग 15 से 20 मिनट मे फीका हो जाय, तो पानी म कुछ मात्रा रसायन की और मिलानी चाहिये। यह रग 3 से 4 घटे तक पानी मे स्थिर रहना चाहिये। रसायन मिलाने के बाद उस पानी को बाल्टी या किसी और साधन द्वारा अच्छी तरह से हिलायें। पूरी एक रात के समय तक पानी म क्रिया होने देने हैं। पानी को फिर इसके बाद काम मे लिया जा सकता है या फिर जरूरत नही हो तो उसे पम्प द्वारा कुए से तब तक निकाला जाता है जब तक कि पानी मे रग दिखना बद न हो जाये। अगर पानी मे जरा भी गुलाबी रग दिखता रहे तब भी एसा पानी पीने के लिये हानिकर नही होता है। इस रसायन के उपयोग के बाद पानी तो साफ हो जाता है मगर उसके गध और स्वाद म बदलाव आ जाता है। कार्बनिक पदार्थों से उत्पन्न लोहा भी इस विधि द्वारा पानी से हटा दिया जाता है।

(iii) ब्लीचिंग पाउडर या क्लोरीन

ब्लीचिंग पाउडर या क्लोरीनेटेड चूना ($CaOCl_2$) एक सफेद रग का बिना किसी खास आकार का चूर्ण होता है और इसमे 33 प्रतिशत क्लोरीन की मात्रा रहती है। इसे किसी अधेरी जगह मे पात्र म बद करके रखना चाहिये क्योंकि हवा, रोशनी और आद्रता से इसका नुकसान होता है और इसके

क्लोरीन की मात्रा मे कमी उत्पन्न होती है जिसके कारण यह शक्तिहीन हो जाता है। इसकी मात्रा पानी मे इतनी मिलाई जाती है कि इसमे से एक भाग क्लोरीन, हर दस लाख भाग पानी को मिल पाये। ब्लीचिंग पाउडर का एक औंस भाग 750 एम एल पानी मे घोलकर 2,000 गलन पानी को साफ किया जाता है। यह पानी 4 घटे बाद पीने के काम मे लेते हैं। धरातल के पानी को शुद्ध करने के लिये क्लोरीन की ज्यादा मात्रा की जरूरत होती है, जसे कि 1 से 2 पी पी एम और इस क्रिया के समाप्त होने पर पानी मे 0 1 से 0 2 पी पी एम क्लोरीन बचनी जरूरी होती है। पानी जब वितरित किया जाता है, खुला रह जाता है या सग्रह किया जाता है तब पानी मे बची हुई 0 1 से 0 2 पी पी एम क्लोरीन उसे सदूषण से होने वाले खतरे से बचाती है। पानी को स्टरलाइज करने के लिये ब्लीचिंग पाउडर की गोलिया (सोडियम हाइपोक्लोराइट) भी बाजार मे मिला करती है, लेकिन वे पुरानी नही होनी चाहिये।

क्लोरीन की गोलिया

क्लोरीन की गोलिया सफेद रग की होती हैं और ये बाजार मे हेलेजोन के नाम से मिलती हैं। इस विधि द्वारा 0 5 ग्राम की एक गोली द्वारा 20 लीटर पानी को आधा घटे के समय मे ही स्टरलाइज कर लिया जाता है। सोडियम थायोसल्फेट की गोली जो नीले रग की होती है और उसके द्वारा पानी मे ज्यादा घुली हुई क्लोरीन को हटाया जाता है। उससे पानी का स्वाद भी सुधारा जाता है।

(iv) ऐसिड सोडियम सल्फेट

ऐसिड सोडियम सल्फेट की 15 ग्रेन भार की गोली से एक पिंट पानी को स्टरलाइज किया जाता है। इस विधि मे गोली पानी मे रखने के बाद उस पानी को आधा घटे के लिये छोड दें और फिर उसके बाद ही पानी को उपयोग म लें।

(v) कापर सल्फेट

इसका उपयोग पोखर या तालाब मे पाई जाने वाली शवाल को हटाने के लिये *किया जाता है। इसकी 2 से 10 पाउण्ड मात्रा से 10 लाख गलन* पानी का उपचार होता है। इसका घोल छिडकाव द्वारा पोखर के पानी की सतह पर छोडा जाता है।

(vi) आइओडिन

इसको पानी मे 2 पी पी एम के हिसाब से मिलाते हैं। इसके द्वारा 20 से 30 मिनट मे पानी का उपचार हो जाता है। यह पोटेशियम परमैंगनेट की तुलना मे काफी ठीक रहता है। पानी मे पाये जाने वाले कार्बनिक पदार्थ और उसमे कम या ज्यादा पी एच का होने पर भी यह रसायन ठीक काम करता है। थाइराइड ग्रथी को हानि पहुचाने और महगा होने के कारण इसका उपयोग बहुत सीमित है।

(vii) चूना

चूने का उपयोग पानी मे जीवाणुओ को मारने, कठोरता हटाने और उसे शुद्ध करने के लिये किया जाता है। यह 10 से 20 पी पी एम के हिसाब से पानी मे मिलाया जाता है और अगर पानी मे इसकी मात्रा ज्यादा हो जाय तो पानी में कार्बन डाइआक्साइड गैस प्रवाहित करके उसे हटा लिया जाता है। इससे यह कैल्शियम कार्बोनेट बनाता है, जिसे पानी मे से हटाकर सुखाते हैं। इसे गर्म करने पर इसमे से कार्बन डाइआक्साइड निकल जाती है और इस तरह चूना फिर से प्राप्त हो जाता है। यह चूना पानी को साफ करने के लिये दुबारा काम में लाया जा सकता है।

निम्न तरीके से कुए मे पानी की मात्रा का पता लगाया जाता है —

(i) कुए मे पानी की उसके सतह से पदे तक की ऊँचाई नापें= (h) मीटर

(ii) कुए का व्यास नापें= (d) मीटर

गणना के लिये बहुत सारी रीडिंग लेकर उसका औसत निकालें।

$$\text{पानी की मात्रा (लीटर)} = \frac{3.14 \times d^2 \times h}{4} \times 1,000$$

एक क्यूबिक मीटर= 1,000 लीटर पानी।

बहता हुआ पानी

नदी और नालों का पानी स्वतः ही साफ होता रहता है, इस बहते हुए पानी को स्वतः ही साफ होना कहा जाता है। ऐसा खासकर यहाँ बहते हुए पानी की मात्रा अधिक होने के कारण गटर का पानी सदूषण पैदा नही कर पाता है, साथ ही भारी पदार्थ पानी मे नीचे बैठ जाते हैं, सूर्य की किरणो द्वारा पानी का स्टरलाइजे-शन भी होता रहता है, जीवाणुओं और रसायनो द्वारा कार्बनिक पदार्थों का आक्सीडेसन हो जाता है और इनका मछलियो द्वारा उपयोग कर लिया जाता है, अतः इन सभी कारणो से बहता हुआ पानी स्वतः ही साफ हो जाया करता है। मगर इस तरह का पानी पूर्णतया शुद्ध नहीं होता और इसलिये इसे साफ करने की विधि द्वारा शुद्ध करके ही पीने के काम मे लेना चाहिये।

2 बड़े पैमाने पर पानी साफ करना

(ए) संग्रह

पानी को संग्रह करके रखने पर उसमे स्थिर अवस्था में रहने वाला कचरा नीचे तल पर इकट्ठा होता जाता है। इसको ढककर रखा जाता है इसलिये दुबारा इसका सदूषण नहीं हो पाता है। पानी को संग्रह करके रखने के लिये ईंट, पत्थर या सीमेंट और कंकरीट की सहायता से बड़ी टंकी बनाई जाती है। पानी के संग्रह के लिये आयताकार टंकी 10 से 15 फीट गहरी और 25 से 30 फीट चौड़ी बनाई

जाती है। इसमे पानी भरने के लिये नल को टकी मे 7 या 8 फीट की ऊचाई पर लगाया जाता है। टकी को अन्दर से कई बराबर भागो मे विभाजित किया जाता है। पानी नल द्वारा टकी के पहले भाग मे आता है, इस तरह इस भाग के भरने पर पानी दूसरे मे फिर तीसरे मे बहता हुआ आगे हर भाग से निकलता है। इसमे पानी भरने की गति धीमी रहती है तथा पानी नितरता रहता है, और इसमे भारी कण पैंदे मे बैठते रहते हैं। सग्रह के समय टकी के पानी को हिलाना नही चाहिये और साथ ही इस पानी का तापक्रम एक समान रहना चाहिये। बडे आकार वाले कचरे 1 से 2 घटे मे पैंदे मे पहुचते हैं, जबकि हल्के कार्बनिक पदार्थ 6 से 8 घन्टे का समय लेते हैं और 70 से 80 प्रतिशत तक तैरते रहने वाले हल्के पदार्थ पानी से हट जाते हैं। इस विधि द्वारा 24 घटे मे 90 प्रतिशत कचरा टकी के पैंदे मे बठ जाता है। पानी टकी में तेजी से नहीं गिरना चाहिये। जीवाणु, कार्बनिक पदार्थों को आक्सीडाइज करके नाइट्रेट्स बनाते हैं, लेकिन इसमे अमोनिया तत्व कम हो जाते हैं। पानी के सग्रह करने की इस टकी के पैंदे से समय समय पर जमा कीचड हटाते रहते हैं।

(बी) पानी को सीधे ही फिल्टर करना या इसके लिये अवक्षेपक पदार्थों की सहायता लेना

पानी का सग्रह, जल सभरण के स्थानो पर या टकी मे करने से यह कुछ हद तक शुद्ध हो जाता है। मगर पानी मे स्थिर अवस्था मे तैरते रहने वाले बहुत हल्के कण सग्रह विधि द्वारा पानी से हटाये नही जा सकते। इसके लिये कुछ रासायनिक अवक्षेपक पदार्थों की सहायता ली जाती है, जैसे फिटकरी, फेरस सल्फेट, सोडियम एल्यूमिनेट और फरिक सल्फेट। इन सभी म से फिटकरी का उपयोग अवक्षेपण के लिये किया जाता है। फिटकरी, कल्शियम और मैग्नीशियम कार्बोनेट के साथ क्रिया करके एल्युमिनियम हाइड्रोक्साइड बनाती है जो कार्बनिक और अकार्बनिक पदार्थों के तरते कणो को जोडती है और उनका अवक्षेपण करके उनको पानी के पैंदे पर ले आती है। जब पानी को तीव्र गति के रेत के फिल्टर द्वारा साफ करना होता है तब इसे पहले फिटकरी द्वारा साफ किया जाना जरूरी होता है। इस विधि से जीवाणुओ की सख्या मे भी कमी आती है। जीवाणु कार्बनिक पदार्थों के साथ लगे रहते हैं। जब ये पदार्थ फिटकरी की रासायनिक क्रिया द्वारा जुड कर पानी मे नीचे बैठते हैं तो अपने साथ जीवाणुओ को भी ले जाते हैं। धरातल के स्रोतो से सभी तरह के मिलने वाले पानी को फिल्टरेसन की विधि द्वारा साफ करना चाहिये। जलागार या नदी का पानी पीने के लिये काम मे लेने से पहले उसे मिट्टी से बने निम्न प्रकार के फिल्टर द्वारा साफ करते हैं।

(1) मद गति वाले रेत के फिल्टर

ये फिल्टर सख्त व साफ किस्म की मिट्टी की परतो को भिन्न भिन्न मोटाई

वाले कङ्कड पर बिछा कर बनाये जाते हैं। सबसे ऊपर वाली मिट्टी की परत 36 से 60 इंच गहराई तक बिछाते हैं। कंकड की भिन्न भिन्न मोटाई की चार परतों पर मिट्टी की ऊपरी परत ठहरी रहती है और ये निम्न हैं –

एकत्रित पानी	
मिट्टी 0 25 से 0 35 मी मी	36 से 60 इंच
कंकड $\frac{1}{8} \times 1\frac{1}{8}'$	36 से 60"
कंकड $\frac{1}{4} \times \frac{1}{8}'$	=3"
कंकड $\frac{3}{4} \times \frac{1}{2}'$	=3"
कंकड $1\frac{3}{4}'' \times 1'$	=3"
छिद्र युक्त नल	
फर्श	=6"

जब फिल्टर को पहली बार बनाकर चलाया जाता है तब वह सिर्फ पानी को छानने का काम ही करता है जिससे छन कर आ रहे पानी मे जीवाणु और ठोस पदार्थ दोनो ही पाये जाते हैं। लेकिन 12 घण्टे पश्चात् मिटटी के ऊपरी हिस्से पर जीवाणुओ द्वारा एक परत बना ली जाती है (प्लेन्कटन, डाइआटम्स्, जीवाणु और शवाल) और इसम जीवो की सहायता मे पानी साफ होता है। इन्हें परिपक्व मद गति वाला फिल्टर कहते हैं। इस फिल्टर द्वारा एक घन्टे म $2\frac{1}{2}$ गलन पानी प्रति स्क्वयर फीट ही साफ हो पाता है।

(ii) तीव्र गतिवाले रेत के फिल्टर

पानी को जलागार से लाने क बाद, उसे अवक्षेपक रसायन से क्रिया कराई जाती है। फिर पानी को नितार कर अलग करके उसे दाब पम्प द्वारा या रेत की सतह पर पानी की मात्रा बढा कर फिल्टर करते हैं।

फिल्टर के लिये मिटटी और कंकड की परतें निम्न प्रकार से होती हैं।

एकत्रित पानी	
मिटटी के कण 0 45 से 0 55 मी मी	60' – 72
कंकड $\frac{1}{r}'$ ऊपर की बिछावन	30" – 36"
$1\frac{1}{2}'$ पदे की बिछावन	
छिद्र युक्त नल और फर्श	12' – 18"

फिटकरी और छोटे कण, जो टंकी म नीचे नही बठे हो और पानी के साथ फिल्टर प्लाट मे आ गये हो, वे फिल्टर के लिये बिछाई गई ऊपर वाली मिटटी की परत पर रह जाते हैं। इस मिटटी की परत द्वारा जीवाणु भी रोक लिये जाते हैं और यहा अमोनिया का आक्सीडेसन होता है। छनने के बाद पानी देखने म रग और स्वाद मे उन्नत किस्म का हो जाता है और इसमे किसी भी किस्म की गध नही रह जाती। इस विधि द्वारा पानी से 99 प्रतिशत जीवाणु

हट जाते हैं। गटटर के पानी से सदूषित हुए पीने के पानी मे कोलीफाम समूह के जीवाणु हमेशा पाये जाते हैं। अगर ऐसे पानी मे फिल्टररेसन के बाद कोलीफाम जीवाणु नही मिले तो इससे फिल्टर की उत्तम कायक्षमता का पता लगता है। ऐसा माना जाता है कि अगर पानी मे ई कोलाई जीवाणु नही मिले तो मल मे होने वाले दूसरे जीवाणु भी नही मिलेंगे।

मद और तीव्र गति के फिल्टर से प्राप्त हुए पानी को क्लोरीन या दूसरी विधियो द्वारा जीवाणु रहित किया जाता है।

(सी) रसायन द्वारा स्टरलाइजेशन

पानी को रसायनो द्वारा स्टरलाइज करना वह विधि है जिसमे पानी मे पाये जाने वाले जीवाणुओ को ठोस या गैस से बने रसायनो द्वारा समाप्त किया जाता है। स्पोर बनाने वाले जीवाणु, पोलियो और हिपैटाइटिस वायरस रसायनो की सामान्य मात्रा से बेअसर रहते हैं, मगर सामान्य से ज्यादा मात्रा प्रयोग मे लाने से ये सूक्ष्म जीवाणु भी मर जाते हैं।

रसायन की प्रकृति

पानी को स्टरलाइज करने के काम मे लाये गये रसायन पदार्थ मनुष्यो और जानवरो के स्वास्थ्य को किसी तरह का नुक्सान नही पहुचाने चाहिये। ये बीमारी के जीवाणुओ को मारने मे सक्षम होने चाहिये। इनको काम मे लेने पर पानी बेस्वाद नहीं हो। ये आसानी से प्राप्त किये जा सकें और ज्यादा महगे न हो।

(1) क्लोरीनेसन

बडे पमाने पर पानी साफ करने के लिये क्लोरीन काम मे ली जाती है। यह असरदार, सस्ती और भरोसेमद विधि है। पानी को 15 से 30 मिनट के लिये क्लोरीन के सपक मे रखा जाता है। इसके लिये क्लोरीन की इतनी मात्रा ली जाती है कि पानी बेस्वाद नही हो और इसमे कुछ क्लोरीन की मात्रा भी बची रहे, जो पानी के वितरण के समय उपभोक्ता को पानी के सदूषण के खतरे से बचावे। पानी मे अगर फेनोल के कुछ अश हो और अगर इस पानी को क्लोरीन द्वारा उपचार करें तो, ऐसे पानी मे फेनाल और क्लोरीन रसायनिक क्रिया से क्लोरोफेनोल बनाते हैं जिससे पानी बेस्वाद हो जाता है और पानी मे आयडोफाम का सा स्वाद और गध उत्पन्न हो जाती है। ऐसे पानी को क्लोरीन उपचार से पहले चारकोल के माध्यम से छानना चाहिये या इस पानी को सुपरक्लोरीनेसन की विधि द्वारा उपचार करके डीक्लोरीनेसन किया जा सकता है।

(ii) सुपरक्लोरीनेसन

इस विधि मे साधारण क्लोरीनेसन की विधि मे जितना क्लोरीन पानी साफ करने के लिये लेते हैं, उससे दस गुना क्लोरीन पानी मे मिलाते हैं। इस विधि द्वारा

पानी मे पाई जाने वाली खराब गध, रग और स्वाद भी सुधर जाते हैं और पानी जीवाणुरहित हो जाता है। पानी से कार्बनिक पदार्थ पूर्णतया आक्सीडाइज हो जाते हैं। जहां पानी को सग्रह करने की जगह न हो, वहां यह विधि अपनाई जाता है। इसमे क्लोरीन को सिर्फ 10 मिनट तक पानी के सम्पर्क मे रखा जाता है। यह विधि सकट के समय या जहां कम समय म जल्दी पानी वितरण करना हो, काम म ली जाती है। पानी को कुछ ही मिनट म स्टरलाइज करके उसमें से ज्यादा रह जाने वाली क्लोरीन को सल्फर डाइआक्साइड मिलाकर (बड़े पैमाने पर) या फिर सोडियम थायोसल्फेट द्वारा (छोटे पमाने पर) पानी से हटाया जाता है।

(iii) क्लोरामीन

अमोनिया युक्त पानी में जब क्लोरीन मिलाई जाती है तब क्लोरामीन बनते हैं। पानी म होने वाले कार्बनिक पदार्थों का इस पर कुछ भी असर नहीं होता है। इस विधि द्वारा पानी में आयडोफॉर्म नही बनते हैं और पानी म क्लोरीन का स्वाद भी पैदा नही हो पाता है। इस विधि द्वारा जीवाणुओ को मारने मे काफी समय लगता है इसलिये स्टरलाइजेशन के लिये सम्पर्क का समय बढ़ाना आवश्यक हो जाता है।

(iv) ओजोनीकरण

प्राकृतिक रूप में आक्सीजन का अस्तित्व बढ़ने वाली अवस्था मे, आक्सीजन (O), सामान्य आक्सीजन (O_2) और ओजोन के रूप मे रहता है। ओज़ोन बहुत ही अस्थिर होती है इसलिये यह O_2 और O म विभक्त हो जाती है। जब यह बढ़ने वाली (O) स्थिति मे आती है, तब कार्बनिक पदार्थों का आक्सीडेसन हो जाता है और जीवाणु प्राय मर जाते हैं। सूक्ष्मजीव भी कुछ ही सेकण्ड मे समाप्त हो जाते हैं। ओज़ोन द्वारा स्वीमिंग पूल के पानी का भी स्टरलाइजेशन किया जाता है। इसके उपचार के बाद पानी मे किसी भी तरह का खराब स्वाद या रग पैदा नही होता है। इसमे पाये जाने वाले नाइट्रोजन के आक्साइड जीवाणुओ के लिये विषले होते हैं। इसके उपचार के बाद पानी म ओजोन की कुछ भी मात्रा शेष नही बचती है। स्टर लाइजेशन के लिये पानी मे ओजोन 0 2 से 1 5 मी ग्राम प्रति लीटर के हिसाब से मिलाया जाय।

पालतू पशुओं के अच्छे स्वास्थ्य के लिये पानी की आवश्यकताए

पशुओ को पानी पिलाने के लिये मनुष्यो के लिये दिये गये मानक का पानी देते रहना कतई सभव नही है। लेकिन बूचडखाने मे जानवरो के शवों को ठडा करने उनके भीतरी अगो को धोकर साफ करने, डेयरी मे दूध के बतन धोने दुधारू पशुओ के घर साफ रखने व उनको पीने के लिये दिया जाने वाला पानी भी उसी मानक का होना जरूरी है जैसा कि मनुष्यो के पीने क पानी के लिये दर्शाया गया है। अगर ऐसा नही किया जाएगा तो दूषित पानी द्वारा मास दूध और उनसे बने पदार्थों का

जीवाणुओ द्वारा सदूषण होने के कारण, इनसे पानी द्वारा फैलने वाले रोगो से मनुष्यो के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल असर होगा। जब पोखर का पानी जानवरो को पिलाएँ तब इसके आसपास के वातावरण का मुआयना जरूर करें, और अगर पानी दूषित होने का कुछ भी कारण हो तो उसे सदूषण से बचाएँ। पोखर कभी भी जानवरो के घरो, गट्टर लाइन के पास या गोबर इकट्ठा करने वाले स्थान के पास नही होने चाहिए। जब पशु पानी पीने पोखर पर जाये तो ध्यान रहे कि वे पानी मे अन्दर तक न जाने पावे क्योकि अक्सर वे पानी मे मल और मूत्र त्याग कर उसे दूषित कर देते हैं। इसके लिये समुचित व्यवस्था करनी बहुत जरूरी होती है। पोखर का पानी पशुओ को पिलाने से पहले उसे जमीन से ऊपर टकी बनाकर कुछ समय तक इकटठा करके रखें, और अगर पानी से फैलने वाले सक्रामक रोगो का सदेह हो तो, पानी को फिटकरी द्वारा और बाद मे रसायनो का उपयोग करके पानी को छोटे पमाने पर दी गयी विधि से साफ करें। तालाव पर जानवरो को पानी पिलाने के लिये अलग से स्थान निश्चित करें, जो कि सामान्यत मनुष्यो के पीने के उपयोग मे लाये जाने वाले पानी के स्थान से बहुत दूर हो। इस प्रकार पानी मे पशुओ द्वारा फलाये जा रहे प्रदूषण को रोकने और उसे नियन्त्रण मे लाने मे सहायता मिलेगी। क्योकि पशुओ के कई रोग दूषित पानी द्वारा मनुष्यो मे (Zoonotic) भी फल जाते हैं इसलिये पोखर या तालाब का पानी जानवरो को तब पिलाएँ, जबकि दूसरा कोई भी स्रोत उनके पानी के वास्ते उपलब्ध न हो।

पशुओ के पानी पीने की मात्रा की आवश्यकता निम्न कारणो पर निभर करती है

1 पशु का आकार और किस्म।

2 मौसम।

3 पशु का उपयोग किस काम के लिये किया जा रहा है।

4 भोजन की किस्म।

विभिन्न प्रकार के पशुओ के लिये प्रतिदिन पानी देने की मात्रा

गाय

12–15 गलन पीने के वास्ते।

12–15 गलन धोने के वास्ते।

4 गलन सफाई के वास्ते।

गायो का सभी जरूरतो के लिये 28 से 34 गलन पानी प्रतिदिन के हिसाब से जरूर चाहिये।

ऊँट

8 गलन प्रतिदिन।

यदि ऊँट को काफी दिनों तक पानी नहीं पिलाया गया हो तो वह एक साथ 20 गलन पानी भी पी सकता है।

घोड़ा

8–12 गलन पीने के वास्ते।

8 गलन सफाई के वास्ते।

घोड़ों की सभी जरूरतों के लिये 16 से 20 गलन पानी प्रतिदिन चाहिये।

भेड़ व बकरी

2 गैलन प्रतिदिन।

कुत्ता

5 से 20 औंस प्रतिदिन।

मुर्गी

$8\frac{1}{2}$ औंस प्रतिदिन।

प्रतिदिन एक गलन पानी 18 से 20 मुर्गियों के लिये काफी होता है।

2

हवा

हवा का प्रदूषण

वायुमण्डल मे विपले पदार्थों और सूक्ष्म जीवाणुओ के अधिक मात्रा में होने से मनुष्यो, पशुओ और पौधो के जीवन को खतरा और सम्पत्तियो का नुकसान आदि के होने को हवा का प्रदूषण कहा जाता है तथा इनकी उत्पत्ति मनुष्या, पशुओ और प्रकृति के कारण ही होती है। हवा का पहला व्यापक प्रदूषण लोस एनजलिस (1948) और लन्दन (1952) म हुआ था। वायु प्रदूषण की ऐसी ही एक दुघटना भारत मे 2-3 दिसम्बर, 1984 को भोपाल में हुई जब कीटनाशक दवाइया बनाने वाली बहुराष्ट्रीय कम्पनी यूनियन कार्बाइड के सयत्र से गस का रिसाव हुआ और असख्य लोग और पशु इस हादसे में मारे गये। गैस रिसाव से प्रभावित लोगो को चम रोग, क्षय रोग, सास और आखो के रोग आदि हुए हैं। भारत जस विशाल प्रगतिशील देश म छोटे मोटे वायु प्रदूषण के असख्य हादसे होत रहते हैं और इसके कारण मनुष्य समाज, पशुओं और फसलों व वनस्पतियो को काफी हानि उठानी पड रही है। बडोदा के एक कारखाने से अक्टूबर 1981 मे क्लोरीन गस रिसी, इससे अनेक गायें मरी और लोग बेहोश हो गये। इसी शहर मे 1984 म एक अमोनिया से भरा टैंकर दुघटनाग्रस्त हो गया, जिसमे 60 मवेशी मरे और अनेक लोग बीमार होकर अस्पताल मे भर्ती कराये गये। भोपाल हादसे से भयभीत हाकर गुजरात सरकार ने राज्य के 10 कीटनाशक कारखाना और जहरीले रसायनो का इस्तेमाल करने वाले अन्य 15 कारखानो म उत्पादन एक माह तक बन्द रखने का आदेश दिया था। इनकी सुरक्षा की दृष्टि से जांच की गयी। इस तरह भारत के हर राज्य मे अनक कारखाने हैं जिनकी जनहित सुरक्षा की दृष्टि स समय समय पर जाच होती रहनी चाहिये क्योकि आज हमारे सारे विकास काय प्रदूषण से सीधे जुडे हुए हैं।

जीवन के लिए शुद्ध हवा बहुत ही जरूरी है। जब से प्राणी जन्म लता है वह अतिम क्षण तक बिना रुके हवा का लगातार सेवन करता रहता है और यह भोजन और पानी से भी ज्यादा जरूरी है।

हवा के लिये राज्य या देश की सीमा निश्चित नही की जा सकती है यह तो लगातार बहती ही रहती है। अगर किसी स्थान म शुद्ध हवा की मात्रा कम गुजर जा

उस स्थान का वायुमण्डल दूषित होता रहता है और कभी कभी यहा से दूषित पदार्थ हवा द्वारा किसी साफ स्थान पर भी ले जाये जा सकते हैं और वहा इनसे बीमारियां भी फैल सकती हैं। वैज्ञानिक प्रगति के कारण रेडियोधर्मिता का कुप्रभाव काफी नुकसानदेय साबित होता जा रहा है। दुर्घटनाओं के कारण, ये रेडियोधर्मी तत्व वायुमण्डल में पहुचकर एक देश से दूसरे देश तक पहुच जाते हैं और इससे मनुष्यो, पशुओ और पौधो को बहुत नुकसान होता है। ऐसी दुर्घटनाओ का वातावरण मे कई वर्षों तक असर रहता है। इसके कारण किसी स्थान के मौसम मे बदलाव आना और वहा रहने वाले प्राणियो मे कैंसर जसी बीमारी का होना एक सामान्य बात है।

वायुमण्डल मे घरो और कारखानो से लगातार कुछ न कुछ पदार्थ छोडे जाते रहते हैं जिनमे धुआ गैस, कोहरा पराग के कण, औद्योगिक धातुओ, खनिजो और रसायनिक पदार्थों की धूल, रेडियोधर्मिता और सूक्ष्म जीवाणु प्रमुख हैं। मनुष्यों, पशुओ और पौधो का इन सभी पदार्थों की ज्यादा मात्रा के सम्पर्क मे आने से या फिर लम्बे समय तक इनके सम्पर्क मे रहने से उनकी सामान्य शारीरिक क्रिया मे विकार उत्पन्न हो जाते हैं। प्रदूषण के इन कारणो से मनुष्य एव पशु एलर्जी रोग और सास के रोगो से पीडित हो जाते हैं और उनके गुर्दे, दिल, मस्तिष्क और यकृत आदि को काफी हद तक हानि पहुचती है। प्रदूषण के कारण आखें जलना, सिरदर्द होना, स्वभाव मे चिडचिडापन पदा होना आम शिकायत रहती है और कभी कभी तो इन प्रदूषणो से आदमी पागल भी हो जाता है। इनसे वनस्पतियो को भी काफी नुकसान होता है और जब इस खराब हुई वनस्पति को मनुष्य या जानवर खाने के उपयोग मे लाते हैं तो उनकी सेहत पर बहुत हानिकारक प्रभाव होता है। पौधे वायु प्रदूषण के बहुत ही सचेतक होते हैं और इनके द्वारा वायु प्रदूषण की सही स्थिति का पता लगाया जा सकता है। वैज्ञानिक प्रगति के कारण उन्नत विधियो की सहायता से बीमारियो को नियन्त्रित करने मे काफी हद तक सहायता मिली है मगर अभी भी ऊपरी सास नली मे होते रहने वाले हवा के बैक्टीरिया, वाइरस और फफूद से पैदा होने वाले रोगो को काबू मे लाना बडा ही कठिन है। मनुष्य, पशु और पौधे पर्यावरण मे उत्पन्न हुए प्रदूषण का कुछ हद तक मुकाबला कर सकते हैं, लेकिन कारखानो की तादाद और शहरो की आबादी मे बढोतरी के कारण इनकी बचाव क्षमता काफी कमजोर पडती जा रही है। मनुष्यो और पशुओ के स्वास्थ्य पर बुरा असर करने वाले छोटे कणो मिट्टी, वायुमण्डल मे आने वाले विभिन्न प्रदूषकों की उत्पत्ति के बारे मे शोध करना बहुत ही जरूरी है।

हवा के गुण

शुद्ध हवा रगहीन गधहीन और स्वादहीन होती है। हवा आक्सीजन कार्बन डाइआक्साइड नाइट्रोजन आर्गन हीलियम क्रिप्टोन और निआन इत्यादि बहुत सारी गसो के मिश्रण से बनती है। अच्छे स्वास्थ्य के लिए ताजी हवा का उपलब्ध

होना बहुत ही जरूरी है। यह आग को जलाने मे बहुत सहायक होती है। पश्चिमी देशो की तरह हमारे देश मे हवा के वितरण की कोई समस्या नही है।

हवा मे प्रदूषण के कारण

(1) हवा का मिश्रण एक समान नही होता है, वायु मण्डल मे वातावरण के अनुसार इसके मिश्रण मे बदलाव आता रहता है। गावो मे हवा काफी शुद्ध रूप मे पाई जाती है, जबकि घनी आबादी और कारखानो वाले क्षेत्र मे इसके मिश्रण में फक आता रहता है। घनी आबादी वाले क्षेत्र मे सल्फर डाईआक्साइड, हाइड्रोजन क्लोराइड और हाइड्रोजन सल्फाइड जसी गैसें ज्यादा मात्रा मे मिला करती हैं। मनुष्यो और पशुओ के सास लेने की क्रिया द्वारा वायुमण्डल मे कार्बन डाइआक्साइड की मात्रा मे बढोतरी होती है। इसके बढने स कोई बीमारी तो पैदा नही होती मगर इससे शरीर की बीमारिया रोकने वाली शक्ति मे अवरोध पैदा होता है। इसके कारण वातावरण मे मीथेन, नमी और तापक्रम मे बढोतरी होती है।

(2) हवा मे अशुद्धिया कई कारणो से होती है जैसे-कोयले, लकडी और ज्वलनशील पदार्थों का जलाना, रोशनी और भट्टी के लिए कारखानो और अनेक उपयोगो के काम मे ली जाने वाली जलाने की गैसें और जानवरो के शवो के और वनस्पतियो के सडने से उत्पन्न हुई गैसें इत्यादि।

(3) बेढगे और खराब वेन्टीलेशन वाले पशुघरो मे यूरिया के सडने से स्वतत्र अमोनिया बनती है और यह पशुघरो को और आसपास के वातावरण को दूषित करती है।

(4) पशुघरो में कार्बनिक और बहुत प्रकार के छोटे-छोटे पदार्थों के कण पाये जाते हैं। हवा मे तरते रहने वाली अशुद्धिया कई प्रकार की होती हैं जिनमे मुख्यत सूखी हुई चमडी के कण, सूखे गोबर, मिट्टी और खाद्य पदार्थों और पराग के कण और पशुओ के फश पर उपयोग मे आने वाली बिछावन के कण आदि सम्मिलित हैं।

(5) सामान्य तार से घरो मे पाये जाने वाले सूक्ष्म जीवाणु और फफूद भी पशुओ और मनुष्यो मे कभी कभी किसी स्थिति मे बीमारी पदा करके उनके स्वास्थ्य को हानि पहुचा सकते हैं और इन जीवाणुओ का स्वच्छ दूध के उत्पादन मे काफी महत्व रहता है।

(6) खेती बाडी के काम से भी हवा म बहुत तरह की अशुद्धिया फलती हैं, जसे फसलो पर कई किस्मो के रसायन के घोल का छिडकाव और विषले कीटनाशक पदार्थों का छिडकाव आदि।

(7) अणु शक्ति उत्पादन से सम्बन्धित कायक्रम के कारण भी वायुमण्डल प्रदूषित होता है।

वायु प्रदूषण का मनुष्यों, पशुओं और पौधों पर असर

(1) वायु प्रदूषण के कारण तुरंत मृत्यु या शरीर म राग की प्रवृत्ति उत्पन्न हो सकती है। इसके कारण श्वसन और तन्त्रिका मण्डल पर काफी बुरा असर पडता है। जो रोगी काफी समय तक बीमार रहते हैं उनके फेफडे खराब हो जाते हैं और इनमे कैंसर पदा होने की भी शिकायत रहती है। वायु प्रदूषण के कारण आंखो और श्वसन नली की श्लेष्मा झिल्ली और चमडी को भी काफी नुक्सान पहुचता है।

(2) वायु प्रदूषण द्वारा क्लोरीन, सीसे और आर्सेनिक की विषाक्तता का मनुष्यो और पशुओ की सेहत पर बडा ही घातक असर होता है।

(3) पौधो पर वायु प्रदूषण का तुरंत ही असर पडता है। सल्फर डाइआक्साइड, क्लोरीन और स्मोग से पौधो को काफी नुक्सान होता है। वायु प्रदूषण के कारण पत्तियो मे धब्बे दिखाई देना और उनका जल जाना, फसल का ज्यादा नही बढना या फसल का जल जाना आदि अक्सर देखे जा सकते हैं।

(4) वायु प्रदूषण से धातुओ मे जग लगन या उनके गलने आदि से आर्थिक नुक्सान होता है।

वायु प्रदूषण की विषाक्तता का असर पशुओं मे मनुष्यो के मुकाबले जरा भिन्न तरीको से होता है। मनुष्य सदूषित वायुमण्डल के सम्पक मे सीधे तौर से आता है, मगर पशुओ पर इसके अलावा सदूषित हुए घास खाने से और पानी, जो ऐसी घास पर गिरकर इन्हे धोता हुआ पोखर के रूप मे इकट्ठा हो जाये, पीने से विषाक्तता का दोहरा असर पडता है। यह विदित ही है कि पौधो पर वायु प्रदूषण का काफी असर होता है, जिसके फलस्वरूप पौधो की पत्तियो पर कुछ सदूषित पदार्थ जमा होते हैं और ये प्रतिक्रिया करके पत्तियो म विषैलापन लाते हैं और ऐसी पत्तियो को खाने पर पशुओ म अनेक प्रकार के विकार उत्पन्न हो जाते हैं।

1 सीसा

सीसा एक सचयी विष है। सदूषित हुई घास की थोडी-थोडी मात्रा भी पशुओ के द्वारा लगातार ग्रहण करने से सीसे की विषाक्तता हो जाती है। इसकी अत्यधिक मात्रा ग्रहण करने स पशुओ मे सीसे की तीव्र विषाक्तता उत्पन्न होती है और वे 24 घण्ट के अन्दर ही मर जाते हैं। अगर पशुओ के आहार में कल्शियम की कमी हो तो ऐसे म उन पर सीसे की विषाक्तता का असर ज्यादा होता है। भेड में सीसा उसके गर्भ मे बढ़ रहे बच्चे तक भी पहुच जाता है और उसके दूध म भी आता रहता है।

कारखाना से सीसा, धातुओ के गलाने के दौरान, कोयले की भट्टी या कोयले को जलाने पर वायु म आता है। सीसे के कुछ मिश्रण जसे सीसा के आक्साइड, सीसा ऐसीटेट और सफेद सीसा आदि सभी विषाक्तता पदा करते हैं।

लक्षण सीसा धातु को गलाने वाले कारखाना, सीसा की खाना और उस जगह जहा पर सीसा धातु के रसायन के घोल का छिडकाव किया जाता है आदि स्थानो के पास जब पशु चरने जाते हैं तब वे सीस के विपलपन के शिकार हो जाते हैं। सीसे की मात्रा के शरीर मे ज्यादा जाने से इसकी विषाक्तता का असर अल्प समय में ही दिखाई देने लगता है।

सीसा विषाक्तता के कारण तत्रिका सबधी लक्षण जसे मासपेशी मे झटके आना, मुह से झाग निकलना, मूछा आना आदि प्राय दिखाई देते है। नाडी तीव्र गति से चलती है मगर यह कमजोर होती है और शरीर के छोर वाले हिस्सो का तापक्रम ठण्डा रहता है। पशु लडखडाकर चलते हैं या जमीन पर सायी हुई अवस्था मे रहते हैं और खडे नही हो सकते हैं। वे चारा नही चर पाते हैं, पाचन प्रणाली का पक्षाघात हो जाता है और उन्हे दस्तें होने लगती हैं। दातो का पीसना, जल्दी जल्दी जुगाली करना और गले म ऐंठन हाना भी प्राय देखा जाता है। घोडो म लैरिंग की मासपेशी का पक्षाघात हो जाता है और उन्हे श्वास लेने म दिक्कत पैदा होती है।

पोस्टमार्टम परिवतन

उग्र विषाक्तता एबोमेसम तथा छाटी आत मे रक्तास्राव तथा गुर्दों मे अधिक रक्त का होना और रक्तस्राव के लक्षण देखे जा सकते हैं। फेफडो म अधिक मात्रा मे रक्त का पाया जाना और यकृत का अपकपण इत्यादि लक्षण प्रकट होने लगते हैं। हृदय मे सबऐपीकार्डियल और सबएन्डोकार्डियल क्षेत्र मे छोटे छोटे पिन के सिर के आकार के और इक्काइमोटिक रक्तस्राव नजर आते है। मेनिनजेज और सेरीब्रल नाडियो मे अधिक रक्त का सचय और सेरीब्रोइस्पाइनल द्रव का बढना भी प्राय देखा जा सकता है।

दीर्घकालीन विषाक्तता यकृत और गुर्दे मे अपकपण बदलाव तथा यकृत का रग पीला दिखाई देता है। सीसा विषाक्तता मे शव से रक्त, सीरम, मल व मूत्र, मॉस पेशी और हड्डिया इकट्ठा करके प्रयोगशाला मे परीक्षण के लिये भेजना चाहिये।

चिकित्सा

(1) कैल्शियम डाइसोडियम वर्सेनेट
कैल्शियम डाइसोडियम इथाइलिनडाइएमाइन ट्रेट। ऐसिटेट — 20 ग्राम
आसुत पानी 1,000 एम एल
1 से 2 एम एल प्रति पाउन्ड भार के हिसाब से, खून की नाडी मे (आई वी) इन्जेक्शन चार दिनो तक देवें।

(2) सीसे के विष को ऐमेटिक द्वारा पेट को धोकर या नमक के परगेटिव देकर हटाया जा सकता है।

(3) शारीरिक उत्तेजना को कम करने के लिये मुख्य तन्त्रिका मण्डल की शक्ति को क्षीण करने वाली दवाई का प्रयोग करें।

2 आर्सेनिक

गा वंश और घोडा की अपेक्षा भेड म मुख्यतया आर्सेनिक की विपाक्तता का असर ज्यादा होता है। भेड म मुख्यतया आर्सेनिक की विपाक्तता की दुघटनाए, उनको आर्सेनिक के स्नान के पश्चात् या फिर इनके छिडकाव के पश्चात् होती है। आर्सेनिक का उपयोग पड व पौधा पर पाउडर या घोल के छिडकाव के रूप म भी किया जाता है और इस तरह पशु इन पौधो की पत्तियो आदि को खाकर आर्सेनिक की विपाक्तता स ग्रसित हो जाते हैं। आर्सेनिक कच्ची धातु और कोयले म भी पाया जाता है, इसलिय कारखान से निकलने वाल धुए के साथ बाहर आकर हवा के द्वारा काफी मीलो तक फलता रहता है और वायु पेड-पौधो और पानी के स्रोतो का सदूषण करता है।

लक्षण आर्सेनिक की विपक्तता के कारण पशु सुस्त रहते हैं, कान नीचे की तरफ झुके रहत है, कुछ कदम भी चलना नही चाहते हैं तथा उनमे पेट दर्द, मुह में स लार गिरना उल्टी आने और बेचैनी आदि के लक्षण देखे जा सकते हैं। पशु पाव पटकता रहता है, तथा बार बार नीचे बठकर फिर उठता है। नाडी धीमी गति से तथा क्रमहीन चलती है। पशुओ को दस्त लगती है तथा उसमे लहसुन की सी गध होती है। सास भी क्रमहीन चलता है और उसमे भी लहसुन की गध होती है। इसकी विपाक्तता के कारण पशु अत्यन्त थका हुआ नजर आता है और वह 24 घटे मे ही मर जाता है।

घोडो मे काटन वाले दांतो की जड के पास लाल रग की उभरी हुई रेखा दिखाई देती है। उनके मसूढ़ो के बाहरी भाग पर घाव हो जाते हैं। सास लेने मे दिक्कत होती है तथा उसमे लहसुन जसी गध आती है। आखो की पुतलियाँ फल जाती हैं और आँखो के ऊपर के भाग पर सूजन सी रहती है। इनके पिछले परो का आशिक रूप से पक्षाघात हो जाता है।

दीघकालीन विपाक्तता के कारण पशु सुस्त रहत हैं और उनकी भूख बन्द हो जाती हैं। पशु लम्बे समय तक खसारता रहता है। उनकी चमडी मोटी हो जाती है। उसमे खुजली चलती है। उनमे रक्त की कमी, गभपात तथा बांझपन हो जाता है। पशुओं मे लगातार दस्त की शिकायत रहती है तथा मरने से पहले उनको पक्षाघात हो जाता है।

पोस्टमाटम परिवतन चमडी के भीतरी भाग का रग सामान्य नही दिखता है और वहा की मास पेशियो मे पीले या खून के रग का सीरम इक्टठा हो जाता है। जब आर्सेनिक मुह द्वारा शरीर मे प्रविष्ट करता है तब चमडी म किसी प्रकार की

खराबी उत्पन्न नही होती है। यकृत का नेक्रोसिस हो जाता है और पेट व आतो मे सूजन दिखलाई देती है। खून की लाल कोशिकाओ का नाश होता है और गुर्दे काफी खराब हो जाते हैं। पोस्टमाटम से प्राप्त हुए परिणाम और रासायनिक परीक्षण करके पक्का नतीजा निकाल लिया जाता है।

आर्सेनिक विषाक्तता का पक्का पता लगाने के लिये पशु के मल मूत्र, रक्त, सीरम, गुर्दे, दिल और यकृत के नमूने लेकर उनका रासायनिक परीक्षण किया जाना चाहिये।

चिकित्सा (1) गर्म पानी से पेट को साफ (Lavage) करें।

(2) बाल (Bal) का 10 प्रतिशत घोल तैयार करें। 50 पाउण्ड शरीर के भार के अनुपात पर एक एम एल मात्रा अत पेशी (I M) इन्जेक्शन की सहायता से पहले दो दिनो तक प्रति 4 घटे के अन्तर पर दें और फिर तीसरे दिन चार इजेक्शन तथा इसके बाद 10 दिनो तक या अधिक समय तक रोजाना दो इन्जेक्शन देवें।

(3) सोडियम थायोसल्फेट के 20 प्रतिशत घोल की 10 एम एल मात्रा प्रति एक पाउण्ड शरीर के भार के हिसाब से खून की नाडी मे इन्जेक्शन की सहायता से देवें।

(4) फेरिक हाइड्रोक्साइड का ताजा घोल बनाकर देना काफी फायदेमद रहता है। इसके लिये आइरन परक्लोराइड घोल का 3 भाग, 17 भाग पानी और एक भाग कैलशाइन्ड मैग्निशिया के लें। इस दवा की 20 औंस मात्रा पशु को पिलावें और 24 घटे पश्चात् इसे फिर पिलावें।

3 फ्लोरीन

फ्लोरीन अक्सर कच्ची धातुओ, कोयले, क्ले और भूमि मे पाया जाता है। कारखानो द्वारा खनिज रूप मे फ्लोरीन काम मे लिया जाता है जो कि फ्लूओस्पर और क्रियोलाइट और सोडियम फ्लोराइड है। कोयले और अन्य ज्वलनशील पदार्थों मे फ्लोरीन की भी कुछ मात्रा होती है और इनको जलाने से वायुमण्डल मे धुए के साथ फ्लोरीन की काफी मात्रा आती रहती है। घोडो और मुर्गियो पर फ्लोरीन की विषाक्तता का असर नही होता जबकि सूअर मे इससे कुछ असर जरूर होता है। गौ-वश और भेडो मे इसकी विषाक्तता का काफी असर होता है और ये फ्लोरोसिस से पीडित हो जाते हैं।

लक्षण फ्लोरीन की तीव्र विषाक्तता के कारण पशुओ मे भूख न लगना, लगडाकर चलना, कभी-कभी दस्त लगना, शरीर के भार मे कमी होना, मास पेशियो मे कमजोरी और मृत्यु तक हो सकती है। ऐसी स्थिति मे उनके मूत्र मे भी फ्लोरीन की मात्रा पाई जाती है। अगर किसी के द्वारा इसका सेवन लगातार किया जाये तो यह सचित विष का रूप धारण कर लेता है। इससे शरीर की कोशिकाओ

के प्रोटीन को बहुत ही नुकसान पहुचता है। दीर्घकालीन फ्लोरीन विषाक्तता के कारण दांतो पर धब्बे पड जाते हैं। गौ वश मे दांतो के सामन वाले सतह पर धारियां पडकर खुरदरी हो जाती हैं। फ्लोरीन की विषाक्तता म दाढ़ के दातो की ऊपरी सतह परस्पर नही मिलती है और यह टेढी मेढ़ी हो जाती है और कमजोर हो जाने के कारण जल्दी ही टूट कर गिर जाती है। पुराने रोगियो मे पावा, जबडों और पसलियो की हड्डियो मे सामान्य स अधिक बढ़ोतरी नजर आती है।

पोस्टमार्टम परिवतन फ्लोरीन विषाक्तता से मरे हुए पशुओ के दात घिसे हुए होते हैं, उन पर धब्बे और रगीन धारियां आदि दिखाई देती हैं। पसलियां, पावों और जबडे की हड्डियो म सामान्य से अधिक बढोतरी दिखाई देती है। मूत्र का रासायनिक परीक्षण करके फ्लोरीन की विषाक्तता का पता लगाया जा सकता है। कारखानो द्वारा फ्लोरीन विषाक्तता से मरे हुए पशुओ के शवो की हड्डियो का रासायनिक परीक्षण करके उनके मरने के कारणा का पक्का पता लगाया जा सकता है।

चिकित्सा कल्शियम की ज्यादा मात्रा देने पर शरीर मे फ्लोरीन का इकट्ठा होना कम होता है। फ्लोरोसिस क रोगियो के लिय कल्शियम कार्बोनेट का उपयोग बहुत लाभदायक है। गायो और भेडों को फ्लोरोसिस स बचाने के लिये उनके खाने के साथ 0 5 प्रतिशत अल्युमिनियम सल्फेट या अल्युमिनियम क्लोराइड देना ठीक रहता है।

4 अमोनिया

अमोनिया एक नाइट्रोजन कम्पाउन्ड है जो कार्बनिक पदार्थों के सडने से पदा होता है। वायुमण्डल म इसकी उपस्थिति हमेशा ही बनी रहती है। कार्बनिक रासायनिक कारखानो के पास उसकी मात्रा हमेशा ज्यादा रहती है। वायुमण्डल में मिलकर इसकी मात्रा सामा य होती रहने के कारण इसका स्वास्थ्य पर बुरा असर नहीं पडता है। जिन पशुगृहो मे वेन्टीलेशन ठीक ढग का नही हो, वहा मल-मूत्र एकत्रित होकर सडते हैं और इस कारण ऐसे भवनो म इसकी मात्रा सामान्य से ज्यादा पाई जाती है। वायुमण्डल म इसकी मात्रा ज्यादा होने पर यह आखो तथा सांस की नली की श्लेष्मा झिल्ली मे जलन पदा करती हैं। पशु भवनो म पाई जाने वाली अमोनिया की मात्रा को वहा के वेन्टीलेशन का ठीक से रख रखाव करके नियन्त्रण मे लाया जा सकता है। जो पशु अमोनिया की ज्यादा मात्रा होने क कारण पीडित हो जायें उन्हे तनु किया हुआ सिरका उपशयक (Demulcent) और उत्तेजना बढ़ाने वाले पदार्थ दिये जाते हैं।

5 सल्फर डाइआक्साइड

सल्फर डाइआक्साइड गस कोयला जलाने, धातुओ को पिघालन, तेल शोधक कारखाने और अन्य कई रासायनिक पदार्थों को बनाने वाले कारखानो से निकलने

वाले धुए के साथ बाहर निकलती है। इसके कारण वर्षा और धुध अम्लीय हो जाते हैं और फिर इनसे भवनो मे लगे धातुओ के सामान गलने लगते हैं तथा उनमे जग भी लग जाता है। वायु प्रदूषण का पता लगाते समय वहां के वायुमण्डल मे सल्फर डाइआक्साइड की मात्रा का पता जरूर लगाया जाता है। वायुमण्डल मे इसकी मात्रा अधिक होने के कारण प्राणियो का दम घुटकर मृत्यु तक हो जाती है। सास तेज हो जाती है और इसमे काफी कठिनाई होती है। दिखाई देती रहने वाली श्लेष्मा झिल्लियो का रग लाल हो जाता है, मास पेशियो मे कपकपी होती है और सकोचक पेशी की ताकत क्षीण हो जाती है। एक अनुमान के अनुसार अकेली दिल्ली में ही करीब 10 लाख वाहनो से रोज 2 टन सल्फर डाइआक्साइड वायु मे छोडी जाती है जो सास के साथ शरीर मे प्रवेश करती है।

पोस्टमाटम के दौरान फेफडों मे अधिक रक्त का सचय होना दिखाई देता है तथा उनमे सूजन भी होती है। रक्त का रग गहरा लाल दिखाई देता है।

6 कार्बन मोनोआक्साइड

यह गैस कोयले के पूरा नही जल सकने के कारण बनती है। यह गैस धीमी गति से जलने वाले स्टोव, चिमनी और मोटर गाडियो से निकलने वाले धुए मे रहती है। यह बहुत विषैली होती हैं। कभी-कभी इस गस के कारण पशुओ की मौत भी हो जाती है। अगर लम्बे समय तक इसकी कम मात्रा सांस के साथ ली जाती रहे तो, इससे शरीर मे रक्त की कमी पैदा हो जाती है। श्वास के साथ अगर हवा मे इसकी 0 4 प्रतिशत मात्रा निरन्तर फेफडो में जाती रहे तो यह शरीर को बहुत हानि पहुचाती है।

भारत मे वायु प्रदूषण सबसे अधिक मोटर गाडियो से निकलने वाली गसा से होता है। बम्बई मे यह अनुपात 60 प्रतिशत है और दिल्ली मे 40 प्रतिशत है। गाडियों के अत्यधिक प्रदूषण से आखें जलती हैं, सिरदर्द भयकर रूप से होकर स्वभाव भी चिडचिडा हो जाता है। कभी-कभी तो इन प्रदूषणो से मनुष्य पागल हो जाता है।

प्रयोगशाला मे काटायामा परीक्षण द्वारा कार्बन मोनोआक्साइड गैस की विषाक्तता का पता लगाया जाता है। तनु किया हुआ एक एम एल रक्त लेवें और उसमें 2 एम एल पीला अमोनिया सल्फाइड और 30 प्रतिशत ऐसिटिक ऐसिड की 2 एम एल मात्रा भी मिलावें। अगर रक्त मे कार्बन मोनोआक्साइड घुली हुई होगी तो रक्त लाल रग का ही रहता है अन्यथा सामान्य रक्त हरे रग का हो जाता है।

इसके इलाज के लिये कृत्रिम सास और सास लिये जाने वाली वायु मे आक्सीजन के साथ 5 से 10 प्रतिशत कार्बन डाइआक्साइड का होना काफी फायदेमद होता है। एनेलेप्टीक के रूप मे पशुओ को लेप्टोजोल देना ठीक रहता है।

7 हाइड्रोकार्बन

हाइड्रोकार्बन पानी मे पदा हुई घास से गस के रूप म निकलकर वायुमण्डल मे पहुचते हैं। ये वायुमण्डल की हवा के साथ रासायनिक क्रियाए करके हानिकारक पदार्थ बनाते हैं। इनसे आँखो मे जलन पैदा होती है। हवा मे इसकी मात्रा मोटर गाडिया ठीक करने वाले स्थानो, तेल साफ करने वाले कारखानों और कपडे साफ करने वाली दुकानो के वायुमण्डल मे ज्यादा होती है। दिल्ली मे रोजाना करीब 10 लाख वाहनो से 170 टन हाइड्रोकार्बन वायुमण्डल मे छोडे जाते हैं और ये सास द्वारा फेफडो मे प्रवेश करके शरीर को हानि पहुचाते हैं।

8 आक्सीजन

आक्सीजन रगहीन, स्वादहीन और गधहीन होती है। जीवित रहने वाले प्राणियो के लिये यह बहुत ही जरूरी है और इसके बिना मनुष्य, पशु और पौधे मर जाते हैं। यह आग को जलने में मदद करती है। मनुष्यो और पशुओ को आक्सीजन की जरूरत उनके शरीर मे ऊर्जा पदा करने और शरीर का तापक्रम बनाये रखने के लिये रहती है।

9 कार्बन डाइआक्साइड

भारी मात्रा म कार्बन डाइआक्साइड गस, मनुष्यो, जानवरो पौधो, कोयले व तेल और पेट्रोलियम पदार्थों आदि के जलने से वायुमण्डल मे छोडी जाती है। हवा मे कार्बन डाइआक्साइड की 0 5 प्रतिशत मात्रा हो जाने पर वह मनुष्यो के श्वास क्रिया पर बुरा असर करती है। कारखानो के पास इसकी मात्रा 0 06 प्रतिशत तक बढ़ जाती है। वायु मे इसकी अत्यधिक मात्रा का होना हानिकारक होता है। इसके कारण सिर दद होता है और ठड लगती है। पौधा की पत्तियो मे हरा पदार्थ वायुमण्डल की हवा से कार्बन डाइआक्साइड लेकर उसे विभक्त करके कार्बन तो अपने मे ही रख लेता है और आक्सीजन को हवा मे छोड देता हैं।

10 पानी की वाष्प

हवा म पानी के वाष्प की कुछ मात्रा हमशा ही रहती है। मनुष्यो और पशुओं को शुष्क हवा मे रहना काफी अप्रिय लगता है।

11 गन्ध

हवा म कई तरह की गध होती है जिससे मानव समाज को काफी परेशानी होती है। दुर्गन्ध के कारण वायु प्रदूषण ज्यादातर पशुओ के शवो के सडने, मल मूत्र, गैसो, धुआ और कई दुर्गन्ध पदा करने वाले रासायनिक कारखानो इत्यादि से होता है।

दुर्गन्ध की समस्या को कम करने के लिये गसों को ज्यादा हवा की मात्रा से तनु कराया जाता है। इसको कम करने के लिये गस को एक्टीवेटेड कार्बन के फिल्टर

से गुजारा जाता है, गैसो का आक्सीडेशन किया जा सकता है, प्रोसेस गैस वाष्प को क्लोरीन गैस से मिलाना भी ठीक रहता है।

12 **हवा मे अकार्बनिक और खनिज पदार्थ** वायुमण्डल मे मिट्टी के कण, भूमि, कोयले, कल्शियम के नमक, लवण, स्टील, रबड, चूने और लोहो के आक्साइड आदि से आते हैं। खनिज पदार्थो की मिट्टी ज्यादातर मनुष्यो और पशुओ के लिये हानिकर होती है। कार्बनिक मिट्टी के कण जीवनहीन होते हैं मगर इनकी उपस्थिति काफी नुकसानदेह होती है क्योकि इनके कणो के साथ अक्सर सूक्ष्म जीवाणु चिपके रहते हैं और वे श्वास द्वारा फेफडो मे पहुच कर बीमारी पदा करते हैं। पराग के कण, पेशिया, पौधो की कोशिकाए, सूखी हुई चमडी के टुकडे, शरीर की बाहरी त्वचा के अश, बाल, ऊन, पख और सूखा हुआ मल आदि कार्बनिक पदार्थ कहलाते हैं। ये वसे तो कुछ भी नुकसान नही पहुचाते मगर कभी कभी मनुष्यो म और पशुओ मे इनसे एलर्जी और न्यूमोनिया जैसे रोग हो जाते हैं। इन पदार्थों के साथ सूक्ष्म जीवाणु भी रहते हैं, इसलिये डेयरी मे इनका होना काफी नुकसानदेह है क्योकि इनके कारण दूध के रख रखाव मे काफी दिक्कत उत्पन्न हो जाती है।

खानो और कारखानों मे काम करने वाले लोग, वहा पर पाये जाने वाले विभिन्न तरह की मिट्टी के कणो के कारण आखो, गले और फेफडे के रोगो से पीडित होते रहते हैं।

13 **हवा मे जीव सम्बन्धी पदार्थ** वायुमण्डल मे कई तरह के जीवाणुओ के आ जाने से वे मनुष्यो और पशुओ के लिये बीमारी का मुख्य स्रोत बन जाते हैं। घर के बाहर वायुमण्डल मे जीवाणुओ की सख्या का हवा द्वारा तनुकरण होता रहता है, लेकिन घरो के अन्दर या वे घर जिनमे वेन्टीलेशन ठीक ढग से काय न करता हो, उनमे बीमारी पदा करने वाले जीवाणु हवा द्वारा आसानी से फलते है। खासने के द्वारा या नाक साफ करने पर इनमे पाये जाने वाले खतरनाक रोगो के जीवाणु वायुमण्डल मे आसानी से पहुच जाते हैं। हवा मे तरते रहने वाली छोटी छोटी पानी की हल्की बूदो के साथ सूक्ष्म जीवाणु चिपके रहते हैं और ये किसी दूसरे की सास द्वारा उनके फेफडो मे पहुच सकते हैं या फिर उनके शरीर खाने या पीने के पानी मे गिर जाते हैं। इस तरह हवा एक अच्छा माध्यम है जिसके द्वारा सूक्ष्म जीवाणु एक जगह से दूसरी जगह तक ले जाये जा सकते हैं।

वेन्टीलेशन मे खराबी उत्पन्न हो जाने के कारण निम्नलिखित रोग हवा के माध्यम से फलते हैं —

(ए) केनाइन डिस्टेम्पर (बी) न्यू केसल रोग (सी) इनफ्लूएजा (डी) आरनीथासिस (इ) एन्थ्रक्स (एफ) नेसिलरी व्हाइट डाइरीया (जी) कन्टेजियस इक्वाइन प्लूरोन्युमोनिया (एच) कन्टेजियस बोवाइन प्लूरोन्युमोनिया

(आइ) क्टेजियस केप्राइन प्लूरो-युमोनिया (जे) ग्लेंडस (के) फेफड़ो और हड्डियों का ग्रेनूलामेटस रोग (एल) मेनिनजाइटिस (एम) न्युमोनिया (एन) दाद (ओ) सोर थ्रोट (पी) स्ट्रेंगल्स और (क्यू) क्षय रोग।

वायु प्रदूषण से बचाव और उसका नियंत्रण

(ए) हवा को साफ करने के लिये प्राकृतिक साधनो का उपयोग

(1) सूर्य की राशनी मे पाई जाने वाली अल्ट्रावायलेट किरणो द्वारा हवा में रहने वाले ज्यादातर जीवाणुओ की मृत्यु हो जाती है।

(2) वर्षा द्वारा हवा काफी साफ हो जाती है और इसमे से कणो के रूप म तरती रहने वाली अशुद्धियां, गसें और सूक्ष्म जीवाणु पानी के साथ होकर धरती पर आ जाते हैं।

(3) कार्बनिक पदार्थ, आक्सीजन द्वारा जला दिये जाते हैं जिससे वे नुकसान नही पहुचा सकते हैं।

(4) विभिन्न आयतन की गसें पास आने पर जल्दी ही मिलकर एक समान आयतन मे परिवर्तित हो जाती हैं। वायु के स्वत ही चलते रहने के गुण के कारण यह अपने साथ रास्ते मे आने वाली अशुद्धियो को ले जाकर उनका तनुकरण करती रहती है।

(5) दिन के समय, पौधे लगातार कार्बन डाइआक्साइड को लेकर, कार्बन को तो अपने मे ही रख लेते हैं और आक्सीजन को वायुमण्डल मे छोडते रहते हैं।

(बी) दूसरे तरीकों द्वारा

(1) कुछ विधियो को उपयोग मे लाकर हवा में लगातार आते रहने वाले विषले पदार्थों से बचा जा सकता है जसे कि उस स्थान को अच्छी तरह बन्द करके, वन्टीलेशन को और वायु को शुद्ध करना आदि।

(2) कारखानों और मनुष्यो व पशुओ के रहने वाले स्थान के बीच म पौधे लगावें जिससे वे हवा मे आने वाले प्रदूषको को शीघ्र ही सोख कर वायुमण्डल स हटा सकें।

(3) कारखानो के 6 किलोमीटर परिधि तक किसी भी पशु को वहा होने वाले चारे को नही चरने दें और न ही इस क्षेत्र मे किसी पानी के स्रोत से उन्हे पानी पीने देवें। कारखानो के 6 किलोमीटर क्षेत्र मे उगने वाले घास को न तो इकट्ठा करावें और न ही उसको रख कर भविष्य म जानवरा को खिलाने के उपयोग मे लावें।

(4) कारखाने के मालिक को उसके कारखाने से निकलने वाले वायु प्रदूषको को रोकने के लिये, वायु और आकाश सबधित विषयो का ज्ञान रखने वाले वैज्ञानिक,

रसायन शास्त्र जानने वाले और यन्त्रकार जैसे व्यक्तियो की सलाह लेनी चाहिये। वायु प्रदूषण रोकने के लिये तलछट बैठाने वाला बिजली का उपकरण, रगडन वाली मीनारें (Scrubbing Towers), चिमनी को काफी ऊचाई तक ले जाना आदि विधिया अपनाई जा सकती हैं।

(5) पुरानी विधियो को छोड कर नई तकनीक अपनाई जा सकती है, जैसे कोयला और लकडी की जगह बिजली और गस का उपयोग।

(6) जलाने वाली भट्टी मे और गस बनाने के लिये कारखानो मे हवा की जगह आक्सीजन का उपयोग।

(7) वायु प्रदूषण रोकने के लिये भारत सरकार द्वारा बनाया गया पर्यावरण (सुरक्षा) अधिनियम, 1986 को प्रभावी ढग से लागू किया जाए।

(8) यन्त्रो द्वारा वेन्टीलेशन को सचालित करके कृत्रिम अल्ट्रावायलेट किरणो की सहायता से और आयोनर (Ionaire) उपकरण का उपयोग करके किसी भी भवन मे पाये जाने वाले सूक्ष्म जीवाणुओ की सख्या मे कमी की जा सकती है।

(9) ट्राइ-इथाइलीन ग्लूकोल वाष्प (Triethylene glucol vapour) की सहायता से पानी के वाष्प के साथ तरने वाले सूक्ष्म जीवाणुओ और मिट्टी के कणो को वहा के वायुमण्डल से हटाया जा सकता है।

(10) वाष्प मे परिवर्तित होने वाले द्रव्य और गसो को ब द नलो मे पपो द्वारा प्रवाहित करके ले जाना चाहिये। घुल सकने वाले और महगे रसायन पदार्थों को कारखानो से निकलने के पहले ही रोककर फिर से काम मे ले लेना चाहिये अन्यथा वे वायु मे बेकार ही छोड दिये जायेंगे और उनमे वायु प्रदूषण भी बढेगा। भट्टी से निकलने वाली सल्फर डाइआक्साइड गस को पानी मे से प्रवाहित करवाते है और इस तरह इससे हलका सल्फ्यूरिक अम्ल और लवण प्राप्त करके वायु का प्रदूषित होने से बचाया जा सकता है। किसी कारखाने से निकलने वाली गस दूसरे कारखाने को भी दी जा सकती है और इस प्रकार गस का सही उपयोग करके वायु प्रदूषण को रोका जा सकता है।

(11) सीमेट बनाने के कारखानो मे कच्चे माल को तयार करने के लिये उन्हे चक्कियो द्वारा सूखा ही न पीस कर गीला करके पीसने से वायु प्रदूषण को रोकने मे सहायता मिलती है।

(12) कोयले के स्थान पर बिजली द्वारा चलने वाली रेल गाडी का उपयोग और मोटर गाडियो की जगह शहरो मे बिजली की ट्रामो का उपयोग करने से वायुमण्डल मे कार्बन मोनोआक्साइड के प्रदूषण को रोकने मे सहायता मिलेगी।

नमूना लेने की विधि, लेबल लगाना और प्रयोगशाला मे भेजना

वायु प्रदूषण के कारण पशुओ के मरने पर, पशु चिकित्सक द्वारा शवो से नमूने

एकत्रित किये जाते हैं। नमूने साफ व स्टरलाइज पात्र में इकट्ठे किये जाते हैं। नमूने की मात्रा इतनी हो कि उससे रासायनिक परीक्षण आराम से हो सके और उसे खराब होने से रोकने के लिये कुछ रासायनिक पदार्थ जरूर मिलावें। नमूने को प्रयोगशाला म निम्न सूचनाओ के साथ भेजना चाहिये

(1) मालिक का नाम और पता

(2) पशु की जाति (Species)

(3) वश (Breed)

(4) धातु के टुकडे पर अकित नम्बर या पशु पर किसी पहचान का निशान

(5) लिंग

(6) उम्र

(7) पशु बीमार रहा हो तो उसके बारे म सूचनाए

(8) नमूने

(ए) मूत्र मूत्र को एक बडे मुह की शीशी म एकत्रित किया जा सकता है। पशु से 250 से 500 एम एल मूत्र 24 घटो के दौरान इकट्ठा किया जाता है। मूत्र के इकट्ठा करने और परीक्षण होने के बीच तक उसे खराब होने से बचाने के लिए उसम 2 बून्दें फार्मेलिन की प्रति 50 एम एल मूत्र के भाग के हिसाब से मिलाते हैं।

(बी) मल मल को पोलीथीन के थैले म या कांच की बोतल में इकट्ठा किया जाता है। नमून को प्रयोगशाला मे परीक्षण के लिए भेजन के समय उसमें कुछ बूदे फार्मेलिन की या एल्कोहल या थाइमोल के साथ बने घोल को मिलावें और उसे ठडी अवस्था म (4 स 8° सी) प्रयोगशाला तक पहुचावें।

(सी) रक्त और सीरम परीक्षण के लिये 5 या 6 एम एल रक्त को ई डी टी ए के कुछ भाग के साथ मिलाकर इकट्ठा करते हैं। रक्त या सीरम में जीवाणुओ की वद्धि को रोकने के लिये इसम 2 से 5 बूदें 0 5 प्रतिशत फीनोल या 1 1 000 मरथायोलट घाल की मिलाते हैं। नमूने को इकट्ठा करने और परीक्षण के लिये प्रयोगशाला में पहुचाने तक उसे ठडे तापक्रम पर (4 से 8° सी) रखते हैं।

(डी) भोजन की नली के कुछ भाग, हृदय, यकृत, फेफडों, गुर्दे और हड्डियां ये सभी काफी मात्रा म हो जिससे रासायनिक परीक्षण में कोई दिक्कत न होने पावे। किसी अग को कितना लेवें इसके लिये उस अग मे हुए प्रदूषको से नुकसान को घ्यान मे रखा जाता है। हिस्टोपेथोलोजिकल परीक्षण के लिए मांस पेशी का $\frac{1}{2}$' मोटा भाग काट कर उसे 10 प्रतिशत फार्मेलिन के घोल मे इकट्ठा करके प्रयोगशाला मे भेजें। बोतल का मुह काफी चौडा होना चाहिये जिससे उसमे

नमूना रखने और निकालने मे आसानी रहे । फिर इस बोतल को सील करके प्रयोगशाला मे रासायनिक और हिस्टोपैथोलोजिकल परीक्षण के लिए भेजते हैं।

(इ) चारा या सूखा दाना वायु प्रदूषण के दौरान वहा के सदूषित हुए पौधो और घास के ऊपरी 5 या 6" भाग को अलग अलग स्थानो से काट कर इक्टठा कर लेते हैं। फिर इन सभी को मिलाकर उसम से कुछ भाग इक्ट्ठा कर लेते हैं। परीक्षण के लिए करीबन 50 या 60 ग्राम घास का नमूना लेकर प्रयोग-शाला से भेजना जरूरी होता है। नमूना इकट्ठा करते समय यह ध्यान रखें कि पौधो से नई पकी हुई पत्तियो और फूलो को ही इक्टठा करें और वे भी सिर्फ पौधो के ऊपर 6" भाग से ही हो। नमूने इक्टठा करते समय यह ध्यान मे रखना चाहिये कि वहा किस जाति के पशुओ (ऊट, गाय भेड और बकरी) पर प्रदूषण का असर हुआ है और उनके चारा चरने की क्या आदत है।

(एफ) पानी प्रदूषण के दौरान वहा उपस्थित पानी के स्रोतों का भी सदूषण होता है, इसलिए पानी के नमूने को भी इक्टठा करना जरूरी होता है। इक्टठा किये हुए पानी को प्रयोगशाला मे उसमे पाये जाने वाले विषले पदार्थों का पता लगाने के लिये भेजा जाता है ताकि प्रदूषण के स्रोत का पता लगाया जा सके।

(9) चिकित्सक के हस्ताक्षर

वेन्टीलेशन

वेन्टीलेशन का अर्थ वह विधा है जिससे किसी भवन के वायुमण्डल को इस तरह से सम्हाल कर रखा जाता है कि वहा पर रहने वाले प्राणी को किसी तरह की असुविधा का सामना नही करना पडे। यह भवन के वायुमण्डल म से धीरे धीरे अशुद्धिया हटाता है या उनका तनुकरण करता है। यह भवन से सास द्वारा जलाने या किसी और कारणवश उत्पन्न गर्मी का हटाने मे सहायक होता है। वेन्टीलेशन के माध्यम से दरवाजो और खिडकियो से शुद्ध हवा अन्दर आती है और गन्दी हवा रोशनदान की सहायता से बाहर निकल जाती है। यह घरों की हवा को शुद्ध करने का बहुत ही प्रभावशाली तरीका है, इसलिए वेन्टीलेशन को ठीक से बनाये रखने के लिये इस पर पूरा ध्यान देना चाहिए। घर म शुद्ध हवा के आते रहने से वहा रहने वालो का स्वास्थ्य अच्छा रहता है।

घरो मे हर जगह वेन्टीलेशन को अच्छी तरह सचालित करने के लिए, शुद्ध व ताजी हवा के अन्दर आने के लिए एक अच्छी खिडकी और गन्दी हवा निकालने के लिये एक अच्छे रोशनदान की जरूरत होती है। किसी भी भवन मे हवा के लिये पूरा स्थान होना चाहिये, जिससे कि न तो भवन मे गन्दी हवा की जगह शुद्ध और साफ हवा का फैलाव हो न तो वहा रहने वालो को किसी भी तरह की असुविधा का सामना नही करना पडे। अगर भवन-म-स्थान या स्थान जरूरत से कम दिया गया

हो तो वहा की हवा बहुत ही जल्दी दूषित हो जायेगी। किसी भी भवन के वेन्टीलेशन को अच्छा होना तब कहेंगे, जबकि वहा की तमाम हवा एक घटे मे कम से कम 5 स 8 बार शुद्ध हवा से आदान–प्रदान करे।

किसी भी भवन मे अच्छे वेन्टीलेशन बनाये रखने के लिए उसकी ऊचाई 16′ से ज्य ा नही होनी चाहिये, क्योकि इस ऊचाई से ज्यादा ऊचाई पर पाई जाने वाली गन्दी हवा ठडी होकर फिर से कमरे मे ही गिरती है और इसके कारण वहा का वातावरण दूषित होता रहता है। ऐसी हवा सास लेने के लिये ठीक नही रहती है। ऐसे वेन्टीलेटर को ठीक से बनाये रखने के लिये रोशनदान 16′ की ऊचाई से नीचे ही लगाने चाहिये। जिन भवनो मे रिज (Ridge) हो, उनका क्यूबिक हवा के स्थान का पता लगाने के लिए कमरे की लम्बाई × चौडाई × औसत ऊचाई (जमीन से केव और रिज के बीच की ऊचाई) का गुणा करते है। हवा द्वारा घेरी गई सही जगह का पता लगाने के लिये उस भवन मे रहने वालो या रखे सामान द्वारा रोके गये स्थान को जोड कर हवा के कुल स्थान मे स घटा दिया जाता है।

वेन्टीलेशन के काय

(1) भवन म पाई जाने वाली आवश्यकता से अधिक नमी और गर्मी को हटाना।

(2) भवन की हवा मे कणो के रूप मे आर घुली हुई अवस्था मे रहने वाली अशुद्धियो को हटाना।

(3) कुछ सीमा तक हवा के आगमन को बनाये रखना।

(4) हवा का आगमन बिना किसी बदलाव के हो और साथ ही यह इस तरह से हो कि सर्दी मे भवन का तापमान एकदम कम नही होने पावे। यह एक जाना माना सत्य है कि सास द्वारा और अ य स्रोतो द्वारा कावन डाइआक्साइड, कार्बन मोनो आक्साइड व अन्य गैसें गर्मी वाष्प कार्बनिक व अकार्बनिक अशुद्धिया और सूक्ष्म जीवाणु वायुमण्डल मे आते हैं और इनको भवन से एक अच्छे वेन्टीलेशन सिस्टम की सहायता से साफ हवा अन्दर लाकर हटाया या कम भी किया जा सकता है।

वेन्टीलेशन के तरीके

(ए) प्राकृतिक वेन्टीलेशन (Natural Ventilation)

(बी) कृत्रिम या मशीनो द्वारा सचालित वेन्टीलेशन (Mechanical Ventilation)

(ए) प्राकृतिक वेन्टीलेशन

मनुष्यो के या पशुओ के रहने वाले घरों मे प्राकृतिक तरीके से बदलती रहने वाली हवा को प्राकृतिक वेन्टीलेशन कहते हैं। पशुओ के रहने वाले घरों में ज्यादा

तर इस तरह का प्राकृतिक वेन्टीलेशन का तरीका ही अपनाया जाता है। निम्न तीन प्राकृतिक शक्तियाँ वेन्टीलेशन के प्रतिनिधि का काय करती हैं।

(1) गैसो का फैलाव

(ii) हवा

(iii) एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने वाली हवा की शक्ति

(i) गैसों का फैलाव

गैसो का सामान्य गुण यह है कि वे आपस मे जल्दी ही मिलकर एक हो जाया करती हैं। किसी भी भवन मे जहा पशु रहते हो और वहा यदि कार्बन डाइआक्साइड और मीथेन गैस निकलती हो तो वह पूरे भवन म सामान्य रूप से फैल जाती है और इस तरह वे पशुओ के आस पास एकत्रित नही होती। इस तरह गसो के स्वत फैलाव की यह विधि प्राकृतिक वेन्टीलेशन सिस्टम म बहुत उपयोगी है जिसके कारण भवन मे हवा का सामान्य मिश्रण सदा ही बना रहता है।

जिन घरो मे पशु रहते हैं वहा के वायुमण्डल का तापमान शरीर के तापक्रम से कम होता है, इसलिये वहा की हवा शरीर की गर्मी से गम होती रहती है और हल्की होकर ऊपर की तरफ उठती है। इसलिये भवन म छत के पास रोशनदान देना जरूरी हो जाता है जिससे सास द्वारा निकली और शरीर के पास से गुजरने वाली गम व हल्की हवा कमरे के बाहर आसानी से निकल सके। इस तरह खाली हुए हवा के स्थान को भरने के लिये खिडकी द्वारा साफ हवा भवन के अन्दर जाती है। इसलिये पशुओ के रहने के भवन मे शुद्ध व ताजी हवा आने के लिये खिडकी उनके सिर के जितनी ऊचाई पर बनाना ठीक रहता है या फिर उनके घास के खाने के स्थान के ठीक ऊपर यानी कि $1\frac{1}{2}$ से $2\frac{1}{2}$' जमीन से ऊचाई पर बनानी चाहिये।

गर्मियो के मौसम मे जब घरो के अन्दर का और बाहर के वायुमण्डल का तापमान एक सा होता है तब इस विधि द्वारा हवा का आदान प्रदान बन्द हो जाता है और गसो के फलाव की इस सामान्य विधि द्वारा भवन मे ठोस कणो के रूप मे पाई जाने वाली अशुद्धिया कम नहीं हो पाती हैं।

(ii) हवा

हवा की सामान्य गति द्वारा भवन के आस-पास और उसके अन्दर पाई जाने वाली ठोस और गस जसी अशुद्धिया वहा से बराबर हटायी जाती रहती हैं। भवन मे बाहर से आने वाली हवा वेन्टीलेशन के सिस्टम के लिए बहुत उपयोगी होती है और इससे दो फायदे हैं। एक तो भवन मे उपलब्ध किसी भी खिडकी द्वारा यह साफ और ताजी हवा अन्दर लाती है वहा की उपलब्ध अशुद्ध हवा के साथ मिलकर उसका तनुकरण करती है और उसे भवन मे उपलब्ध रोशनदान की तरफ धकेल कर बाहर वायुमण्डल मे ले जाती है। इसे हवा का परफ्लेटिंग काय (Perflating action)

कहते हैं। कभी कभी इसके कारण भवन का तापमान एक दम बदल जाता है और बाहर के वायुमण्डल से ठडी हवा के झोके तुरन्त भवन मे आने लगते हैं।

हवा की दूसरी शक्ति से भवन की हवा को रोशनदान से बाहर की तरफ निकाला जाता है। जब हवा भवन के पास अपनी गति से चलती है तो रोशनदान के पास की हवा को भी अपने साथ लेती जाती है इस तरह वहां उपलब्ध गर्म और अशुद्ध हवा बाहर निकलती है और इसका स्थान भरने के लिए भवन के नीचे के भाग से हवा ऊपर की तरफ उठती रहती है। जब भवन के नीचे के हिस्से मे हवा की कमी होती है तो उस स्थान को भरने के लिये खिडकी या दरवाजे से ताजी हवा जल्दी ही भवन मे प्रविष्ट होती है। इस प्रकार प्राकृतिक माध्यम द्वारा हवा अपनी सामान्य गति और गुणो के कारण वेन्टीलेशन का काय सुचारू रूप से चलाने में बहुत सहायक होती है।

(iii) एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने वाली हवा की शक्ति

भवन में उपलब्ध हवा के तापमान म विभिन्नता होने के कारण उसमे कुछ गति बनी रहती है। गम हवा ठडी हवा से हल्की होती है। भवन मे जब हवा कुछ कारणो से गम होती है जस कि सास लेकर छोडने से, शरीर की गर्मी से, मल और मूत्र की गर्मी से या अन्य किसी कारण से तब यह गम हवा फैलती है और हल्की होकर भवन मे ऊपर की तरफ उठती है और ऐसे म अगर उस भवन मे रोशनदान उपलब्ध हो तो यह गम हवा वहा से बाहर निकलती रहती है और इस हवा द्वारा खाली किये गये स्थान को भरने के लिए कमरे म खिडकी द्वारा ताजी व ठडी हवा अन्दर आती रहती है।

वेन्टीलेशन के लिये काय करते हुए हवा का सबसे बडा अवगुण यह है कि उसकी गति का कुछ भी पक्का पता नही रहता है और इसको बनाये रखना बहुत ही मुश्किल होता है।

अगर हवा की गति नही हो तो इसका यह मतलब नहीं कि भवन में हवा का आगमन नही होगा। जब तक भवन के अन्दर का तापमान बाहर के वातावरण से ज्यादा रहेगा तब तक भवन से गन्दी व गम हवा बाहर निकलती रहेगी और इसके स्थान पर ठडी व ताजी हवा भीतर आती रहेगी। मगर यह सब काफी धीमी गति से ही होगा। सर्दी के मौसम मे जब घर के अन्दर और बाहर के तापमान मे काफी फक होता है तब वेन्टीलेशन का यह तरीका बहुत सुचारू रूप से काम करता है।

हवा अन्दर लेने वाले वेन्टीलेटस के नमूने

1 दीवार म लगने वाली खिडकिया (Wall windows) (ए) हापर खिडकी (Hopper window) (बी) क्षितिज धुरी पर घूमने वाली खिडकी (Horizontally centre pivoted window)

2 सीधे हवा अन्दर लाने के लिये नल और बक्स (Direct inlet pipe and boxes)

3 हवा अन्दर लाने के लिये इटें (Air bricks)

4 हिट एण्ड मिस खिडकी (Hit and Miss window)

5 हवा अन्दर लेने के लिये टयूब या फ्लू या टोबिन्स टयूब का उपयोग (Tube or flue inlet or tobins tube)
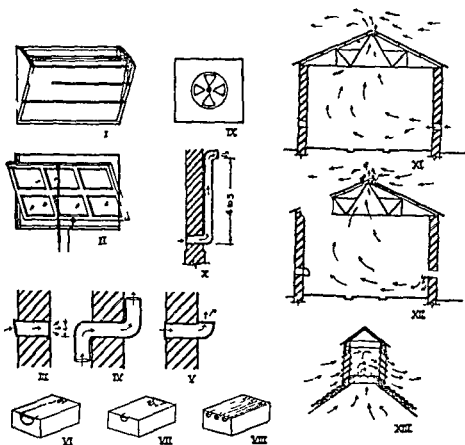
चित्र 4 हवा अन्दर लेने व बाहर निकालने वाले वन्टीलेटर्स के नमूने। (I) हापर खिडकी, (II) क्षितिज धुरी पर घूमने वाली खिडकी, (III) चीनी मिट्टी के नल, (IV) मुडे हुए नल, (V) बक्से (VI से VIII) इटो की किस्मे, (IX) हिट एण्ड मिस खिडकी (X) टयूब या फ्लू (XI) छत की पूरी लम्बाई तक बीचो बीच खुला हुआ रोशनदान, (XII) छत की पूरी लम्बाई तक बीचो बीच खुला हुआ समयोजनशील रोशनदान और (XIII) लेवरे बोर्ड रोशनदान।

1 दीवार मे लगने वाली खिडकिया

हवा अन्दर लेने वाले वेन्टीलेटर्स के नमूने मे हापर (चित्र 4 I) किस्म की

खिडकी सबसे ठीक रहती है। इसके द्वारा भवन म वायु के झोके एक दम अन्दर प्रवेश नही कर पाते। इसके सामने की तरफ काच लगा रहता है, जिससे कमरे म रोशनी की कमी नही रहती है। सामन का काच एक फ्रेम मे जडा रहता है इसे कमरे मे आगे की तरफ झुकाया जा सकता है जिससे कि खराब मौसम म यानी कि बहुत गर्मी या बहुत सर्दी मे अन्दर आने वाली हवा सीधे ही पशु के सिर से नही टकरायेगी। यह हवा काच म 30 या 40° का कोण बना होने के कारण टकराकर कमरे म पशु के सिर क ऊपर स प्रविष्ट होती है और उसके पीछे की तरफ चारो ओर उस तरह फल जाती है जिस तरह कि पखा चलाने पर हवा चारो ओर फलती है। इस तरह की खिडकी के निचले भाग मे कब्जे लगे होते हैं जिसके कारण यह भीतर की ओर खुलती है। इसके बाजू के दोनो किनारो पर रोधक तख्ते लगे होते हैं जिनसे यह खिडकी अन्दर की तरफ गिरने स बची रहती है। हवा अन्दर लेने के लिए यह खिडकी 9'×3 तक खोली जा सकती है।

प्रति व्यक्ति के लिये भवन मे हवा अन्दर लने वाली खिडकी और खराब हवा बाहर निकलने के रोशनदान का कुल 24 वग इच हिस्सा खुला रहना चाहिये, जबकि यह जगह घोडे और गाय के लिय 36 वग इच, सूअर के लिये 3 स 6 वग इच और कुत्ते के लिये 1 से 2 वग इच निश्चित की हुई है। भवन के खुले हुए भागो के लिये हापर किस्म की खिडकिया बहुत ही उपयोगी हैं। लेकिन क्षितिज धुरी पर घूम कर खुलती रहने और बद होती रहने वाली खिडकी (चित्र 4 II) इतनी उपयोगी नही है, क्योकि यह खिडकी भवन के खुले हुए भाग पर नही लगायी जा सकती है और जब हवा की गति तेज हो तब इसे भवन मे लाने के लिये नियत्रित नही किया जा सकता है। इन कारणो स इस प्रकार की खिडकिया अधिकतर समय के लिये बद रखनी पडती हैं।

2 सीधे हवा अन्दर लाने के लिये नल और बक्से

पशु भवन के लिये 4 व्यास के चीनी मिट्टी के बने नल (चित्र 4 III) दीवार मे उपयुक्त स्थान पर लगाये जा सकते हैं। एक नल दो पशुओ के बीच काफी होता है। जिन स्थानो पर हवा की गति हमेशा तेज बनी रहती हो, वहा पर मुडे हुए नल (चित्र 4 IV) का प्रयोग किया जा सकता है। इस तरह के नल के कारण हवा की गति मे रुकावट पदा होती है। कुछ किस्म के बक्से (चित्र4 V) भी इस्तेमाल किये जाते हैं। इनमे हवा का रास्ता छोटा या बडा करने के लिये कपाट लगे रहते हैं। इन कपाटो की सहायता से निर्धारित गति से वायु को कमरे म आने दिया जाता है।

3 हवा अन्दर लाने के लिये इटें

इस किस्म के वेन्टीलेशन के लिये छिद्र युक्त इटें बनाई जाती हैं और फिर उन्हें दीवार के साथ चुन दिया जाता है। ये इटें विभिन्न आकार प्रकार की होती है। कुछ

किस्म की इटें इस तरह बनती हैं कि उनमे बनाये गये छिद्र बाहर दीवार की तरफ तो ईंट से कम ऊचाई पर बनता है और ज्यो ज्यो यह ईंट के अन्दर चलता है इसकी ऊचाई बढती जाती है और भवन के अन्दर की तरफ यह छिद्र काफी ऊचाई पर खुलता है। इस तरह की किस्म के कारण हवा कमरे मे ऊचाई की तरफ बढती है। कुछ किस्म मे, ईंट के बाहरी हिस्से मे छोटा छिद्र होता है और अन्दर की तरफ (चित्र 4 VI) यह बडा होता है, जिससे कि वायु का वेग कम पडता है। जिस स्थान पर वायु की गति कम हो वहा ईंट के बाहरी हिस्से का छिद्र बडा व अन्दर के भाग (चित्र 4 VII) का छिद्र छोटा रखा जाता है ताकि वायु की गति बढ सके।

समानान्तर छिद्र (चित्र 4 VIII) की किस्म वाली इटें भी बनाई जाती हैं और इनका उपयोग फर्श के ठीक ऊपर लगाकर किया जाता है जिससे कि फर्श धुलने के बाद जल्दी ही सूख सके। ईंटो के छिद्रो की समय समय पर सफाई करते रहना चाहिये, क्योकि इनके काफी समय तक लगे रहने के कारण धूल, कचरे और मकडी के जाले इत्यादि से छिद्र आशिक रूप से बन्द हो जाते हैं और वायु जब तीव्र गति से इनमे से निकलती है तो इनमे से सीटी की सी आवाज आने लगती है। ऐसी आवाज से पशुओ को आराम के समय और दूध देने मे काफी विघ्न भी पदा होता है।

4 हिट-एण्ड मिस खिडकी

हिट-एण्ड मिस खिडकी (चित्र 4 IX) के द्वारा वेन्टीलेशन सुचारू रूप से रहता है और रोशनी की कमी नही रहती है। इस किस्म की खिडकी के दो भाग होते हैं। एक भाग तो स्थिर रहता है तथा दूसरा भाग घूमता रहता है। स्थिर भाग काच का बना होता है और इससे रोशनी भी मिलती रहती है। घूमने वाला भाग धातु का बना होता है और इसको घुमाकर कमरे मे लाने के लिये हवा की मात्रा कम या ज्यादा की जा सकती है। घूमने वाले भाग पर एक उभरा हुआ धातु का हिस्सा लगा रहता है, इसके साथ ही चार धातु की पत्तिया लगी रहती है। धातु के घूमने पर पत्तिया भी घूमती हैं और खिडकी के खुले भाग का इसके द्वारा कम या ज्यादा खोला जा सकता है। भवन मे तीव्र गति से आने वाली हवा का इस प्रकार की खिडकी द्वारा ठीक प्रकार नियन्त्रित किया जा सकता है।

5 हवा अन्दर लेने के लिये ट्यूब या फ्लू या टोबिन्सटयूब का उपयोग

इस प्रकार के वेन्टीलेटर धातु के बने 4 से 5' ऊचाई के एल (L) के आकार (चित्र 4 X) के नल होते हैं। इसके नीचे का लम्बा वाला भाग भवन के बाहर की तरफ रहता है तथा इस भाग द्वारा हवा ग्रहण की जाती है। नल के ऊपर वाला यानी कि वह भाग जिससे हवा निकलती है भवन के अन्दर की तरफ रहता है। ठड के मौसम मे हवा बहुत ही ठडी होती है, इस ठडी हवा को एल के आकार वाले नल

द्वारा भवन मे आन दिया जाता है । ज्यो ज्यो हवा नल के ऊपरी भाग म आती है यह गम होती जाती है । धातु क नल कमरे की गम हवा के कारण खुद गम होते है तथा उसमे बहन वाली हवा भी कमर के अन्दर गिरन स पहल काफी गम हो जाती है और इस तरह कमरे के वातावरण का तापमान एकदम नही बदलता है और वहा रहने वाल पशुओ को शुद्ध व ताजी हवा बराबर मिलती रहती है ।

एल आकार के य नल किंग तरीके के वेन्टीलेशन मे भी लगाए जात हैं। इस विधि द्वारा नल म आन वाली हवा को कपडे या रूई के द्वारा छान कर भवन के भीतर लिया जा सकता है । सर्दी क मौसम मे जब लोग अक्सर अपने और पशु के घरो को ठडी हवा से बचाने के लिए खिडकिया या दरवाजे बन्द रखत हैं वहा इस तरह के एल आकार के नल लगाकर वन्टीलेशन को सुचारु रूप से बिना किसी प्रकार की हानि से चलाया जा सकता है ।

हवा बाहर फेंकने वाले वेन्टीलेटस के नमूने

(1) छत की पूरी लम्बाई तक बीचो–बीच खुला हुआ कुछ भाग (Continuous ridge opening

(2) छत की पूरी लम्बाई तक बीचो बीच खुला हुआ समायोजनशील भाग (Adjustable ridge opening)

(3) चीनी मिट्टी से बने रोशनदान (Fireclay ridge outlets)

(4) लेवरे बोड रोशनदान (Louvre board ventilators)

(5) लम्बे नलो वाला रोशनदान (Outlet Shaft)

1 छत की पूरी लम्बाई तक बीचो बीच खुला हुआ कुछ भाग

इस वेन्टीलेटर क नाम स ही साफ जाहिर होता है कि छत की पूरी लम्बाई तक कुछ खुला हुआ भाग मौजूद रहता है (चित्र 4 XI) । इस प्रकार के रोशनदान से गन्दी हवा की निकासी और रोशनी दोनो ही काम सुचारु रूप से होत रहत हैं। गायो के रहन वाले बाडा क लिये इस प्रकार का रोशनदान उपयुक्त रहता है । बाडा मे जो गम और गन्दी हवा छत की तरफ बढती है, वह बाडो म बने रोशनदान क पास से गुजरने वाली हवा द्वारा बाहर की तरफ खिचती रहती है । इस प्रकार के रोशनदान का उपयोग एक मजिल के भवनो म ही सम्भव हो सकता है । यह रोशनदान काफी सस्ता और साथ म उपयोगी भी है इसके लिए छत म 4 से 6" चौडा भाग खुला रखा जाता है जिसम स हर समय घर की गन्दी हवा बाहर की ओर निकलती रहती है ।

2 छत की पूरी लम्बाई तक बीचो बीच खुला हुआ समायोजनशील भाग

यह रोशनदान ऊपर दी गयी विधि का एक उन्नत रूप है । यह सिफ एक

मजिल के भवन के लिए ही उपयोगी है। इसे फिण्डले (Findly) विधि भी कहते हैं। इस विधि मे भवन की छत लम्बाई मे बीचो–बीच ऊपर की ओर खुलती है (चित्र 4 XII) और इसमे लकडी या धातु की पट्टी लगी रहती है। इसको छत पर कब्जो की सहायता से लगाया जाता है, जिससे लीवर द्वारा इनके कोण कम या ज्यादा किये जा सकते हैं। इस विधि म वेन्टीलेशन के लिए छत पर 1 फुट 8 इच भाग खुला रखा जाता है। इस रोशनदान द्वारा गन्दी हवा बाहर निकलती रहती है और साथ ही रोशनी भी मिलती है। लकडी या धातु की पट्टी मे कोण रहन के कारण जब बाहर की हवा इससे टकराकर ऊपर उठती है तब वह अपने साथ रोशनदान के मुह पर रहने वाली अशुद्ध व गम हवा को साथ खीचकर ले जाती है।

3 चीनी मिट्टी से बने रोशनदान

चीनी मिट्टी से कुछ किस्म के रोशनदान बनाये जाते हैं। ये काफी सरल होते है और किसी भी पुराने ढग के बने मकान के लिए ही उपयुक्त रहते हैं। ये सीधे या टी (T) के आकार की चिमनी के समान होते हैं। रोशनदान के लिये इस किस्म के वेन्टीलेटर उपयोगी नही रहते हैं।

4 लेवरे-बोर्ड रोशनदान

यह रोशनदान एक प्रकार का ढका हुआ फ्रेम या बक्सा (चित्र 4 XIII) हाता है जो छत पर उचित स्थान पर लगाया जाता है। बक्से के दोनों ओर एक के ऊपर एक ढलुआ तख्ते या धातु या काच की पट्टिया बराबर फासले पर इस प्रकार लगा दी जाती है कि इससे गन्दी हवा तो बाहर जा सके किन्तु वर्षा का पानी इसके द्वारा भवन के अन्दर नही आ सके। इन लेवरे–तख्तो को क्षितिज तल से 50 या 60 अश के कोण बनाते हुए लगाना चाहिये। हाथ से लेवरो का कोण बदल सकने वाले लेवरो का उपयोग नही करना चाहिये क्योकि हर बार वायु की गति बदलत रहने पर इसके उपयोग मे असावधानी रह सकती है और इस कारण ये अनुपयोगी सिद्ध हो सकते है।

5 लम्बे नलो वाला रोशनदान

इस रीति द्वारा धातु के बने आयताकार या गाल आकार के नलो द्वारा घरो से दूषित हवा बाहर निकाली जाती है। यह दो मजिले भवन के लिये या ऐसे भवन के लिये जिसमे किसी दूसरे प्रकार का राशनदान न लगाया जा सके, काफी उपयोगी होता है। इस विधि मे नल की लम्बाई ज्यादा रखनी ठीक रहती है। नल मे कही भी मोड आ जाने के कारण उसमे हवा का प्रवाह कम पड जाता है और इसे सुधारने के लिए मोड पर नल का व्यास अधिक कर देना उचित रहता है। छत के ऊपर खुली हवा म नल का सिफ 2 फुट भाग ही खुला रहना चाहिये अगर यह भाग इससे ज्यादा हागा तो ठड के मौसम मे नल की हवा ठडी हो जाने के कारण भारी होकर फिर से भवन में लौट आयेगी।

(बी) कृत्रिम या मशीनों द्वारा सचालित वेन्टीलेशन

किसी भी भवन म जब प्राकृतिक वेन्टीलेशन ठीक ढग से काम नहीं करे तब वहां कृत्रिम वेन्टीलेशन का उपयोग किया जाना चाहिये। इस वेन्टीलेशन की दो विधियां हैं। एक विधि प्लिनम (Plenum) है, जिसमे ठडी या गम हवा किसी भी भवन में नलो की सहायता से पखा द्वारा प्रवाहित की जाती है। दूसरी विधि जिसमे किसी भवन से हवा को पखों द्वारा खीच कर (Vacuume or extraction) बाहर निकाली जाती है और इस खाली स्थान को भरने के लिए साफ हवा भवन म प्रवेश करती है। यह विधि पहले दी गई विधि से ज्यादा उपयोगी है। कृत्रिम वेन्टीलेशन विधि खानो (Mines), कुक्कुट पालन की अन्त गृह प्रणाली (Intensive Poultry farming), पशुघरो और पशुओं को ले जाने वाले जलयानों के लिए बहुत उपयोगी है। जलयानों की खिडकी मे हवा अन्दर लने के लिए एक पखा लगाया जाता है तथा दूसरा पखा रोशनदान पर गन्दी हवा को बाहर निकालने के लिए लगाया जाता है। एक अच्छे वेन्टीलेशन के लिए यह जरूरी है कि किसी भी भवन मे साफ हवा लगातार आती रहे और अशुद्ध हवा लगातार बाहर निकलती रहे, लेकिन साफ हवा के लिये स्वच्छ वातावरण का होना भी जरूरी है।

खराब वेन्टीलेशन के कुप्रभाव

जो घर प्राय बद रहते हैं वहा पर रहने वाले लोगो मे रोगो से प्रतिरोध करते रहने की शारीरिक क्षमता पर बुरा असर पडता है और इस कारण उनमे बीमारी होने की सम्भावनाए बनी रहती हैं। खराब वेन्टीलेशन के कारण नवजात शिशुओं की सेहत पर बुरा असर पडता है और उनमे मृत्यु दर भी अधिक होती है। खराब वेन्टीलेशन वाले भवन मे या जिस भवन म जगह से ज्यादा लोग इकट्ठे हो तो वहां उन लोगो म उल्टी होना चक्कर आना, बेहोशी और सिर दद आदि की शिकायत रहती है। जब ऐसे भवन मे कोई ज्यादा समय तक ठहरता है तब उसमे भूख न लगना, सुस्ती आना, अपच और शरीर का तापक्रम बढना आदि की शिकायत रहती है। इसके कारण शरीर की बीमारियो स सामना करने की क्षमता क्षीण होती है और उन्ह शीघ्र ही जुकाम कफ, न्युमोनिया, एन्फ्लुएन्ज़ा और क्षय आदि रोग घर दबाते हैं।

प्रकाश

दिन म मिलने वाला प्राकृतिक प्रकाश मनुष्य तथा पशु दोनो के स्वास्थ्य और समृद्धि के लिये फायदेमन्द होता है। कम उम्र के पशु विटामिन डी (D) का सश्लेषण कर सकें इसलिये उन्हें धूप की पर्याप्त मात्रा उपलब्ध करानी चाहिये। जिन छोटी उम्र के पशुओ को अधेरे और ज्यादा आर्द्रता वाले भवनो मे रखा जाता है उनमे बीमारी और मृत्यु की दर ज्यादा रहती है। ठीक से देखने के लिये अच्छी रोशनी की जरूरत रहती है।

प्राकृतिक और कृत्रिम प्रकाश के असर –

1 कारखानो मे अक्सर यह देखा गया है कि मनुष्यो मे प्राकृतिक प्रकाश की अपेक्षा कृत्रिम प्रकाश मे काय करने की क्षमता ज्यादा रहती है, यद्यपि दोनो विधियो मे प्रकाश की तीव्रता लगभग सामान्य रहती है।

2 प्राकृतिक प्रकाश की दूरी और तीव्रता का पशुओ और पक्षियो के प्रजनन चक्र से काफी सबध रहता है। प्रकाश की जितनी मात्रा मुर्गियो का मिलती है उससे उनके अण्डा-उत्पादन पर काफी असर पडता है। प्रकाश की किरणो के कारण मुर्गियो मे पीटूटरी ग्रन्थि (Pituitary gland) से फोलिकल (Follicle) पदा करने वाला हार्मोन (Harmone) उत्पन्न होता है जिससे अडो का उत्पादन बढता है। ऊट, बकरी और भेड को दिन का प्रकाश कम मिलने के कारण उनमे मैथुन ऋतु (Sexual Season) का प्रारम्भ होता है।

3 सर्दी के मौसम मे अधिकतम अडो के उत्पादन के लिये मुर्गियो को कुल 13 या 14 घण्टो तक प्रकाश की जरूरत रहती है, यह समय दिन के प्रकाश और उसके बाद कृत्रिम प्रकाश की व्यवस्था करके पूरा किया जाता है।

4 प्रकाश के कारण भवन को साफ सुथरा रखने मे सुविधा रहती है। भवन मे प्रकाश और अच्छी साफ सफाई बनाये रखने के लिये छत और दीवार को सफेद रखना चाहिये।

5 सूय के प्रकाश मे सूक्ष्म जीवाणुओ का मारने की शक्ति रहती है जो कि उसमे रहने वाले अल्ट्रा वायलेट किरणो और गर्मी के कारण जीवाणुओं के अन्दर से पानी को उडा सकने की क्षमता के कारण होती है। क्षय रोग, स्ट्रेप्टोकोकाई तथा स्टेफिलोकोकाइ जीवाणु, सूय के प्रकाश की किरणो के सीधे असर के कारण कुछ ही घटो म समाप्त हो जाते है।

6 प्रकाश का सीधा असर शरीर का तापक्रम बनाये रखने, शारीरिक काय क्षमता और भूख पर होता है।

पशुशालाओं के लिये प्रकाश की व्यवस्था

पशुशालाओ को इस ढग से बनाया जाना चाहिये कि वहा दिन का प्राकृतिक प्रकाश ज्यादा से ज्यादा समय तक उपलब्ध हो। गायो के बाडे मे दूध निकालने के लिये प्रकाश की मात्रा का पूरा होना बहुत आवश्यक है। छत पर रोशनदान बना कर पशुघरो के लिये प्राकृतिक प्रकाश का पूरा उपयोग किया जा सकता है। जिन बाडो मे गायो को दो कतारो मे रखा जाता है तथा उनके मुह खिडकियो की तरफ हो तो, ऐसे मे दीवार पर प्रकाश का किया गया प्रबध बिल्कुल ठीक नही रहता है, इसलिये ऐसे भवनो मे छत पर रोशनदान बना कर प्रकाश की व्यवस्था करनी चाहिये। भवन म खिडकिया या तो उत्तर या पूरब दिशा मे लगानी ठीक रहती

है। इसके कारण सूय की रोशनी पशुओ पर सीधी नही गिरेगी। प्रकाश की अच्छी व्यवस्था के लिये हर पशु गृह मे हापर किस्म की खिडकी लगानी ठीक रहती है।

पशुशालाओं में प्रकाश के लिये लगाये जाने वाले काच का न्यूनतम क्षत्रफल –

गौशालाए – प्रत्येक गाय के प्रकाश के लिये छत मे 4 वग फुट का स्थान होना चाहिए।

बछडो के घर के लिये – 4 × 3' जगह प्रति बछडा घर के लिये होनी चाहिये यह व्यवस्था हापर खिडकी द्वारा या फिर छत पर 50 × 60 वग इच जगह करके की जा सकती है।

अस्तबल – दो घोडो के लिए छत मे 4 वग फीट काच लगाकर प्रकाश की व्यवस्था करें अथवा दीवार मे 12 वग फीट की खिडकी लगावें।

सूअर के लिये – एक सूअर के लिये 50 वग इच छत द्वारा प्रकाश दिया जाये या फिर एक वग फीट आकार की खिडकी दीवार मे लगावें।

कुक्कुटशालाए – प्रति मुर्गी 0 5 वग फीट स्थान द्वारा प्रकाश की व्यवस्था करें।

कृत्रिम प्रकाश की व्यवस्था

कृत्रिम प्रकाश की अच्छी व्यवस्था के लिये निम्न विशेषताए होनी चाहिये।

(ए) वह पर्याप्त मात्रा मे उपलब्ध हो।

(ब) प्रकाश मे स्थिरता हो और वह सभी जगह एक समान फैला हुआ होना चाहिये।

(सी) वह आखो को चकाचौंध न कर।

(डी) प्रकाश की व्यवस्था ऐसी जगह हो जिससे काय करने के स्थान पर परछाई न पडे।

बिजली के प्रकाश का उपयोग पशुघरो के लिये बहुत उपयुक्त रहता है। यह साफ होता है क्योंकि इस के द्वारा वायुमण्डल मे कुछ भी बदलाव नही आता है और प्रकाश के स्रोत को सुविधा के अनुसार किसी भी स्थान पर लगाया जा सकता है। ऐसे प्रकाश के कारण काय क्षमता मे वृद्धि होती है और पशुगृह साफ सुथरा रहता है। जिस पशुघर म 12 गायें हो वहा दो बल्ब सामने की दीवार पर और तीन बल्ब पीछे की दीवार पर लगाने चाहियें। इसके लिये 60 या 100 वाट का बल्ब लगाना ठीक रहता है। फ्लोरसेन्ट (Fluorescent) प्रकाश की व्यवस्था करनी ठीक रहती है, क्योंकि इसम खच कम आता है। यह गर्मी पदा नही करती है और इसस उपलब्ध होने वाले प्रकाश का रग दिन के प्राकृतिक प्रकाश के रग जसा ही होता है। कोल गस (Coal gas) का प्रकाश काफी उपयोगी रहता है, मगर इससे गर्मी

निक्लना, गसो की उत्पत्ति, और आग लगना जैसे अवगुण होने के कारण उसे ज्यादा काम मे नही लिया जा सकता है।

ऊपर दी गयी दोनो सुविधाओ के उपलब्ध नही होने पर एसिटिलिन गस, पेट्रोल गस या पेराफिन तेल के लैम्पो का उपयोग किया जा सकता है। दूध उत्पादन के स्थानो पर लालटेन को काम मे लेना ठीक नही रहता हैं। इससे दूध की स्वच्छता बनाये रखने मे विघ्न होता है। दूसरी कोई व्यवस्था उपलब्ध न होने पर पेराफिन का लम्प काम मे लेना ठीक रहता है।

3

स्वच्छता

स्यूऐज इकट्ठा करना, हटाना और उसका निस्तारण करना

पानी हवा और खाने की वस्तुओ का प्रदूषण मनुष्यो पशुओ और कारखानों के स्यूऐज के कारण होता है और भारत जैसे देश के लिये यह विषय विशेष अहमियत रखता है। जब तक स्यूऐज को ठीक तरह से इकटठा नही किया जायेगा और फिर उसे वहा से हटा कर सही ढग से निस्तारित नही किया जायेगा तब तक खाना हवा तथा पानी आदि का प्रदूषण होता रहेगा और इसके कारण मनुष्यो और पशुओं म बीमारिया फलती रहेगी। स्यूऐज का ठीक ढग से निस्तारण नही होने के कारण पीने के पानी के स्रोतो का सदूषण होता है और प्रदूषण की समस्या गावो से शहरो और शहरो से गावो मे पहुचती रहती है। भारत मे पानी के प्रदूषण के कारण नगरों शहरो और गावो मे रहने वाले लोग दूषित पानी पीने पर एक प्रकार के दस्त के रोग से पीडित होते रहते हैं। घरो और कारखानो से निकलते रहने वाले स्यूऐज का सही ढग से निस्तारण नही हो सकने के कारण इनम पायी जाने वाली बीमारी के जीवाणु और विपले पदाथ मनुष्यो और पशुओ के खाने की वस्तुओ पानी और दूध तक पहुच कर उसका सदूषण करते हैं। वसे तो सूय की किरणो मे जीवाणुओ को मारने की क्षमता होती है लेकिन किन्ही कारणो से कुछ जीवाणु सूय की गर्मी से बचे रह जाते हैं और ये उसकी किरणो से नहीं मरते हैं। इस कारण ये रोग पदा कर सकने वाले जीवाणु हवा पानी और खाने की वस्तुओ द्वारा फल कर मनुष्यो और पशुओ म रोग पदा करते रहते हैं।

किसी भी नगर शहर या गाव को प्रदूषण की समस्या से तब तक मुक्त नही कराया जा सकता है जब तक कि वहा के घरो और कारखानो के स्यूऐज और विषले पदार्थों को कडाई का रुख अपनाते हुए और सही वज्ञानिक तरीके से इक्ट्ठा करके, हटाकर और फिर ठीक ढग से उनका निस्तारण न कर देवें। स्यूऐज का ठीक ढग से उपचार करने के पश्चात् किसान उसे खेती के काम मे ले सकता है और इस तरह करने से उसकी माली हालत म बहुत उन्नति होनी है। यदि बिना उपचार किये हुए स्यूऐज से खेती की जाय तो उसस किसान के खेत भी खराब होते हैं और मनुष्यो पशुओ और पौधो आदि की जान तक जा सकती है।

स्वच्छता

वातावरण की स्वच्छता आसपास की सफाई के बारे मे ज्ञान कराती है। यह स्वास्थ्य पर नियन्त्रण रखती है। अस्वच्छता के कारण बीमारी या कुछ भी गडबड उत्पन्न हो सकती है। स्वच्छ वातावरण के कारण मक्खियो और शरीर पर रहने वाले बाह्य परजीवियो जैसी जटिल समस्याओ पर भी काबू पाया जा सकता है। स्वच्छता के कारण पशुओ से उत्पादित मास, अण्डे और दूध आदि को सदूषित होने से बचाया जाता है और बाजार मे इनके अच्छे दाम मिलते है।

स्वच्छता का उद्देश्य यह है कि निरथक पदार्थों का जल्दी और सही तरीके से निस्तारण हो, जिसके कारण बीमारिया सीधे सम्पक या किसी मध्यवर्ती परपोषी द्वारा नही फलने पाए। पानी के प्रदूषण के कई कारण हो सकते है। अत यह सबसे जरूरी है कि नालियो का रखरखाव और उसमे बहने वाले ग दे पानी का निस्तारण सही तरीके से हो। किसी एक घर से गदा पानी नल द्वारा ले जाया जाये तो उसे नाली कहते है जबकि जो नल दो या उसमे ज्यादा नलो का गदा पानी ले जाये तो उसे स्यूवर (Sewer) कहते है।

मनुष्यो या पशु आवासगहो से गदे पानी की निकास-प्रणाली के लिये कुछ सिद्धान्त —

1 नल वाछनीय पदाथ का बना हुआ होना चाहिये। गदे पानी से फलने वाले प्रदूषण को रोकने के लिये नल से किसी प्रकार का रिसाव न हो और उसके जोड से पानी गसें या हवा नही निकलनी चाहिये। नल इतना मजबूत होना चाहिये कि उसमे होने वाले रिसाव का पता लगाने के लिये उस पर पानी, हवा और गम का परीक्षण सही ढग से किया जा सके।

2 नल का व्यास 4" होना चाहिये जबकि नल बिछाते समय हर 60 लम्बाई तक 1" के ढलान का प्रावधान रखना चाहिये।

3 नल को सीधी लाइन मे ही बिछाए और मोड पर समकोणीय जोड डालें। नल को मुख्य स्यूवर लाइन से जोडते समय ख्याल रखें कि उसके जोड का कोण इस तरह हो कि उसमे से मुख्य स्यूवर मे मिलने वाला पानी कुछ भी रुकावट न डालने पाये। नलो के जक्शन पर परीक्षण कक्ष जरूर होना चाहिये।

4 भवन के नीचे से पानी के निकास की व्यवस्था के लिय नल उसके नीचे से नही ले जाने चाहिये। अगर नल बिछाने की कोई दूसरी व्यवस्था न हो तो उन्हे सीधा बिछावें तथा वे ढलाऊ लोहे के होने चाहिये। इसकी सुचारु व्यवस्था के लिये नल के चारो और सीमेट और ककरीट की 4' की तह बनावें।

5 वर्षा के पानी की निकासी हेतु अलग से नल की व्यवस्था करें।

6 नाली और स्यूवर के बीच म ट्रेप (Trap) की व्यवस्था करें।

7 जिस नाली द्वारा स्यूऐज का पानी ले जाया जा रहा हो उसमे वेन्टीलेशन के लिये नल जरूर लगाना चाहिये जिससे कि उसमे उत्पन्न होने वाली खराब गैसें वायुमण्डल मे प्रवाहित हो सकें।

8 गंदे पानी को ले जाने वाले नल की भीतरी सतह समतल होनी चाहिये जिससे उसमे बहने वाले ठोस पदार्थ बिना रुकावट के बह सकें।

नलों की किस्में, ढाल और आकार (Pipes-Materials, Gradient and Size) –

किसी भी भवन से गंदे पानी की निकासी के लिये ढलवा लोहे, पत्थर, मिट्टी, सीमेंट कंकरीट तथा चीनी मिट्टी के अग्निसह द्वारा तैयार किये गये या किसी अन्य पदार्थ के बने नल काम मे लिये जा सकते हैं। उनकी लम्बाई 2 से 6' तक हो सकती है। नलों की मोटाई कम से कम $\frac{3}{16}$ से $\frac{1}{4}$" होनी चाहिये। ये नल मजबूत होने चाहिये, उनसे पानी नही रिसना चाहिये और उनकी अन्दर की सतह समतल होनी चाहिये। नल पर अम्ल और क्षारयुक्त गंदे पानी का कुछ भी असर नही होना चाहिये। नल के मुंह का और पिछला हिस्सा बिना पालिश का तथा खुरदरा हो तो उनको जोड़ने मे बहुत सुविधा रहती है क्योंकि ऐसे नलों मे सीमेंट लगाने पर जोड़ मे से पानी का रिसाव बिल्कुल नही होता।

नल भूमि मे बिछाते समय ढाल उसके व्यास से दस गुणा ज्यादा देना ठीक रहता है जैसे कि यदि नल एक चौथाई भरे हुए चलते हो तो 4" के पाइप मे 40 पर एक इन्च का ढाल होना चाहिये और 6' के पाईप में 60' पर एक इन्च का ढाल होना चाहिये। स्यूवर को समय समय पर पानी प्रवाहित करके साफ रखना चाहिये जिससे कि उसमे कचरा जमा न हो सके। गायों के बाड़े के लिये 4" व्यास का नल लगाना ठीक रहता है। नलों में प्रवाहित होने वाले पानी की गति 2 से 3' प्रति सैकण्ड पर्याप्त होती है।

जहां तक सम्भव हो नल सीधी लाइन में ही बिछवाना चाहिये किन्तु जब मोड़ आ जाये और नल को सीधा ले जाना सम्भव न हो तब ऐसी स्थिति में मुड़े हुए नल बैण्ड का उपयोग करना चाहिये। जंक्शन भी ठीक ढंग से बनाना चाहिये जिससे उसमे आने वाला स्यूऐज का पानी बिना किसी रुकावट के बड़े स्यूवर नल मे मिलकर प्रवाहित हो सके। समकोण पर बनाये गये स्यूवर, नल में कभी भी रुकावट पैदा कर सकते हैं। इसके कारण पानी आपस में टकराता है और बहाव मे रुकावट पैदा होती है जिससे नल में कचरा इकट्ठा होने लगता है और कुछ समय बाद नल बिल्कुल अवरुद्ध हो जाता है। जंक्शन पर हमेशा निरीक्षण कक्ष बनाना जरूरी होता है।

ट्रैप (Trap)

यह एक प्रकार का ऐसा साधन है जिससे स्यूवर नलो मे बनी हुई गसें फिर से घरो के नल म प्रविष्ट नही हो पाती हैं। इसे घरो के नल और स्यूवर नल के बीच मे लगाया जाता है। ट्रैप की काय क्षमता उसके मुडे हुए भाग या लिप (Lip) पर आधारित रहती है और यह भाग हमेशा पानी मे डूबा हुआ रहता है। लिप पानी मे कम से कम 2" तक डूबा रहना चाहिये। इसके कारण पानी की एक पूण सील बन जाती है जिससे स्यूऐर नलो से लौट कर आने वाली गमें आगे प्रवाहित नही हो पाती और बाह्य परजीवी तथा चूहे आदि घर म प्रवेश नही कर पाते। ट्रैप की रचना सरल होनी चाहिये तथा उसमे भीतर की ओर उठे हुए भाग या कही भी किनारे निकले हुए न हो। ट्रप स्वय ही साफ होता रहता है जिससे जल का सामान्य प्रवाह भी ट्रैप मे रुके हुए जल को बदलता रहता है और पीछे कुछ भी कचरा नही बचता। इसका आधार वर्गाकार होना चाहिये जिससे इसे जमीन पर आसानी से लगाया जा सके। इसके सभी भाग पूणत जुडे हुए होने चाहिएँ। नल म पानी पर पूण दवाव रह इसलिय उसमे घर की तरफ वाले हिस्से म हवा आने के लिये कुछ भाग खुला हुआ होना चाहिय। स्यूवर के नल की तरफ भी एक छेद वेन्टीलेशन के लिये खुला रहना चाहिये। यह पानी पर दबाव कायम रखता है और साथ ही उसके द्वारा नल मे आयी हुई रुकावट का भी किसी तार या बास पटटी के द्वारा दूर किया जा सकता है।

बूकन रोधक साइफन ट्रैप (Buchan's Intercepting Syphon Trap)

यह एक अत्यन्त प्रभावशाली ट्रप है। इसके अन्दर की सतह एकदम समतल हाती है और इसम किसी भी तरह की रुकावट पदा नही होती ह। इस ट्रप की सील बहुत सक्षम होती है तथा इसमे ताजी हवा और वेन्टीलेशन का प्रावधान रहता है। इस ट्रप मे पानी और मल तजी से प्रविष्ट होता है, लेकिन निकासी धीरे धीरे होती है। इसका उपयोग मनुष्यो के लिये उनके घरो मे उनके स्वास्थ्य की सुरक्षा के लिये अत्यन्त लाभदायी है। क्योकि इसके द्वारा मल मूत्र और गदा पानी बिना किसी बाधा के हटा दिया जाता है।

गुली ट्रैप (Gully Trap)

पशु शालाओ के लिये गुली ट्रप का उपयोग किया जाता है। पशुओ के मल मूत्र आदि किसान के लिये काफी कीमती होते हैं और खेती बाडी सबधी अधिकाश सफलता एक सीमा तक इनके समुचित उपयोग पर निभर करती है। इन दोनो का एक ही नल द्वारा निकास नही किया जा सकता। क्योकि मल द्वारा नलो मे शीघ्र ही रुकावट उत्पन्न हो जाती है। मल को घर की मुख्य नाली से समय समय पर हटाया जाता है। मगर कभी कभी मल का कुछ भाग मूत्र के साथ या फश को धोते समय

पानी के प्रवाह के साथ स्यूवर नाली मे भी जा सकता है। इसलिये गुली ट्रप लगाकर स्यूवर मे प्रवाहित होने वाले पशुओ के मल को ट्रप की जाली या फिर उसमें रखे बतन मे इकट्ठा करके समय समय पर हटा लिया जाता है। सामान्य किस्म के गुली ट्रैप जस दुहरी सील वाले गुली ट्रप (Double Seal Gully Trap) और लिण्टन गुली ट्रप (Linton's Gully Trap) हैं जो कि चित्र 5 में दर्शाये गये हैं।
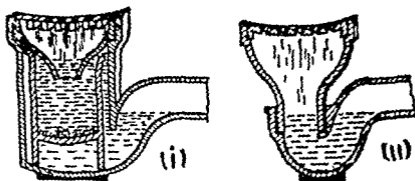
चित्र 5 गुली ट्रैप। (i) दुहरी सील ट्रप और (ii) लिण्टन गुली ट्रैप।

स्यूवर नालियों की जांच

स्यूवर नलो द्वारा भूमि और पीने के पानी के स्रोतो को प्रदूषित होने से बचाने के लिय उसके निर्माण होने के तुरन्त बाद उसकी कार्य-कुशलता या फिर समय समय पर उसमे से होते रहने वाले रिसाव के लिये जांच करते रहना चाहिये। कभी-कभी पानी म बाढ आने या स्यूवर के पानी का पीने के पानी के स्रोतो मे मिलने से पानी म रोगो के जीवाणु आ जाते हैं और इस कारण बहुत से रोग तेजी से फलते हैं। ऐसे पानी स फैलने वाले रोगो से बचने के लिये नालियों की जाच नीचे दी गयी विधियों द्वारा की जाती है —

1 जल शक्ति द्वारा जाच

यह विधि बहुत सतोषजनक है। नाली के आखिरी छोर पर रबर के थने को बाध दिया जाता है और नालियो के बाकी सभी छोरो को डाट लगा कर बन्द कर देते हैं। परीक्षण स्थल के पास लगी नाली को भूमि से 8' ऊचाई तक ले जाते हैं और उसम 6' तक पानी भरते हैं। इस पर निशान लगा कर 2 से 3 घटे के लिये छोड दिया जाता है। इसमे पानी भरत समय यह ख्याल रखा जाता है कि नल मे कही भी हवा रुकी हुई न रह जाये। पानी के दबाव से रबर का थला फूल जाता है और कही भी रिसाव न हो तो पानी के स्तर म कुछ भी कमी नही आती है।

2 हवा और धुए द्वारा जांच

नालिया और वेन्टीलेटर के खुले हुए सभी नलो को डाट लगा कर बन्द करके उसम निश्चित दाब तक की हवा भरते हैं जिसे दाबमापक की सहायता से मापा

जाता है। अगर दाबमापक में दाब स्थिर न रह कर गिरने लगे तो यह स्यूवर नल में रिसाव का होना दरसाता है। नल में रिसाव को धुए की विधि द्वारा भी जाचा जाता है। इसके लिये नल मे गहरे सफेद धुए को भरा जाता है। नल को डाट द्वारा बन्द करके उस पर दबाव डाला जाता है। नालियो और ट्रैप सील की जाच के लिये ½ औंस प्रति वर्ग इच वायु दवाव उत्पन्न करने वाले पम्प की सहायता ली जाती है। यदि नालियो मे कही भी रिसाव हो तो वहा से धुआ निकलने लगेगा और इस प्रकार नल के उस स्थान को ठीक करके भूमि और पानी को सदूषित होने से बचाया जा सकता है।

3 रंगीन पानी द्वारा जांच

इस विधि द्वारा गन्दे पानी की नालियों मे पदा होने वाली त्रुटि और पानी को प्रदूषित करने वाले स्रोत आदि का पता बडी ही निपुणता से लगाया जाता है। पानी मे फ्लोरेसिन (Fluorescein) पदार्थ मिलाकर नालियो मे भरा जाता है। इस पदार्थ को पानी मे मिलाने पर उसका रग हरा चमकीला हो जाता है। नालियो के रिसाव के कारण वहा यह हरा चमकीला रग आसानी से नजर आ जाता है और इस तरह नाली मे उत्पन्न हुई खराबी को शीघ्र ही ठीक किया जा सकता है।

4 रसायनों द्वारा जांच

एक बाल्टी मे पानी लेकर उसमे पिपरमिन्ट का तेल मिलाते हैं। इस तैयार किये गये घोल को मुख्य नाली मे डालते हैं। अगर किसी जगह नल मे छेद होगा तो पानी वहा से रिस कर बाहर निकलेगा और उस स्थान पर पिपरमिन्ट की गन्ध आने लगेगी।

गन्दे पानी के नल मे फासफोरस और हीग एक साथ डालते हैं। इनके मिलने पर विस्फोट होता है और नल मे सफेद धुआ पदा होता है। जिसमे हीग की तीव्र गध होती है। इस धुए को नल मे प्रवाहित होने दिया जाता है और नल मे कही भी छेद आदि होने पर उस स्थान से धुआ बाहर निकलने लगेगा और वहा हीग की गध आने लगेगी।

भूमि पर पानी और मैले की निकास प्रणाली

इस विधि को अपनाने मे खर्च कम आता है। ज्यादातर इसे गावो मे अपनाया जाता है क्योकि वहा पर भूमिगत स्यूवर का इन्तजाम नही होता है। लेकिन यह ख्याल रहे कि भूमि के ऊपर बनायी गयी मोरिया पानी के स्रोतो से दूर होनी चाहिए। अक्सर यह विधि उस जगह अपनायी जाती है जहा पर पानी कम उपलब्ध हो और मले की मात्रा ज्यादा हो। इस प्रणाली मे कोई खास सामान की जरूरत नही रहती है लेकिन इसमे मोरिया खुली रहती हैं इसलिये इस विधि को स्वास्थ्य के लिए हानिकारक माना जाता है। भूमि पर नालियो मे बहने वाला पानी जमीन द्वारा सोख लिया जाता है और इसके कारण हवा, भूमि और भूमिगत पानी का सदूषण

होता रहता है। नालिया हमेशा पक्की ही बनाई जानी चाहिये जिससे कि पानी का रिसाव न होने पावे। मोरी की चौडाई भी जरूरत के मुताबिक पूरी होनी चाहिये जिससे ग दा पानी बिना रुकावट बहता रहे और भूमि का सदूषण नही होने पावे।

हर घर से निकलने वाले गन्दे पानी को मोटे पदार्थों की परत बिछाकर छा"ा जाता है। अगर कही पर मोरिया नही हो तो स्यूलेज (Sullage) को खाई मे भर कर साफ किया जाता है। इसके लिये एक ठीक आकार की खाई बनायी जाती है और उसके पदे को पत्थरो के टुकडो से भरा जाता है तथा उसके ऊपर रत रखी जाती है। इस खाई म सबसे ऊपर 6 तक महीन रेत भरी जाती है। सबसे ऊपर डाली गयी रेत को जमाये रखने के लिये उस पर पत्थर के टुकडे जमाते हैं या फिर उस पर एक छिद्रयुक्त धातु का ढक्कन रख देते है। खाई की गहराई 18' से ज्यादा नही रखनी चाहिये और अगर जरूरत हो तो उसकी चौडाई बढाई जा सकती है। स्यूलेज के पानी को साफ करने के लिये उसे मोरी द्वारा खाई पर लाया जाता है। खाई से साफ होकर निकलने वाले पानी को खेती वाडी के काम म लिया जा सकता है।

पशुशालाओं के लिये भूमि और भूमिगत मोरियां

पशुओ का मल बहुत कीमती होता है इसलिये उसे नालिया म नही बहाया जाना चाहिये और उसे खुली नालियो स समय समय पर इकट्ठा कर लिया जाना चाहिये। नालियो म प्रवाहित होने वाला मूत्र और फर्श आदि के धोने से प्राप्त होने वाले गन्दे पानी को भूमिगत नालियो द्वारा बहने दिया जाता है। अगर भूमिगत नालियो म बहने वाले इस ग दे पानी का तनुकरण नही किया जाय तो ऐसी नालियो की कुछ भी उपयोगिता नही रहती है। इसलिये अगर पानी की मात्रा कम हो तो भूमि पर ही नालिया बनाकर ग दे पानी का निकासी की जानी ठीक रहती है। स्वास्थ्यवर्धक बातो को ध्यान म रखते हुए यह सोचा गया है कि अगर मोरिया ज्यादा खुली रखी जायेंगी तो वहा उत्पन्न होने वाली गसो का तनुकरण होता रहेगा और ऐसे पशुशालाओ म रहने वाले पशुओ को बहुत आराम मिलेगा।

दूध देने वाली गायो के घरो का फर्श दुर्भेद्य होना चाहिये। इसम फर्श के प्रति 60 लम्बाई पर 1 का ढाल होना चाहिये। पशु के खडे होने के पीछे की तरफ चौडी नाली बनानी हाती है जिससे इसम पशु का मल और मूत्र बिना किसी रुकावट के सम्भाला जा सके। यह नाली पशु के पिछले हिस्से की तरफ करीब 7' और रास्ते (Passage) की तरफ 2 या 2½' गहरी होनी चाहिये। ऐसी "...शुद्ध दूध उत्पादन क लिय काफी लाभदायक हाती है और पशु बिना किसी रुकावट क आराम स आ जा सकते हैं। नाली की चौडाई 18' भी की जा सकती है मगर इसके कारण नाती स मल और मूत्र के छीटे आस पास फलते रहते हैं।

नाली की ज्यादा से ज्यादा लम्बाई 70' तक रख सकते हैं, फिर वहां पर इसमे दूसरी तरफ से नाली भी लाकर मिलाई जा सकती है। इस नाली को पशुशाला के बाहर तक निकाल कर बाहर लगे गुली ट्रैप के साथ जोड दिया जाता है।

घुडशालाओ के लिये नाली 8" चौडी व 6 से 7" गहरी बनायी जाती है। इस नाली द्वारा केवल मूत्र और पानी को ही प्रवाहित होने दिया जाता है। दौड के लिये रखे गये घोडो के लिये ये नालिया भूमिगत होनी चाहियें। सूअर के बाडो के लिये बनने वाली नालिया 4 से 5" चौडी और 6" गहरी होनी चाहिये। गायो के लिये दोहरी गुली ट्रप (चित्र 6) प्रणाली अपनायी जाने से पशुओ के मूत्र और उनके घर
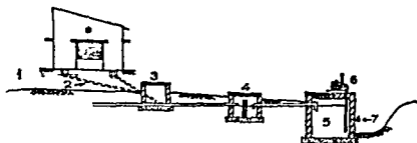
चित्र 6 पशुघर से मूत्र ले जाने के लिये दोहरी गुली ट्रैप प्रणाली। (1) पशुघर के फर्श धुलाई वाले पानी को ले जाने वाली नाली (2) पशुघर से मूत्र ले जाने वाली नाली (3) निरीक्षण कक्ष (4) तलछट कक्ष (5) मूत्र सग्रह कुड (6)पम्प और (7) नल।

व नाली के धोने पर वहा से निकलने वाला पानी अलग अलग ट्रप द्वारा इकट्ठा करके आगे ले जाया जा सकता है। पशु घर से बाहर लगाया गया पहला ट्रैप नाली से आने वाले मूत्र को इकट्ठा करता है, जबकि दूसरा ट्रप कुछ दूरी पर लगा रहता है और फर्श व नाली को धोने पर आने वाला गन्दा पानी इस ट्रप के द्वारा आगे स्यूवर नलो म आता है। मूत्र निरीक्षण कक्ष से आगे बढ कर तलछट कक्ष मे रुकता है। इस कक्ष के बीच मे छिद्रयुक्त प्लेट लगी रहती है जिससे कचरा आदि दूसरे भाग मे जाने से रोक दिया जाता है। यह कक्ष सीमेट व कक्रीट से बनाया जाता है। मूत्र इस कुण्ड से छन कर आगे सग्रह कुण्ड म जाकर एकत्रित होता रहता है। सग्रह कुड से निकलने वाला नल इस कक्ष मे नीचे की ओर झुका रहता है और एक अच्छी सील बनाता है, जिससे कि आगे के कुण्ड से गसें इसमे न आने पाएँ। ऐसा होने से अमोनिया गस तरल अमोनिया मे परिवर्तित हो जाती है। इन दोनो कक्षो के ढक्कन हवा रोधक होने चाहिये। एक गाय के मूत्र को इकट्ठा करने के लिये 3 घन फुट का कक्ष बनाया जाता है और यह हर मौसम के लिये उपयुक्त रहता है। इस कुण्ड को सप्ताह मे एक बार खाली किया जाता है। इस विधि द्वारा मूत्र से होने वाले प्रदूषण पर नियन्त्रण किया जा सकता है। भारत मे गो पशु की सख्या बहुत है और अगर

इसका मूत्र सही वैज्ञानिक तरीके से इकट्ठा करके रखा तो पशुओं और मनुष्यो मे इनसे फैलने वाले रोगो को नियन्त्रित करने मे बहुत सहायता मिलेगी। इसलिए स्वास्थ्य के लिये और खाद बनाने की दृष्टि से इसका निस्तारण किसी सोक पिट, खाई, खड्ड, जमीन पर बहाकर, तालाबो या नदियो मे मिलाकर कतई स्वीकारा नही जा सकता है। इसका निस्तारण ठीक ढंग से नही किया जाये तो इसके द्वारा बिमारिया फैलने का अंदेशा बना रहता है। इसलिए सभी फार्म पर पशुओ के मूत्र का ठीक ढंग से इकट्ठा करके काम मे लिया जाना चाहिये। मूत्र को इकट्ठा करके रखने पर, इसे जरूरत हो तब काम मे लिया जा सकता है और साथ ही इसकी खेतो मे फसल के वास्ते उपयोगिता भी बढती है।

स्यूऐज का निस्तारण

मनुष्यो, पशुघरो और कारखानो से निकलने वाले निरथक पदार्थों का स्यूऐज कहते हैं। अगर स्यूऐज का निस्तारण ठीक ढंग से नही किया जाये तो इससे भूमि और पानी के स्रोतो का संदूषण हो सकता है। स्यूऐज द्वारा लाये गये सूक्ष्म जीवाणुओ और विषैले पदार्थो से मनुष्यो, पशुओ और पौधो को काफी हानि होती है। इसका ठीक से निस्तारण नही करने से खाद्य पदार्थों दूध से बने पदार्थों और मास आदि का भी संदूषण होता है। स्यूऐज का खुले मे निस्तारण करना बहुत ही नुकसान प्रद विधि है। स्यूऐज की किस्म के बारे मे ठीक से जानकारी रखनी चाहिये जिससे उसका निस्तारण सही तरीके से हो सके तथा भोजन, पानी और हवा का दूषित होने से बचाया जा सके। घुले हुए लवण पदार्थों का मिश्रण और मिट्टी, कंकड तथा खनिज पदार्थों की कुछ मात्रा के साथ कचरे के रूप मे तरती एवं घुली अवस्था मे नाइट्रोजन तथा कार्बनयुक्त कार्बोनिक पदार्थों का गंदे पानी मे होना स्यूऐज कहलाता है।

स्यूऐज मनुष्यो व पशुओ के मल मूत्र, रसोई व स्नानघर व वर्षा के पानी, सडक से आये पानी और कारखानो से निकलने वाले पदार्थों के मिश्रण से बनता है। स्यूऐज की दो किस्म होती हैं

(अ) घरेलू स्यूऐज
(ब) कारखाना का स्यूऐज

(अ) घरेलू स्यूऐज

घरेलू स्यूऐज मनुष्यो व पशुओ के मल–मूत्र, रसोईघर व स्नानघर के पानी आदि के मिश्रण से बनता है। घरेलू स्यूऐज ज्यादा नुकसानदेह नही होता, क्योंकि घर से निकलने से पूर्व ही इसका तनुकरण हो जाता है और साथ ही निस्तारण से पहले अक्सर इसका उपचार भी कर दिया जाता है। मनुष्यो के लिये स्युऐज प्रणाली को सुचारु रूप मे चलाने के लिये प्रतिदिन प्रति व्यक्ति के हिसाब से 25

गलन पानी नालियो से प्रवाहित करते रहने की सिफारिश की गयी है । स्यूऐज को समुद्र, नदी या किसी अन्य स्रोत म छोडन से पूव उसे उपचारित करके साफ करना जरूरी होता है । स्यूऐज को अगर 20° सी तापमान पर पाच दिना के लिए रखें तो उसम रहने वाले बीमारी के सूक्ष्म जीवाणु प्राय मर जाते हैं । मल के ठास पदाथ हल्के होकर पानी मे तरने लगते हैं और साथ ही उनमे आक्सीजन की एकदम कमी हो जाती है ।

स्यूऐज का निस्तारण दो विधियो द्वारा किया जाता है ।

(I) मल सचय विधि (Conservatory method)

जहा जनसख्या कम हो वहा इस विधि का उपयोग किया जाता है । इस विधि म ठोस और द्रव पदार्थों को अलग–अलग इकटठा किया जाता है । मनुष्यो के मल का एकत्रित करके उसे शहर से दूर ले जाकर जमीन म गड्ढा खोद कर दबा दिया जाता है । इस विधि से दूध उत्पादन मे साफ सफाई रहती है और वहा मक्खियो को टाइफोयड और दूसर जीवाणुओ को दूध तक ले जाने का मौका नही मिल पाता है । मल का ठीक तरीके से निस्तारण करने के लिये उसे इकट्ठा करने के पश्चात् लकडी के बुरादे, राख या रेत से ढक कर ले जाया जाता है । इस तरह ले जाने से मल पर मक्खिया भी नही भिनभिनाती और न ही दुगन्ध फलती है । निस्तारण के बाद जीवाणुओ और कीडो को मारने के लिये इसमे कुछ भी रासायनिक पदाथ नही मिलाते हैं, क्योकि इसमे पदा होने वाली सडान्ध से ये दोनो प्रकार के जीव खुद ही समाप्त हो जाते हैं । घर स निकलने वाले द्रव पदार्थों को कुड या खाई म इकटठा कर लिया जाता है । यह जगह पानी के स्रोतो और रहने के घरो से कुछ दूरी पर होनी जरूरी है । ये कुड पक्के या कच्चे भी बनाये जा सकते हैं, मगर पक्के कुड हमेशा ठीक रहते हैं, क्योकि उनमे सीमेट का प्लास्टर होने से गन्दे पानी के रिसाव द्वारा भूमि के सदूषण का डर नही रहता ।

इस कुड को सप्ताह मे दो बार खाली किया जा सकता है और यह बेकार जाने वाला पानी बगीचो के उपयाग मे लाया जा सकता है ।

(II) पानी द्वारा ले जान वाली प्रणाली

इस प्रणाली द्वारा घर से निकलने वाला स्यूएज सावजनिक स्यूवर के नलो द्वारा स्यूऐज साफ करन के सयत्र तक ले जाया जाता है । गन्दे पानी का सयत्र म उपचार किये जान के बाद वह हानिकर नही होता और उसे किसी भी भूमि पर सिंचाई के लिये काम म लिया जा सकता है या नदी अथवा समुद्र म भी बिना किसी नुकसान के विसर्जित किया जा सकता है । पानी साफ करने की यह प्रणाली काफी खर्चीली रहती है, लेकिन साथ ही यह विधि स्यूऐज निस्तारण के लिये बहुत ही स्वास्थ्यकर है । स्यूएज को साफ करन के पश्चात् निम्न तरीको द्वारा उसका

नि नारण किया जा सकता है–

(1) तनु करक निस्तारण करना

(2) भूमि पर निस्तारण करना

(3) स्यूऐज का उपचार और निस्तारण करना

(1) तनु करके निस्तारण करना

भारत में तनुकरण विधि द्वारा कलकत्ता, मद्रास और बम्बई जसे शहरों मे उत्पान्ति स्यूऐज को वहा के समुद्र मे निस्तारित किया जाता है। कई नदियों मे भी स्यूएज का पानी छाड दिया जाता है। स्यूऐज को या तो वसे ही या फिर उसमे होने वाल बडे और ठोस पदार्थों को अलग करके निस्तारित करते हैं।

स्यूऐज के पानी को कभी भी नहाने के पानी के स्थान पर या जहा मछलिया हा वहा नही छोडा जाना चाहिये। स्यूऐज मे कुछ रोग पदा करने वाले जीवाणु हो सकते हैं, जो मनुष्यो, जानवरो और मछलियों के लिए नुकसानदेह होते हैं तथा इसमे पाये जाने वाले विपले पदार्थों से चमडी के रोग भी हो सकते हैं। इन खतरो से बचने के लिए स्यूऐज को नलो द्वारा समुद मे किनारे से काफी दूर तक ले जाकर छोडना चाहिये। जिन नदियो मे पानी का बहाव काफी तेज हो वहा पर भी स्यूऐज को ट्रीट करके ही छोडा जाना चाहिये और जितना स्यूऐज का पानी छोडा जाय उससे 500 गुणा तेज बहाव उस नदी मे होना चाहिये।

आज के युग मे नदियो के पास शहर और गावों की आबादी तेजी के साथ बढ रही है और वहा कारखानो का भी तेजी से विकास होता जा रहा है। इसके कारण काफी तादाद मे स्यूऐज का पानी बिना उपचार ही नदियो में प्रवाहित किया जा रहा है, जिसस शहरो और गावो मे रहने वाले पशुओ और मनुष्यो के जीवन को ऐसे पानी के प्रदूषण से बहुत बडा खतरा पदा हो गया है। इसके कारण भारी तादाद मे मनुष्यो, जानवरो और मछलियो म बीमारिया और मृत्यु तक हो सकती है। इसलिये जो शहर और गाव नदी के किनारे पर बसे हैं उनमे स्यूऐज उपचार के सयत्र लगाने चाहिय तथा कई तरह के सेप्टिक कुड बनवाने चाहिये जिससे स्यूऐज को उपचारित करके उसका निस्तारण ठीक ढग से किया जा सके। सेप्टिक कुड का काम सुचारू ढग से चले इसके लिए उसकी कायप्रणाली पर सावधानीपूवक नजर रखनी जरूरी है। ताकि नदिया और अन्य स्रोतो के पानी को प्रदूषित होने से बचाया जा सकेगा।

स्यूऐज का उपचार उस धीरे धीरे सेप्टिक कुड (चित्र 7) द्वारा पुणतया निकास करवाकर किया जाता है और इस विधि मे मल के ठोस पदाथ द्रव रूप मे परिवर्तित हो जाते हैं। इसके कारण कावनिक पदाथ जो कुण्ड के पैदे मे इकट्ठे होते हैं घुलनशील अवस्था म परिवर्तित हो जाते हैं और थाडा या बिल्कुल भी ठोस पदाथ सेप्टिक कुड के पदे मे नही बचता है। स्यूऐज को एक बद कुड (हवा और

प्रकाश रहित) से होकर प्रवाहित कराया जाता है और इसके लिए कम से कम 24 घंटे का समय दिया जाता है। इस तरह के कुंड को सेप्टिक कुंड कहते है। स्यूऐज सेप्टिक कुंड से, उसमे ऊपर लगे नल द्वारा बहकर बाहर निकलता रहता है और नीचे पड़े हुए मैले मे कोई बाधा उत्पन्न नही होती है। मैले को सेप्टिक कुंड से कभी-कभी हटाया जाता है। कुंड मे 20 से 40 प्रतिशत कार्बनिक पदार्थों मे कमी पड जाती है और मीथेन गस भी बनती है। इस तरह के सेप्टिक कुंड हरेक मकान या छोटे समुदाय या पशुशालाओ के लिए बहुत उपयुक्त रहते हैं। सेप्टिक कुंड मे स्यूऐज दो चरणो मे साफ होता है। पहले चरण मे सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा कुंड मे रहने वाले कार्बनिक पदार्थों का अनॉक्सीय पाचन होता है और इस तरह आक्सीडेसन के कारण रोग पदा कर सकने वाले जीवाणुओ की मृत्यु हो जाती है। दूसरे चरण मे इस गंदे पानी के साफ होने की क्रिया कुंड के बाहर एरोबिक आक्सीडेसन द्वारा हुआ करती है,
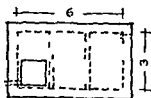
चित्र 7 सेप्टिक कुंड।
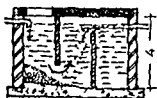
इसमे भूमि की सतह के कुछ ही नीचे या परकोलेटिंग फिल्टर मे आक्सीजनीय जीवाणुओ द्वारा पानी साफ होता रहता है। इस तरह से साफ किया गया पानी किसी भी बहते हुए पानी मे बिना किसी हानि के छोडा जा सकता है या उसका निस्तारण किसी भी भूमि पर सिंचाई द्वारा भी किया जा सकता है। भूमि मे रहने वाले जीवाणु कार्बनिक पदार्थों को नाइट्रेट, कार्बन डाइआक्साइड और पानी मे परिवर्तित करते रहते हैं। सेप्टिक कुंड मे इकट्ठा होते रहने वाले मैले को हर दो वर्षों के बाद एक बार हटाया जाता है।

(2) भूमि पर निस्तारण करना

यह कुंड से निकलकर आने वाले पानी के उपचार की एक अच्छी विधि है, जिससे हल्की, सरन्ध्र मृदा सर्वोत्तम होती है, जिसके नीचे कंकड और रेत की परत होती है। इसके लिए अपनायी जाने वाली विधियां निम्न हैं–

(ए) विस्तीर्ण सिंचाई (Broad irrigation)

इस विधि मे स्यूऐज को किसी ऊची ढलान वाली जगह से बहाया जाता है। इस प्रकार बहने से स्यूऐज जमीन द्वारा सोख लिया जाता है। इस तरह के क्षेत्र पानी के स्रोतो से दूर होने चाहिएँ। गन्दे पानी मे रह जाने वाले मल के कुछ पदार्थ भूमि पर ही रोक लिये जाते है और उनका भूमि के जीवाणुओ द्वारा विघटन होता रहता है।

(बी) भूमिगत सिंचाई (Sub soil irrigation)

पानी को जल्दी सोख सकने वाली समतल भूमि इस विधि के लिये अति उपयुक्त रहती है। गदा पानी निकलने के लिये नलो पर खुले हुए भाग बनाये जाते हैं और उनसे निकल कर पानी भूमि पर फलकर उसमे रिसता रहता है। ऐसी भूमि का उपयोग खेती के लिये भी किया जा सकता है।

(सी) भूमि द्वारा निथरना

स्यूऐज के पानी को नलो स प्रवाहित करवा कर उपयुक्त बनी हुई नालियो म इकटठा कराया जाता है। इसके लिये भूमि समतल या ढलुआ होनी चाहिये। स्यूऐज निथरकर भूमि म 3 स 6" गहराई तक पहुचना चाहिये। निथरने के दौरान भूमि मे स्यूऐज का आक्सीडेसन होता है। इस तरह की भूमि पर फसल उगाई जा सकती है। मेडो पर पौधे उगाये जा सकते हैं। ऐसी भूमि पर कुछ समय के अतराल पर पानी छोडा जाता है ताकि भूमि के निथारने की शक्ति पर विपरीत प्रभाव न होने पाये।

स्यूऐज द्वारा भूमि का अनुपयोगी होना (Sewage sickness of land)

लगातार स्यूऐज के पानी को भूमि पर छोडते रहने के कारण उसकी पानी छनने की शक्ति म रुकावट उत्पन्न हो जाती है इसलिये उस पर कुछ समय तक पानी नही छोडा जाता। ऐसी भूमि का चूने की विधि द्वारा उपचार किया जा सकता है। भूमि म पाये जाने वाले कई किस्मो के जीवाणुओ द्वारा स्यूऐज का पानी साफ होता रहता है जिनमे मुख्यत हवा म और अनाक्सीय स्थिति मे रह सकने वाले और नाइट्रिफाइग जीवाणु सम्मिलित हैं। स्यूऐज पानी के साथ जो भी व्यक्ति काम करे उसे कुछ सावधानिया जरूर बरतनी चाहिये, जस काम करते समय हाथ और पाव पर तेल लगाना। ऐसे व्यक्तियो को विटामिन की गोलिया भी लेते रहना चाहिये ताकि उनके शरीर की शक्ति बनी रहे।

(3) स्यूऐज का उपचार और निस्तारण (Sewage treatment and Disposal)

स्यूऐज उपचार का उद्देश्य यह रहता है कि इसमे पाये जाने वाले ठोस और निलम्बित पदार्थों को और मुख्यत रोग पदा करने वाले जीवाणुओ को इससे अलग करें जिससे यह हानिरहित हो जाये और इसका निस्तारण भूमि पर नदी या समुद्र मे बिना रुकावट के किया जा सके।

(ए) प्राथमिक उपचार (Preliminary treatment)

(i) बजरी कुड द्वारा उपचार (Grit tank treatment)

इस विधि के लिये दो या तीन कुड बनाये जाते है और इनका आकार आवश्यकता के अनुसार बनाया जाता है। एक समय मे दो कुड एक साथ काम मे लिये जाते हैं और तीसरा कुड वैसे ही रहने दिया जाता है। तीसरे कुड का उपयोग तब करते हैं जब कि पहले दो मे से एक कुड की सफाई चालू की जाती है। इस कुड के उपयोग द्वारा काच, पत्थर, बजरी और इट के टुकडे जसे अकाबनिक पदार्थों को हटाया जाता है। इस कुड मे नालियो द्वारा स्यूऐज का पानी आकर गिरता है और भारी कचरो द्वारा कुड भरता रहता है और पानी कुड के ऊपर से बहता हुआ उपचार हेतु आगे बने कुड मे पहुचता है।

(ii) छानना (Screening)

इस कक्ष द्वारा गदे पानी म तर कर आने वाले पदार्थो को हटाया जाता है जो मुख्यतया मल के ठोस पदाथ, कपडे, कागज और लकडी व पोलीथीन के टुकडे आदि के रूप मे होते हैं। इस प्रक्रिया के दौरान इन्हें मोटी व महीन छलनी से छाना जाता है। छलनी लोहे की प्लेट पर 1 से 2" दूरी पर सलाखें लगा कर बनायी जाती है। इसके द्वारा कुल 10 प्रतिशत ठोस पदाथ हटाया जा सकता है। इसके आगे दूसरी छोटे छिद्रो वाली छलनी लगी रहती है जिसम 0 1 से 0 2" आकार के छिद्र होत हैं। इन पर इकट्ठे होने वाले पदार्थो को समय समय पर हटाया जाता रहता है और छलनी के सुराखो को खुरच कर या बडे ब्रुश से अथवा तेज फव्वारे की धार द्वारा साफ किया जाता है।

छलनी के कक्ष से निकलने वाले पानी को तग रास्ते से गुजारा जाता है जिससे स्यूऐज के पानी का वेग बढता है और इसके कारण कार्बनिक पदार्थों के कुड के तल म बठने मे कमी होती रहती है। इस कक्ष से इकट्ठे किये गये पदार्थों को जमीन म गाड दिया जाता है या फिर उन्हे जला देते हैं।

(iii) तलछट या रसायनो द्वारा अवक्षेपण के लिये कुण्ड (Sedimentation or Chemical precipitation tank)

ये कुड 7 से 8' लम्बे होते हैं तथा सीमेंट व ककरीट को मिलाकर बनाये जाते हैं और इनके पैंदे मे ढार दिया जाता है। इसमे स्यूऐज के तापमान और गति को जरूरत के मुताबिक बनाये रखा जाता है। हल्के व भारी कण पैंदे मे बैठते हैं और उनको समय समय पर हटाते रहते हैं। स्यूऐज इस कुड से आगे के कुड मे जाने के लिये कुड के ऊपर से बहकर निकलता रहता है। इस विधि द्वारा स्यूऐज से 60 प्रतिशत कण वाले पदाथ बिना किसी बाधा के हटाये जाते हैं।

इस कुंड से स्यूऐज मे पाये जाने वाले कणो को रसायनो द्वारा अवक्षेपण करा कर भी हटाया जाता है। अवक्षेपण के लिये पानी मे चूना और फेरस सल्फट, फिटकरी व खड़िया या एल्यूमिनियम सल्फेट आदि मे से कोई भी एक रसायन काम मे लिया जाता है। पानी के तापमान और गति को नियन्त्रित रखा जाता है। इस विधि द्वारा स्यूऐज से 80 प्रतिशत ठोस कणों वाले पदार्थों और 40 प्रतिशत जीवाणुओं को हटाया जा सकता है।

इस कुण्ड से प्राप्त स्लज को या तो समुद्र मे फेंक दिया जाता है या फिर खेतों में पौधो के लिये खाद के रूप मे काम में लेते हैं, क्योंकि यह फलों और सब्जी के बगीचो के लिए बहुत उपयुक्त रहता है।

स्लज को कुओं मे इक्ट्ठी करके इससे मीथेन गैस भी प्राप्त की जाती है और उसके पश्चात् इसी स्लज स कारखानो म कृत्रिम खाद बनाई जाती है।

(बी) आक्सीजनीय जविक उपचार (Aerobic biological treatment)

(i) परकोलेटिंग, ट्रिकलिंग फिल्टर (Percolating, Trickling Filters)

ट्रिकलिंग फिल्टर बनाने के लिये सीमेंट व ककरीट के बने खुले कुण्ड काम मे लिये जाते हैं। कुण्ड को ईंट या पत्थर के टुकडो से 2 या 3' ऊचाई तक भरते हैं और फिर उसमे से स्यूऐज को गुजारा जाता है। कुछ समय पश्चात् टूटे हुए पत्थरो पर जिलेटिन की परत बन जाती है जो आक्सीजन की उपस्थिति मे हवा मे जिन्दा रह सकनें वाले जीवाणुओ को स्थान (Nidus) प्रदान करती है। इस दशा में यह परिपक्व (Ripened) कहलाती है। फिल्टरेशन के बाद पेंदे से साफ द्रव साईफन की विधि द्वारा हटाया जाता है।

(ii) सम्पर्क परतें (Contact beds)

यह परकोलेटिंग फिल्टर जमा ही होता है। फिल्टर में नाइडस बनते हैं और उन पर जीवाणु रहते हैं। जब भी कार्बनिक पदार्थ इसके सम्पर्क म आते हैं तब जीवाणु इसका उपयोग करत हैं। इस विधि में स्यूएज का पानी कुण्ड मे 8 या 9 घण्टे के लिये भर कर ठहरने देते हैं और स्यूऐज को 4 या 5' ऊचाई तक भरा जाता है। कुंड को उचित समय पश्चात् खाली करके 3 घटे का विश्राम दिया जाता है जिससे फिल्टर मे पत्थर पर बने नाइडस मे रहने वाले जीवाणुओ को आक्सीजन प्राप्त हो सके। इस विधि द्वारा स्यूऐज से ठोस पदार्थ पूर्णतया नही हटाय जा सकते।

(iii) ह्यूमस कुंड (Humus tanks)

इस कुंड द्वारा परकोलेटिंग या सम्पर्क परत से निकलने वाले स्यूऐज के पानी में रह जाने वाले कार्बनिक पदार्थों को हटाया जाता है। फिल्टर हुए पानी को कुछ घटों के लिय रोक कर रखा जाता है जिससे उसमें रहने वाले कार्बनिक पदार्थ तियर

कर पैंदे मे बठ जाते हैं और फिर ऐसे पानी को बिना किसी हानि के नदियो या भूमि पर छोड दिया जाता है।

(iv) सक्रियकृत स्लज या हवा देने की विधि (Activated Sludge or Bioaeration)

इस विधि मे 30 प्रतिशत पुराने और 70 प्रतिशत ताजे स्यूऐज को हवा वाले कुड मे मिलाया जाता है। इन्हे लगातार हिलाते रहते हैं ताकि पैंदे मे कुछ भी पदाथ नही जम सकें। इस कारण स्यूऐज के पुराने जीवाणुओ को कार्बनिक पदार्थों के सम्पक मे आने का पूरा मौका मिलता है। इस प्रकार इनको 8 घटो तक लगातार सम्पक मे रखा जाता है। इससे उनकी बी ओ डी मे कमी आती है। जीवाणु ठीक ढग से काय करें इसके लिये उस पानी मे छिद्रयुक्त नलो द्वारा आक्सीजन गस छोडी जाती है। इस विधि द्वारा स्यूऐज मे कणो के रूप मे पाये जाने वाले पदाथ और बी ओ डी मे 90 प्रतिशत कमी आ जाती है। रोग पदा कर सकने वाले जीवाणुओ की सख्या मे 98 प्रतिशत कमी हो जाती है। पानी के सभी जीवाणुओ को समाप्त करने के लिये सुपर क्लोरीनेसन की विधि अपनाई जाती है। स्लज इकट्ठा करन के पहले और आखिरी (Presettlement and final settlement) कुड के बीच मे हवा (Aeration tank) का एक कुड भी बनाया जाता है।

(सी) रसायनो द्वारा स्यूऐज स्टरलाइज कराना (Chemical sterilization of sewage)

स्यूऐज के ट्रीट किये हुए पानी मे बीमारी पैदा कर सकने वाले जीवाणुओ के होने की पूरी सम्भावना बनी रहती है। जब पानी से फलने वालो बीमारियो की तेजी से वृद्धि होने लगे तब स्यूऐज को 10 से 15 पी पी एम के हिसाब से क्लोरीन से ट्रीट करके ही पानी के स्रोतो मे छोडा जाना चाहिये।

(ब) कारखानों का स्यूऐज (Industrial sewage)

मास उद्योग, बधशाला, चम उद्योग, डेयरी, तेल शोधक कारखानो, खाद बनाने वाले कारखानो, रसायन उद्योग कपडा उद्योग और दूसरे कई कारखानो से निकलने वाला स्यूऐज अक्सर स्वास्थ्य से सबध रखने वाले अधिकारियो का ध्यान आकर्षित करता है। क्योंकि इन उद्योगो से निकलने वाला स्यूऐज अक्सर कोई न कोई बीमारी पैदा करता ही रहता है। ऐसे बिना ट्रीट किये हुए स्यूऐज को भूमि पर छोडने से पानी के मुख्य स्रोतो और भूमि का प्रदूषण होता रहता है। इसके कारण मनुष्यो पशुओ, मछलिया और पानी के और भी कई तरह के जीवो के जीवन का खतरा बना ही रहता है। इसके अतिरिक्त पौधो, जमीन और फसलो को भी यह स्यूऐज का पानी काफी नुकसान पहुचाता रहता है।

एन्थ्रेक्स जीवाणु स्पोर बना सकता है और यह बहुत वर्षों तक समाप्त नही होता, जिसके कारण यह डेयरी चम उद्योग और हड्डियो के चूर्ण बनाने वाले कार खानो मे काम करने वाले लोगो के लिये भारी दुविधा खडी करता रहता है।

ऊन बाल और चम किसी भी व्यक्ति को काम के लिये दें उससे पहले इनका विसक्रमण (Disinfection) जरूर कर लेना चाहिये। बेकार द्रव्यो का विधिवत उपचार करके विसर्जित करना चाहिये। डेयरी, चम उद्योग और दूसरे उद्योगो से निकलने वाले पानी को छानने (Screening) के बाद तलछट (Sedimentation) की विधि द्वारा साफ करना चाहिये। तलछट के लिये पानी मे कुछ रसायनो जसे चूना या फिटकरी या फेरस सल्फेट का उपयोग किया जा सकता है। पेंदे म इक्टठे हुए तलछट को हटा दिया जाता है और पानी कुड के ऊपर से बह कर निकल जाता है। फिर स्यूऐज को फ्लिटर की सतह से गुजरने दिया जाता है। स्लज मे पाये जाने वाले जीवाणुओ को 2 प्रतिशत हाइपोक्लोराइट द्वारा समाप्त किया जाता है या स्लज को सडन के लिये अलग से कुड मे लिया जाता है जिससे मीथेन गस प्राप्त की जाती है।

कपडा उद्योग से निकलन वाले स्यूऐज का उपचार (Textile effluent treatment)

पानी के प्रदूषण पर नियन्त्रण क लिये कपडा रगाई और छपाई उद्योग स निकलन वाले स्यूऐज को उपचार सयत्र म शारीरिक रासायनिक (Physiochemical) क्रियाओ और जीव विद्या सम्ब धी (Biological) उपचारो द्वारा ट्रीट किया जाता है। ऐसे स्यूऐज म कावनिक प्रदूषक होते हैं और ये कपडा उद्योग म विभिन्न कायवाही जसे रगाई व छपाई आदि के दौरान उत्पन्न होते हैं। यदि यह पानी सीधे ही पानी क मुख्य स्रोतो म छोड दिया जाये तो इसस मुख्य पानी की आक्सीजन म कमी उत्पन्न हो जाती है और उसम रहने वाले जीवो की तुरन्त मृत्यु हो जाती है। इसस भूमि म क्षारीयता उत्पन्न हो जाती है जिससे वह खेती करन के योग्य नही रह पाती है। ट्रीटमेन्ट सयत्र के द्वारा पानी के प्रदूषण की समस्या का काफी हद तक समाधान होता है और उससे कपडा उद्योग से निकलन वाले स्यूऐज म से ज्यादातर प्रदूषको को हटा लिया जाता है। फिर स्यूऐज बिना किसी हानि क विसर्जित किया जा सकता है।

नक्शे का सार (Principles of design)—

इस सयत्र (चित्र 8) मे निम्नलिखित विधिवत खण्ड होते है —

(i) छानना (Screening)

स्यूऐज को सयत्र के प्रथम खण्ड म ही छान लिया जाता है जिसस कुछ पदार्थ जसे पत्थर बजरी कागज लकडी और पोलीथीन के टुकड आदि हटा दिये जाते हैं।

स्यूऐज नालियो द्वारा यहा लाया जाता है। छानने वाले इस खण्ड की सफाई हर रोज दिन मे एक बार की जाती है।
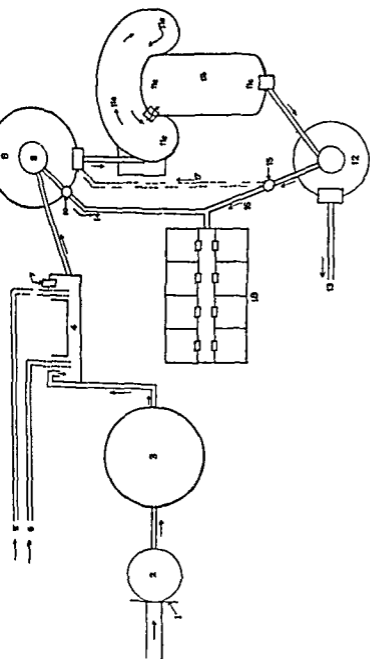
चित्र 8 कारखानो से निकलने वाले स्यूऐज के उपचार के लिये सयत्र । (1) छानना (2) सम्प कुआ (3) समन्वित कुड (4) वेन्चूरी फ्लूम (5) फेरस सल्फेट (6) सल्फ्यूरिक अम्ल (7) पी एच मीटर (8) क्लारिफायर भाग (9) कचरा एकत्रित होने का स्थान (10) एक ओर खुलने वाला कपाट (11, a और b) वायु वितरण के प्रथम व द्वितीय चरण के कुड (11 c) वायु वितरण के लिये पखे (12) द्वितीय क्लारिफायर (13) उपचारित स्यूऐज पानी के निस्तारण का भाग (14) रासायनिक स्लज (15) एक ओर खुलने वाला कपाट (16) स्लज (17) जीवाणुयुक्त स्लज को पुन ले जाने वाला नल और (18) स्लज सुखाने की क्यारियां । →══ बहाव के लिये माग दर्शाने वाला चिह्न ।

(ii) सम्प कुआ (Sump well)

स्यूऐज, छनने वाले खण्ड से सम्प कुए मे आता है। इस कुए मे से स्यूऐज को तीन पम्पो की सहायता से बाहर प्रवाहित किया जाता है। एक समय मे सिफ

दो ही पम्प काम मे लिये जाते हैं और तीसरे पम्प को जरूरत के समय ही काम में लिया जाता है। हर पम्प 10 अश्वशक्ति क्षमता का होता है। पम्पो द्वारा स्यूऐज समन्वित कुड (Equalisation tank) मे प्रवाहित किया जाता है।

(iii) समन्वित कुड (Equalisation tank)

विभिन्न उद्योगो से आये स्यूऐज के गुणो मे भी फर्क होता है। इसलिये इन उद्योगो के स्यूऐज को इस कुड में मिलाकर एकसार कर लिया जाता है। इस कुड में स्यूऐज को 16 घटो तक रोक कर रखा जाता है और इसे 3 महीनो में एक बार साफ किया जाता है।

(iv) वैंच्यूरी फ्लूम (Ventury flume)

समन्वित कुड से स्यूऐज को पम्प की सहायता से वैंच्यूरी फ्लूम मे लिया जाता है। वहा उसे एक पतले रास्ते से गुजारा जाता है और उसके एक हिस्से से इसम सामान्य दर्जे का सल्फ्यूरिक अम्ल मिलाया जाता है। स्यूऐज को लगातार हिलाकर अम्ल को उसमे अच्छी तरह मिलाया जाता है। अम्ल द्वारा इसका पी एच 11 5 से 9 0 तक लाया जाता है। यहा के सकरे रास्ते के दूसरे छोर पर स्यूऐज मे लगातार 10 प्रतिशत फेरस सल्फेट मिलाया जाता है। इसे फ्लेस मिक्सर की सहायता से अच्छी तरह मिश्रित किया जाता है। स्यूऐज को यहा से प्राथमिक क्लारिफायर कुड म लिया जाता है।

(v) प्राथमिक क्लारिफायर (Primary Clarifier)

यह कुड कुछ निचाई पर स्थित होने के कारण इसम स्यूऐज वच्यूरी फ्लूम से खुद ब खुद आता रहता है। कणो के रूप म पाया जाने वाला कचरा, रसायनो द्वारा आपस मे जुडता रहता है और ये पदाथ भारी होकर इस कुड मे तल पर इक्टठ होते रहते हैं। इस विधि द्वारा स्यूऐज के बी ओ डी म और उसमे फले हुए कणों वाले ठोस पदार्थो मे कुछ कमी आती है। इस कुड मे स्यूऐज को कम से कम 3 घटो की अवधि के लिये रोक कर रखा जाता है।

इस कुड मे लोहे का एक पुल क्लारिफायर घेरे के चारो ओर लगातार धीमी गति से घूमता रहता है। इस पुल के साथ पैंदे पर इक्टठे हुए कचरे को साफ करते रहने के लिये एक औजार जुडा रहता है। क्लारिफायर कुड मे दो भाग होते हैं। एक भाग बीचो बीच बना होता है जिसमे कचरा इक्टठा होता रहता है और दूसरा भाग इस भाग के बाहर की तरफ गोलाई म होता है जिसे क्लारिफाइरिंग भाग कहते हैं। पुल के नीचे लगे औजार द्वारा क्लारिफाइरिंग भाग से कचरा हटाकर बीच वाले (Flocculating Zone) भाग म पहुचाया जाता है। प्राथमिक क्लारिफायर मे नीचे एक तरफ खुलने वाले कपाट के द्वारा समय समय पर इक्टठे हुए स्लज को हटाया जाता है। उपचारित स्यूऐज इस कुड क ऊपर से बहता हुआ वायु वितरण कुड मे पहुचता है।

(vi) वायु मिलान वाला कुड (Aeration tank)

वायु वितरण कुड मे स्यूऐज के उपचार की प्रक्रिया दो चरणो मे पूरी होती है। इस कुड के पहले चरण के हिस्से मे स्यूऐज प्राथमिक क्लारिफायर कुड से स्वत ही बहकर आता रहता है। स्यूऐज यहा हवा के दोनो कुडो मे आक्सीडेसन की प्रक्रिया द्वारा साफ होता है। स्यूऐज मे कार्बनिक पदार्थ, रग, मोम, कलफ तथा रगाई और छपाई उद्योग के काम मे ली जाने वाली अन्य कई प्रकार की अशुद्धिया होती हैं। ये अशुद्धिया जीवाणुओ द्वारा आक्सीडाइज होती रहती हैं और इस स्यूऐज के पानी को उसकी ऊपरी सतह से ताजी आक्सीजन लगातार मिलती रहती है। स्यूऐज को हवा मिलती रहे इसके लिये 40 अश्वशक्ति क्षमता के पखे लगाये जाते हैं जिनके चलने से पानी हवा मे ऊपर तक उछलता व गिरता रहता है और इस दौरान उसम आक्सीजन घुलती रहती है। रसायनो द्वारा उपचारित स्यूऐज मे बी ओ डी और सी ओ डी की कमी हो जाती है।

यहा स्यूऐज के पानी मे जीवाणु तथा पानी की कई प्रकार की अशुद्धिया 4,000 मि ग्रा प्रति लीटर रहती हैं। रसायनो द्वारा उपचारित स्यूऐज का जीवाणुओ की क्रिया द्वारा आक्सीडेसन होता है, जो कि आक्सीजन (सतह की हवा द्वारा) की उपस्थिति मे अमोनिया, कार्बन डाइआक्साइड और ऊर्जा देते है तथा जीवाणुओ की सख्या मे भी वृद्धि होती है। वायु वितरण के इन प्रथम और द्वितीय चरण के कुडो मे स्यूऐज को क्रमश 7 5 और 6 5 घटो तक रोके रखा जाता है।

(vii) द्वितीय क्लारिफायर (Secondary Clarifier)

स्यूऐज का पानी पहले और दूसरे चरण के वायु वितरण कुडो से होकर इस कुड मे आता है। स्यूऐज से जीव सबधी ठोस पदार्थ क्लारिफायर के पैदे मे बठते रहते हैं। इसमे लोहे के घूमते रहने वाले पुल के नीचे रबड का फर्श साफ करने का बडा टुकडा (Scraper) लगा रहता है जिसके घूमते रहने से पैदे का कचरा क्लारिफायर के बीच वाले हिस्से की तरफ सरक कर इकट्ठा होता रहता है। स्लज को क्लारिफायर के एक तरफ खुलने वाले दरवाजे द्वारा बाहर निकालते रहते हैं। स्यूऐज का उपचारित पानी इस कक्ष के ऊपर से बहकर आता रहता है और उसको ठीक तरह से निस्तारित कर दिया जाता है। द्वितीय क्लारिफायर से निकले स्यूऐज का कुछ भाग पुन प्राथमिक क्लारिफायर म मिलाकर जीवाणुओ द्वारा आक्सीडेसन की क्रिया मे तेजी लाई जाती है।

(viii) स्लज सुखाने की क्यारिया (Sludge drying beds)

स्लज को प्राथमिक व द्वितीय क्लारिफायर से इकट्ठा करके स्लज सुखाने वाली क्यारियो म लाकर बिछाया जाता है। सूखने के बाद स्लज का भार काफी कम हो जाता है इसलिये इसको आसानी से किसी उपयुक्त स्थान पर ले जाकर निस्तारित किया जा सकता है।

कपडा उद्योग के रा (Raw) और उपचारित स्यूऐज के पानी के विशिष्ट गुण

	रॉ स्यूऐज का पानी	उपचारित स्यूऐज का पानी
1 पी एच	10–11 5	8 5–9
2 सी ओ डी (मि ग्रा प्रति लीटर)	900–1,500	180–250
3 बी ओ डी 5 दिनो तक 20° सी पर (मि ग्रा प्रति लीटर)	400–800	15–25
4 तरते हुए ठोस कण (मि ग्रा प्रति लीटर)	250–500	50–100
5 क्षारीयता (मि ग्रा प्रति लीटर)	2 000–3 000	
6 घुले हुए कुल ठास पदाथ (मि ग्रा प्रति लीटर)	10 000–12,000	10,000–12 000

निष्कष

भारत मे खेती योग्य और बजर भूमि की बहुतायत है। इसके साथ ही यहा की जनसख्या भी बहुत है। लोग अपने और कारखानो के लिये बहुत सारा पानी उपयोग म लाते हैं जो कि स्यूऐज के रूप मे परिवर्तित होकर नालिया मे आता है लेकिन इसम से पानी का ज्यादा भाग बेकार ही चला जाता है। भारत मे कई स्थानों पर तापमान 80° एफ रहता है जिससे स्लज का उपचार ठीक ढग से होने मे मदद मिलती है और स्यूऐज के निस्तारण म कोई बाधा नही आती। ऐसी स्थिति म स्यूऐज निस्तारण के लिये कोई उपयुक्त विधि आसानी स अपनाई जा सकती है। इसके लिये स्यूऐज का प्राथमिक उपचार करने के बाद जीवाणु आक्सीडेसन की क्रिया करते हैं और खेती के उपयोग म लाने से पहले उसे अच्छी तरह निथरने देते हैं। इससे पानी के प्रदूषण पर नियत्रण रखने म सहायता मिलती है और साथ ही किसानो की उनकी माली हालत मे अच्छा सुधार होता है। भारत के गावो म खेती के लिये पानी खाद और ऊर्जा की काफी कमी रहती है ऐसे म स्यूऐज का साफ किया हुआ पानी स्यूऐज का साफ किया हुआ पानी और ऊर्जा के रूप म गस भी मिलती है जिसस स्लज से प्राप्त ऊर्जा और खाद ये सभी बेकार जाने के बदले उसे उपहार मे प्राप्त होते हैं।

निम्नाकित पौधे जिन पर लवण और क्षारीयता का असर नही होता और इस कारण उ हें घर और कारखाना से निकले स्यूऐज के पानी से उगाया जा सकता है –

1 स्ट्रेटो 2 लाना 3 सपारी 4 हरमन 5 ट्रनि 6 अंग्रेजी वावलिये

7 खारा जाल 8 मीठा जाल 9 लूनियो 10 कटीली 11 लुंक
12 सफेद पुनसवा 13 लूनवो 14 मोथा और 15 घोडा दूब ।

गोबर की खाद तथा उसे ऊर्जा के स्रोत के रूप मे सुरक्षित रखना

भारत मे गोबर की अधिकाश मात्रा मे जलाया जाता है और खाद के रूप मे उसे बहुत कम मात्रा मे लिया जाता है। गोबर का स्वास्थ्यकर और सही तरीके से निस्तारण करके उससे मनुष्यो और पशुओ के स्वास्थ्य की रक्षा की जा सकती है और मक्खियो तथा बीमारियो को भी नियत्रित किया जा सकता है। गोबर, ऊर्जा (गोबर गस) का बहुत अच्छा स्रोत बनता है तथा इससे उच्च किस्म की खाद की प्राप्ति होने से भूमि की उपजाऊ शक्ति मे बढोतरी होती है। मल व मूत्र को पशुघरो से ही अलग अलग करके उनका सही ढग से निस्तारण कर देना चाहिये। खाद मे कई तरह के हारमोन होते हैं जो पौधो के लिये बढोतरी म सहायक होत हैं तथा उमसे भूमि की उवरा शक्ति मे भी बढोतरी होती है। इनसे भूमि म जीवाणुओ की सख्या म बढोतरी होती है और ये नाइट्रोजन पदार्थों को विभक्त करत हैं जिनसे पौधों को बहुत फायदा होता है।

पशुओं की विभिन्न जातियों से प्राप्त होने वाले गोबर की औसत मात्रा —

पशुओं की जातिया	गोबर की मात्रा/प्रतिदिन पौण्ड मे
घोडा	24
गाय	78
भेड व बकरी	2 – 6
सूअर	3 – 6
सौ मुर्गिया	6 – 8

गोबर उठाना व सग्रह करना

(1) गोबर को उठाना

पशुघरों मे ठोस खाद गाडे द्वारा दिन मे दो बार इक्ट्ठी की जाती है। गाडे पर धातु की चद्दर लगी रहनी चाहिये जिससे उसे काम मे लेने के बाद रसायनो द्वारा जीवाणुओ से मुक्त किया जा सके।

खाद को पशुघर के बाहर या किसी गड्ढे मे इकट्ठा किया जा सकता है। बडे फार्म पर इसे सीधे ही ट्रक पर लादा जा सकता हैं। बडी डेयरी मे गोबर को मशीनो की सहायता से उठाकर ले जाया जाता है। गोबर ले जाने के लिये एक टब का उपयोग किया जाता है जो कि डेयरी मे बधे तार पर पुली की सहायता से चलाया जाता है और इसके द्वारा खाद सग्रह के लिये गड्ढे तक ले जाई जाती है इस विधि को अपनाये जाने से श्रम की काफी बचत होती है। टब लोहे का बना होता है जिस पर

जस्ता चढ़ा रहता है और उसकी लम्बाई × गहराइ और चौड़ाई क्रमश 48" × 22" × 27½" होती है।

(ii) गोबर का संग्रहण

(ए) इकट्ठे किये हुए गोबर को उठाकर ले जाने मे सुविधा रहती है।

(बी) संग्रह करके रखने से गोबर म सड़ांध पदा होती है और उससे उसकी उवरक शक्ति मे बढ़ोतरी होती है।

(सी) इसके द्वारा बीमारी के खतरनाक जीवाणुओ के जीवन चक्र को पूरा होने से रोका जाता है।

गोबर इकट्ठा करने के लिये बनाया गया गड्ढा पशुघर से कम से कम 200 से 300' दूर होना चाहिये। इसे जमीन की सतह से ऊपर बनाना ठीक रहता है। गड्ढे का स्थान ऐसी जगह पर हो जिससे कि फाम के किसी भी हिस्से से वहां पहुचने मे कोई रुकावट न आये। यह पानी के स्रोतो स दूर होना चाहिये। इसे बनाते समय वहा की वायु प्रवाह की दिशा का ध्यान भी रखें जिससे मक्खियां और दुगध जसी कठिनाइया खड़ी न हो सकें। मक्खियो के कारण पशुओं को काफी परेशानी होती है और उससे दूध उत्पादन की क्षमता म कमी हो जाती है। डेयरी फार्म, जहां साफ और दूध से बने पदाथ इकट्ठे किये जाएँ हवा की गति के विपरीत दिशा म होने चाहियें।

गड्ढे को बनाना –

(1) यह जमीन की सतह स ऊपर होना चाहिये।
(2) इसकी फश अभेद्य होनी चाहिये।
(3) फश की ढलान सही ढग से होनी चाहिये।
(4) गड्ढे की दीवारो की ऊंचाई कम से कम 4' होनी चाहिये।
(5) गड्ढे म गोबर इकट्ठा करने के कारण मक्खियां उसमें प्रजनन नहीं कर पाती जीवाणुओ व स्ट्राजाइल्स और दूसरे कीडो के लार्वों की मृत्यु हो जाती है।
(6) गड्ढे पर छत उसकी दीवार से चार फुट ऊचाई पर बनानी चाहिये। इससे गोबर को हवा और सूय की रोशनी पूणतया मिलेगी। यह गोबर को वर्षा के पानी से खराब होने से बचाता है।

गोबर को गड्ढे मे कम से कम 60 दिनो तक इकट्ठा करके रखे रखना चाहिए। अगर गोबर मे घास के रेशे ज्यादा हो तो यह समय कुछ दिनो के लिए और बढा देना चाहिए। प्रत्येक गाय का गोबर इकट्ठा करने के लिए 2 घन फुट जगह की आवश्यकता रहती है। अगर 20 गायो का गोबर 60 दिनो के लिये इकट्ठा करना हो तो 30' लम्बा × 20 चौडा × 4 ऊचा एक आयताकार गड्ढा बनाना चाहिये।

पशुघरो से गोबर को कुछ परिस्थितियों के कारण संग्रह न करके सीधा ही खेतो पर डाला जा सकता है। इस विधि मे कोई भी आपत्ति नही है, मगर गोबर डालने के बाद उन जगहों पर पशुओ को चारा चरने के लिए नही जाने देना चाहिये।

गोबर के निस्तारण की विधियां

गोबर के निस्तारण करने की अनेक विधिया हैं और इन सभी से मक्खियो के प्रजनन को रोकने म सहायता मिलती है। इसके लिए निम्नलिखित विधिया हैं —

(1) भौतिक

(i) जलाने की विधि

इस विधि का उपयोग पशुओ मे बीमारियो के फलने के समय किया जाता है। यह विधि काफी नुकसानदेह है मगर साथ ही यह स्वास्थ्यकर भी है। गोबर को धूप मे सुखाया जाता है लेकिन यह ध्यान रखना जरूरी है कि उस समय वहा मक्खियां आकर्षित न होने पाये। सूखे हुए गोबर को जलाकर राख मे परिवर्तित कर लिया जाता है।

(ii) गाड़ने की विधि

गोबर का निस्तारण जरूरत के मुताबिक खाइया बना कर किया जाता है। इसके पास पानी का कोई भी स्रोत नही होना चाहिये। गोबर को खाई मे रखने के पश्चात् उस पर 2' से 3' मिट्टी की परत चढाते हैं। खाई काफी गहरी होनी चाहिये जिससे कि स्ट्राजाइल्स और मक्खियो के लार्वा खाई से बाहर नही निकल सकें।

(2) रासायनिक पदार्थों का इस्तेमाल

जहा गोबर को खाद के लिए इस्तेमाल करना हो और जहा पर खाद बनाने के दूसरे तरीके काफी महगे हो, वहा यह विधि उपयोग मे लाई जाती है। अगर गोबर मे बीमारी पदा करने वाले जीवाणु हो तो यह विधि खाद बनाने के लिए उपयोगी नही रहती है। इस विधि द्वारा मक्खियो के प्रजनन मे रुकावट पदा होती है और उसम पाये जाने वाले अन्य परजीवियो पर नियंत्रण मे आसानी रहती है। रासायनिक पदार्थों मे पौधो और सब्जियो के लिये विषाक्तता नही होनी चाहिये और साथ ही उनमे कीडो और मक्खियो को मार सकने की क्षमता भी होनी चाहिये। इस पर खर्चा ज्यादा न आने पाए इसलिये उन्हें गोबर की ऊपरी परत (4 से 5") मे ही मिलाया जाता है।

मक्खियो को नियंत्रण मे रखने के लिये रसायन —

(i) हेलीबोर (Hellebore)

इस्तेमाल के लिए ½ पौण्ड हेलीबोर पाउडर 10 गलन पानी म मिलाकर 24 घटे तक छोड देना चाहिये। यह घोल 10 घन फुट खाद के उपचार के लिये

पर्याप्त होता है। घोल छिड़कते वक्त गोबर की ऊपरी सतह पलटते रहना चाहिये जिससे कि वह रसायन उसमे पूरी तरह से घुल जाये।

(ii) सुहागा (Borax)

यह 16 घनफुट खाद मे एक पौण्ड की दर से सूखा ही मिलाया जाता है और बाद मे पानी मिला दिया जाता है, लेकिन उसमें इतना ही पानी मिलायें कि खाद इसे पूरी तरह से सोख ले। एक पौण्ड सुहागे को 6 गैलन पानी मे घोल कर 12–16 घनफुट खाद के लिये इस्तेमाल किया जा सकता है।

(iii) सोडियम फ्लोसिलिकेट (Sodium Fluosilicate)

एक पौण्ड सोडियम फ्लोसिलिकेट को 15 गैलन पानी म घोलकर खाद के ऊपर तब तक छिड़का जाता है, जब तक वह पूरी तरह सोख न लिया जाय।

(iv) बेन्जीन हैक्साक्लोराइड (बी एच सी) और डाइक्लोरो डाइफिनाइल ट्राईक्लोरोइथेन (डी डी टी) Benzene Hexa Chloride or Dichloro Diphenyl Trichloroethane)

गोबर के प्रति वग फुट सतह पर 200 मिलि ग्राम बी एच सी या डी डी टी का घोल बनाकर छिड़काव किया जाता है तथा उसे 2 से 6 सप्ताह के अतराल से दोहराया जाता है।

(v) दूसरी विधियो द्वारा नियत्रण

मूत्र मे अमोनिया की अत्यधिक मात्रा होने के कारण यह गोबर मे पाये जाने वाले कीडो और लार्वाओ को समाप्त करने मे सक्षम रहता है। विशेषत घोड़े का मूत्र इस काय के लिए काम मे लिया जाता है और यह ताजे गोबर के साथ उसके भार के हिसाब से 30 से 40 प्रतिशत मात्रा मे मिलाया जाता है। इसे गोबर के ऊपरी भाग के साथ ही मिलाया जाता है। शुद्ध अमोनिया को भी गोबर के साथ उसके भार के हिसाब से 1 से 5 प्रतिशत मात्रा मे मिलाया जाता है। ताजे मल के साथ यूरिया भी मिलाया जाता है जो इसके भार के हिसाब से केवल 0 75 प्रतिशत मिलाने पर उसमे होने वाले स्ट्रजाइलो को नष्ट करने की क्षमता रखता है।

(3) जैविक विधि

यह विधि बहुत कम खर्चीली है। गोबर को इस तरह सग्रहीत किया जाता है कि उससे मक्खियां और बाह्यपरजीवी आकर्षित नही हो पाते। सड़ने की क्रिया के कारण, एकत्रित गोबर मे तापक्रम बढता है और उससे कुछ गसें बनती हैं जो कि उसमें रहने वाले जीवाणुओ को मारने मे सक्षम होती हैं। इसके लिये उपयोग मे लाई जाने वाली विधियां निम्न हैं—

(i) गोबर को फैलाना या सुखाना (By spreading or drying the manure)

पशुओ के मल को खुले मे पूर्णतया सूखने दिया जाता है। यह विधि ज्यादा फायदेमद नही है, क्योकि सुखाने के कारण मल की कुछ न कुछ उर्वरक शक्ति क्षीण होती है। सूखने के कारण मक्खियां आकर्षित नही होती तथा उसमे होने वाले कुछ जीवाणुओ की मृत्यु हो जाती है। सुखाने की विधि से मल से आने वाली दुर्गन्ध भी समाप्त हो जाती है।

(ii) गोबर को पलटना और दबा कर भरना (Turning over the surface and close packing of manure)

गोबर को एक घिरे हुए भाग मे ही सग्रहीत करके दबाकर भरा जाता है। इसम सडाध क्रिया होने से इसके तापमान मे बढ़ोतरी होती है। यह तापमान अलग अलग गहराई पर बदलता रहता है, जसे एक इच नीचे 97° एफ, 4" नीचे 145 से 115°एफ और सतह से 10" नीचे 160° एफ होता है। इससे यह विदित होता है कि सग्रहीत खाद मे गहराई तक सतह के मुकाबले तापमान अधिक होता है। सभी तरह के लार्वा और ज्यादातर जीवाणु (बिना स्पोर के) 165° एफ पर समाप्त हो जाते हैं। एकत्रित गोबर की ऊपरी सतह पर तापक्रम कम होने से यहा रहने वाले जीवाणु लम्बे समय तक जीवित रह सकते हैं, इसलिये खाद को कुछ समय बाद पलटते रह तो ये जीवाणु भी समाप्त हो जाते हैं। पशुओ के मल को बेवर गोबर गड्ढे मे इकट्ठा करते हैं। इसके चार कक्ष होते हैं जिनमे से प्रत्येक इतना बडा होता है कि उसमे एक सप्ताह का उत्सर्जित मल पदार्थ समा सके। इसे फर्श पर निर्मित लाहे के मजबूत खम्भो और तार की जाली से घेर कर बनाया जाता है जिससे गोबर भीतर ही रुक जाता है। इस विधि मे जाली लगी होने के कारण खाद को दबा कर भरने मे सुविधा नही रहती है। इसके चारो ओर एक नाली बना कर उसमे रसायन भरा जाता है, जिससे गोबर के अन्दर से निकलने वाले मक्खियो व दूसरे जीवो के लार्वे बाहर निकलकर आने पर रसायन मे गिरकर मर जाते हैं। आलनट गोबर गड्ढे का उपयोग भी इसके लिए किया जा सकता है। इस विधि मे तीन तरफ सीमेंट और इटो की दीवार बनी हुई होती है तथा इसकी ऊचाई 4' हाती है। गड्ढा दो बराबर हिस्सो में बटा हुआ होता है। चारो ओर की दीवारो और विभाजन दीवार के अन्दर की ओर ऊपरी सिरे के कुछ इच नीचे, अन्दर की ओर झुके हुए मागरोधक या टॉड लगा दिये जाते हैं, जो रेंगकर दीवारो पर चढ़ते हुए लार्वाओ को ऊपर से निकलने से रोकते हैं। इसमे टाड की ऊचाई तक खाद नही भरी जानी चाहिय। इसके चारो ओर भी नाली बनाई जाती है और यह ठीक बेवर विधि की नाली जसे ही बनाई जाती है। दोनो कक्षो के आगे सीधे ऊपर की ओर खिसकने वाला एक अवरोधक (Shutter) लगा रहता है जो मल पदार्थ को नली मे गिरने से रोकता है।

(iii) बायो गस प्लान्ट या गोबर गस प्लान्ट (Bio gas plant or Gobar gas plant)

जब भी पालतू पशुओ को रखा जाये और अगर उनके मल मूत्र का ठीक विधि द्वारा निस्तारण नहीं हो, तो वे मनुष्यो व पशुओ मे खतरनाक रोग पदा करते हैं और साथ ही पानी, हवा और खाद्य पदार्थों को भी प्रदूषित करते हैं। इस तरह के प्रदूषण व बीमारियो को नियन्त्रण मे रखने के लिये और मनुष्यो तथा पशुओ के स्वास्थ्य की रक्षा करने के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि पशुओ के मल मूत्र का निस्तारण सही ढग से हो। ऐसे मे बायो गस प्लान्ट का उपयोग एक सही तरीका है जिससे मल मूत्र से फलने वाली बीमारियो को नियन्त्रित किया जा सकता है और इससे मक्खियो को प्रजनन कर सकने मे बिल्कुल ही सहायता नही मिलती।

कई स्थानो पर मल को सुखा कर जलान के काम मे लाया जाता है। लेकिन अगर एक भाग मल का चार भाग पानी की मात्रा के साथ मिलावें और बायो गैस प्लान्ट का उपयोग करें, तो इससे जलान के लिये गस और उच्च कोटि की खाद दोनो ही प्राप्त होते हैं। इससे बनी गैस का उपयोग रसोईघर के लियें, बिजली के उपकरण चलाने के लिये तथा प्रकाश की व्यवस्था के लिये भी किया जा सकता है। इसके कारण मिट्टी के तेल, लकडी और कोयल की खपत कम हो जाती है तथा वायुमण्डल मे होने वाले प्रदूषण को रोकने म सहायता मिलती है। गोबर से उत्पन्न होने वाली गस से डीजल इन्जिन चला कर कुओ से पानी तथा आटा पीसने की चक्की आदि भी चलाई जा सकती है। इस विधि म गम स आखो तथा फेफडो मे किसी किस्म का रोग उत्पन्न नही होता है, जो कि गोबर आदि के जलाने से प्राय हो जाता है।

इस विधि से दीमक (White ant) और दूसरे कीडो को नियन्त्रित किया जा सकता है जो कि गोबर म जिन्दा रह कर आसानी से प्रजनन कर सकते हैं। यह विधि बहुत ही लाभदायक है, क्योंकि इसस पशुपालको की माली हालत मे सुधार होता है और उनके स्वास्थ्य पर भी बुरा असर नही पडता।

सामान्यत खादी ग्रामोद्योग का बायो गस प्लान्ट (चित्र 9) का उपयोग गस बनाने के लिये किया जाता है और इसके दो भाग होते हैं।
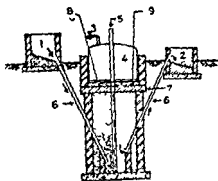
चित्र 9 गोबर गस प्लान्ट। (1) गोबर भरन का कक्ष (2) पाचित स्लरी के लिये कक्ष (3) गैस की निकासी का मार्ग (4) टकी (5) टकी को सीधा रखने क लिये पाइप (6) स्लरी के निकासी के लिये पाइप (7) दीवार (8) गस और (9) स्लरी।

(ए) डाइजेस्टर (Digester)

यह एक छोटा कुआ है जो भूमि के नीचे बनाया जाता है। इसकी दीवारें ईंट या पत्थर की बनती हैं जिन पर सीमेंट का प्लास्टर किया जाता है ताकि कुए से गोबर का पानी भूमि मे नहीं रिस सके। इसकी गहराई 3 5 से 6 मीटर व चौडाई 1 2 से 6 मीटर तक रखी जाती है। कुए के बीच मे एक दीवार खडी की जाती है जो इसे दो बराबर भागो मे विभक्त करती है। यह कुआ भूमि के नीचे बनाया जाता है जिससे कि वायुमण्डल के तापक्रम मे एकाएक होने वाले परिवर्तन का इस पर असर न पड सके। कुए के दोनो भाग मे सीमेंट का एक एक नल लगाया जाता है। नल का कुए के अन्दर के भाग का मुह ऊपर की तरफ रहता है, इसके कारण द्रव गोबर कुए मे नल से आने के बाद इसमे अच्छी तरह मिल जाता है। कुए के दूसरी तरफ लगे नल से जीवाणुओ द्वारा पाचित (Digested) स्लरी कुए से बाहर निकलती रहती है। इस नल का कुए के बाहर की तरफ का भाग, गोबर भरने वाले पहले नल के भाग की अपेक्षा थोडा नीचाई पर रखा जाता है जिससे कि दूसरे भाग से स्लरी स्वत ही निकलती रहती है।

(बी) गैस सग्रहण (Gas holder)

यह लोहे की बनी एक गोलाकार टकी होती है जिसमे बनी हुई गैस इसमे आकर एकत्रित होती रहती है। टकी पत्थर की शिला पर ठहरी रहती है जिस पर थोडा पानी व मोबिल तेल भर कर रखा जाता है, जिससे टकी खराब नही हो पाती। अगर पत्थर की शिला नही लगायी जाये तो टकी सीधे ही गोबर के सपर्क मे रहती है और इसके कारण इसमे जग लगता है और यह शीघ्र ही खराब हो जाती है। पत्थर की शिला के बीचो बीच एक छेद होता है तथा इसमे एक नल लगा रहता है जो कुए और टकी को जोडता है और इसके द्वारा गैस कुए से टकी मे आकर एकत्रित होती रहती है।

विधि

अच्छी गैस बनने के लिये पशुओ या मनुष्यो के मल को एक जगह इकट्ठा करके 10 दिनो तक सडने दिया जाता है। मल व पानी को 1 4 के अनुपात मे मिला कर बायो गैस के भरण वाले कक्ष मे उडेला जाता है। अगर पानी की मात्रा ज्यादा रख दी जाये तो गैस के उत्पादन मे कमी आ जाती है। गैस का उत्पादन ठीक से हो इसके लिये स्लरी का पी एच 6 से 8 तथा तापमान 30° सी से 40° सी के बीच मे होना चाहिये। अगर कुए मे गोबर का तापमान 10° सी से नीचे गिर जाये तब गैस बननी बद हो जाती है और ऐसा अक्सर सर्दी के मौसम मे होता है। तापमान बनाये रखने व गैस के सामान्य उत्पादन के लिये सर्दी के मौसम मे स्लरी को गर्म पानी मे तयार करके कुए मे भरा जाना चाहिये। अगर गोबर की स्लरी काम म नही ली जाये तो शुरू शुरू मे गैस बनाने मे 20 से 30 दिन का समय लगता है। काफी दिनो

बाद स्लरी बायो गैस प्लान्ट के दूसरे भाग मे पहुचती है जो कि उसमे लगे दूसरे नल द्वारा बाहर निकल जाती है। बाहर निकली हुई स्लरी को सीधे ही खेतों में डाल दी जाती है या इसे उपयोग मे लेने तक गड्ढे में भर कर रखा जाता है। इस स्लरी को सुखा कर भी रख सकते हैं ताकि जरूरत के समय खेतो के लिये इसका उपयोग किया जा सके या फिर इसको जलाने के लिये भी काम मे लिया जा सकता है।

बायो-गस प्लान्ट के ऊपर वाले भाग मे उल्टी अवस्था म रखी टकी मे गस एकत्रित होती रहती है जिसे रसोई बनाने या फिर कोई मशीन चलाने के काम म ली जा सकती है। शुरू म टकी म गस व हवा दोनो का मिश्रण रहता है जिसे हवा म छोड दिया जाता है ताकि बाद में इसमें सिफ गस ही इकटठी हो पाये। गस का चूल्हा ठीक से काय करे इसके लिये यह ख्याल रखना चाहिये कि गस ले जान वाली नली मे इकटठे हुए पानी को 10 दिनों में एक बार जरूर निकालते रहना चाहिये।

बायो गस मे कई किस्म की गसें होती हैं, मगर जलाने के लिये सिफ मीथेन गैस ही उपयोगी होती है, जिसकी मात्रा 65 प्रतिशत तक रहती है। मीथन के अलावा इसमे 30 प्रतिशत कावन डाइआक्साइड, एक प्रतिशत हाइड्रोजन सल्फाइड और अश मात्र आक्सीजन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन और कावन मोनो आक्साइड आदि गस होती है। मीथेन गस पैदा करने मे कुछ तरह के जीवाणुओ का दायित्व रहता है। ये जीवाणु स्लरी में उपयुक्त तापमान और पी एच मे ही वृद्धि करते हैं। अगर स्लरी का पी एच अम्लीय हो और तापमान बहुत कम या बहुत ज्यादा हो तो गस बनने मे बाधा उत्पन्न हो जाती है। करीब 4 5 कि ग्रा गोबर से 195 क्यू से मी गस बनती है और 1480 क्यू से मी गस एक लीटर पेट्रोल के बराबर होती है।

मल में निम्न मक्खियां प्रजनन किया करती हैं —

(i) मस्का डामेस्टिका (घरेलू मक्खी) (ii) मस्का सॉर्बेंस (iii) फेनिया केनीकुलेरिस (नही काटने वाली) (iv) स्टोमोक्सिस केल्सीट्रान्स (अस्तबल मक्खी) (v) हीमाटोबिया जाति की (काटने वाली मक्खी) और (vi) लाइपरोसिया जाति की (काटने वाली मक्खी)।

घरेलू मक्खी

पशु चिकित्सक का मुख्य उद्देश्य है कि पशुओ मे रोग फलाने वाली मक्खियों के प्रजनन की रोकथाम करे और ये मक्खिया अक्सर पशुशालाए, कसाईखान, निकास नालियां, कूडे के ढेर, मल मूत्र एकत्रित करने के स्थान और डेयरी म अत्य धिक सख्या मे रहती हैं, जहां इनके कारण टाइफौयड ज्वर और अन्य रोग महामारी का रूप धारण कर सकते हैं। इसलिये मस्का डामेस्टिका के पूण जीवन वृत्त की जानकारी रखना बहुत जरूरी है और यह अनुकूल परिस्थितियो मे 8 9 दिनों मे

पूरा हो सकता है। घरेलू मक्खी काटा नही करती है और ये अपना प्रजनन घोडे, गाय, सूअर और मुर्गी के मल मे किया करती हैं। ये अधेरी जगहो पर अडे दिया करती हैं और इनके लार्वा रोशनी से दूर रहते हैं तथा विकास के दौरान अगर वायु मण्डल का तापमान ज्यादा हो तो ये मर जाते हैं। अडे, गोबर की सतह के नीचे की दरारो मे 120 से 150 की सख्या के छोटे छोटे गुच्छो मे जमा कर दिये जाते हैं। एक मादा घरेलू मक्खी अपने जीवन काल मे 5 या 6 बार अडे देती है और कुल मिलाकर 600 से 900 या इससे भी ज्यादा अडे दे सक्ती है। लार्वा के विकास की स्थिति दो चरण मे पूरी होती है, जैसा कि पहला और दूसरा चरण। दूसरे चरण के विकास के दौरान लार्वा मल से निक्लकर दूर तक चला जाता है, मगर यह दूरी 3 से 20' तक हो सकती है और यह फिर से जमीन मे 4" गहराई तक जाकर प्यूपा मे परिवर्तित हो जाता है। कभी कभी ये जमीन मे 2' अन्दर तक चले जाते हैं। इनको अपना जीवन चक्र पूरा करने के लिये भूमि मे सही तापमान और गीलेपन की जरूरत होती है। ये अपना जीवन चक्र 2 से 3 सप्ताह मे पूण कर लेते हैं। मक्खी खुले आकाश मे 15 मील की दूरी तक जा सकती है।

मक्खी से फैलने वाले रोग

(1) गर्मी के मौसम मे मक्खिया पशुओ व मनुष्यो को आराम के समय तग करती रहती हैं।

(2) मक्खिया बीमारी के जीवाणु एक जगह से दूसरी जगह ले जाती हैं और इससे मनुष्यो व पशुओं की सेहत के लिये बहुत बडा खतरा उत्पन्न हो जाता है। ये दस्त, हैजा, टाइफोयड जैसे खतरनाक रोगो के जीवाणुओ को अपने साथ लिये रहती हैं। बच्चो मे दस्त का रोग मक्खियो द्वारा प्रदूषित किया गया दूध पीने के कारण उत्पन्न होता है। दूध न देने वाली गायो और बछडो मे ग्रीष्म थनला रोग (Summer Mastitis) उत्पन्न करने वाले जीवाणु (**Corynebacterium pyogenes**) मक्खियो द्वारा ले जाये जाते हैं। पक्षी–फीताकृमि (Avian tape worm) और एन्थ्रैक्स स्पोर भी मक्खियो द्वारा स्वस्थ पशु–पक्षियो तक ले जाये जाते हैं।

पशुओं के मल मे पाये जाने वाले सूक्ष्म जीवाणु

पशुओ के मल से जीवाणु मक्खियो, मनुष्यो, पशुओ और पक्षियों द्वारा एक जगह से दूसरे जगह ले जाये जा सकते हैं और इससे पानी हवा और खाद्य पदार्थों का सदूषण होने से ये निम्नलिखित रोग मानव समाज और पशुओं के लिये बहुत बडा खतरा उत्पन्न करते हैं

सक्रामक रोगो के कारण	सूक्ष्म जीवाणुओ की किस्मे	रोग
वाइरस	रिन्डरपैस्ट वाइरस	पशु प्लेग या रिन्डरपस्ट
	सूअर ज्वर वाइरस	सूअर ज्वर (Swine Fever)
बक्टीरिया	बैसिलस एन्थ्रेसिस	एन्थ्रक्स
	क्लोस्ट्रीडियम वेलशाइ	गस गैंग्रीन
	माइकोबक्टीरियम-पैराटयुबरक्युलोसिस	जोने रोग
	साल्मोनेला ग्रुप	टाइफोयड
	माइकोबक्टीरियम-टयुबरक्युलोसिस (गाय, मनुष्य और मुर्गी मे क्षय रोग के जीवाणुओ की किस्मे)	क्षय रोग
	ई कोलाई	ग्रेस्ट्रोएन्टराइटिस
प्रोटोजोआ	आइमेरिया की किस्मे	पशु-पक्षियो म काक्सीडीयोसिस का रोग
हैल्मिन्थ	स्ट्राम्जाइलस की किस्मे (घोडा और गाय की)	स्ट्रान्जाइलोसिस
	डिक्टियोकाउलस विवीपरस	गायो के फुप्फुस कृमि
	हेब्रोनेमा किस्म (घोडे मे)	फीता कृमि रोग
	फीताकृमि किस्मे (पक्षियो मे)	फीता कृमि रोग

दूध

दूध का प्रदूषण

दूध एक लेक्टल स्राव है जो एक या उससे अधिक स्वस्थ व अच्छी तरह से खिलाई गयी गाया को दुहने से प्राप्त किया गया द्रव है। यह दूध बछडा होने के 15 दिनो पूर्व या 5 दिनो पश्चात् तक का नही होना चाहिये तथा इसमे दूध की वसा की मात्रा 3 25 प्रतिशत से कम नही होनी चाहिये। दूध कई जाति के पशुओ से प्राप्त किया जा सकता है और उन्हे उनकी किस्म द्वारा पुकारा जाता है जैसे—गाय भैंस, भेड, बकरी ऊँटनी, घोडी आदि का दूध। ताजे व बिना किसी तरह की मिलावट वाले दूध को पूर्ण दूध (Whole milk) कहा जाता है और अगर इसमे एक से ज्यादा किस्मो के पशुओ का दूध मिलाया गया हो तो इसे मिश्रित दूध कहते है। पाँसटयूराइज्ड (Pasteurised) दूध वह दूध है जिसे भिन्न भिन्न तापक्रम पर अलग अलग समय तक उबलने वाले तापमान से नीचे तापमान पर गर्म किया जाता है जिससे उसमे होने वाले ज्यादातर जीवाणु मर जाएँ और फिर दूध को कम तापमान पर ठडा किया जाता है। स्टरलाइज दूध वह दूध है जिसे उबलने तक या उससे ज्यादा तापमान पर गर्म किया गया हो ताकि उसमे पाये जाने वाले सभी जीवाणु मर जाये।

दूध अपनी बनावट के कारण बहुत ही पौष्टिक तथा आराम से पच सकने के कारण भोजन का मुख्य भाग है। यह नवजात शिशु के लिये ही नही बल्कि बच्चा और बडो के लिये भी एक खास भोजन है। दूध की जरूरत व उपयोगिता से सभी लोग वाकिफ है लेकिन आम लोगो को इसकी शुद्धता के बारे मे ज्ञान नही रहता है। जब इसके उत्पादन के समय या बाद मे रख रखाव व बाटते समय अगर इसकी स्वच्छता का ठीक से ध्यान नही रखा जाय तो इससे आम आदमी के स्वास्थ्य पर उसमे बढने व वृद्धि करने वाले बीमारी के जीवाणुओ के कारण काफी बुरा असर पडता है। भारत म स्वच्छ दूध उत्पादन एक जटिल समस्या है। क्योकि यहा आम जनता, दूध उत्पादन करने वाले, उन्हे बेचने वाले आदि को इसके वैज्ञानिक तौर तरीके से रख रखाव का ठीक से ज्ञान नही होता है। दूध का संदूषण व उसमे मिलावट इसके उत्पादन के बाद उपभोक्ताओ तक पहुचने तक होती ही रहती है और इन्हीं कारणो से उनके स्वास्थ्य को भारी खतरा बना रहता है। यह खतरा मनुष्य के

लिये तब और भी बढ़ जाता है जब दूध देने वाला पशु खुद किसी बीमारी से पीड़ित हो और दूध मे आने वाले जीवाणु मनुष्यो के लिये भी बीमारी पदा कर सकने मे सक्षम हो। ऐसा दूध जब किसी अच्छे दूध के साथ मिला दिया जाता है तब यह सारा दूध उपभोक्ताओ के लिये बीमारी का कारण बन जाता है। इस प्रकार फलने वाली कुछ बीमारिया हैजा, टायफोयड बुखार, सोर थ्रोट, दस्त आदि हैं जिनसे लाखो लोग हर साल ग्रसित होकर मरते हैं। प्रदूषित दूध वह दूध है जिसमे कचरा घुली हुई व तरते रहने वाली अवस्था म या इसके पैंदे मे दिखाई दे तथा इसम मनुष्यों व पशुओ मे रोग पदा करने वाले जीवाणु हो और साथ ही रोग नही पदा कर सकने वाले जीवाणुओ की सख्या भी बहुत ज्यादा होवे। इसलिये दूध के प्रदूषण को रोकने के लिये आम व्यक्ति और दूध उत्पादन व उससे सबधित व्यवसाय वाले व्यक्ति को साफ दूध के उत्पादन के तरीको के बारे मे तथा उसके रख रखाव, वितरण व सग्रहण के बारे मे' भी पूर्ण ज्ञान अर्जित करना चाहिये ताकि मनुष्यो को शुद्ध व आरोग्यप्रद दूध वितरित किया जा सके। दूध की स्वच्छता पशुआ के स्वास्थ्य और उनके ठीक से रख रखाव, दूध व उनके काम म आने वाले बतनो और पशुओ को किस तरह की खुराक व पानी दिया जा रहा है आदि सभी बातो पर निभर करता है।

दूध पानी धात्विक तत्वो (Mineral matter) प्रोटीन, दूध की शक्कर या लेक्टोज और वसा के मिश्रण से बनता है। दूध का ख्याल हमेशा इसलिये रखा जाना जरूरी है क्योकि इसम किसी न किसी प्रकार के जीवाणु हमेशा ही रहते हैं और दूध ऐसा माध्यम है जिसमे जीवाणु आसानी स बढोतरी कर सकते हैं। इसमें पाये जाने वाले जीवाणु दूध पीने पर किसी मे भी रोग उत्पन्न कर सकते हैं। कुछ किस्मो के जीवाणुओ के कारण दूध गाढा हो जाता है तथा ये उसके स्वाद, गन्ध, और पौष्टिक तत्वो आदि पर भी असर करते हैं। इसलिये दूध को अगर एक अच्छे खाद्य पदाथ के रूप मे काम मे लाना हो तो उसे जीवाणुओ से मुक्त रखना ही होगा। मनुष्यो मे दूध से फलने वाले रोगो का बहुत ही महत्व है क्योकि प्रदूषित पानी के बाद दूध ही ऐसा तरल पदाथ है जो प्रदूषित होने पर मनुष्यो मे अधिक रोग फलने का माध्यम है। जब तक दूध को ठीक ढग से नही निकाला जाता, उसमे जीवाणु आते रहेगे। मगर जब पशु खुद ही बीमार हो तो उसके दूध में जीवाणु आते रहेंगे। कुछ दूसरे कारण भी होते हैं जिनसे दूध मे जीवाणु मिलते रहते हैं जसे दूध निकालते समय पशु के थन चमडी पर से जीवाणु दूध मे गिर जाय या घास व बिछावन से उडी मिट्टी के साथ लगे जीवाणु दूध के बतन म हवा द्वारा गिर जाए। जो व्यक्ति दूध निकालता है उसके हाथ और कपडो पर से गन्दे बतन या फिर दूध एक जगह से दूसरी जगह ले जाने या ठीक से सग्रहण करके न रखने से भी जीवाणुओ के द्वारा दूध सदूषित हो जाता है। इस तरह दूध निकालते वक्त से लेकर उपभोक्ता के पास पहुचने तक दूध हर जगह जीवाणुओ द्वारा सदूषित होता रहता है। दूध का प्रदूषण

सिफ जीवाणुओ के उसमे गिरने तक ही सीमित नही रहता है लेकिन यह बढता ही रहता है क्योकि दूध मे वे सभी तत्व रहते हैं जिसके कारण जीवाणु अपनी बढोतरी कर सकते हैं। इन सभी से बचने का एक अच्छा उपाय है कि दूध को निकालने के तुरन्त बाद से उपभोक्ता तक पहुचाने तक उसे ठडी अवस्था मे ही रखा जाये ताकि उसमे रहने वाले जीवाणु अपनी बढोतरी नही कर सकें। भारत म दूध से फैलने वाली बीमारियो की सख्या मे कमी का कारण है कि इसे उपयोग म लेने से पहले उबाला जाता है और इस कारण इसमे होने वाले जीवाणुआ की सख्या म कमी हो जाती है या वे सभी पूणतया समाप्त हो जाते हैं। मगर कुछ जीवाणु दूध उबालने पर भी नही मरते हैं और उनसे उपभोक्ताओ मे बीमारिया फैलती रहती हैं।

दूध से फैलने वाले रोग

दूध से फैलने वाली बीमारियो को निम्न तीन वर्गों मे बाटा जा सकता है –

I दूध द्वारा मनुष्यों मे फैलने वाले पशुओं के रोग

निम्न रोगो के जीवाणु तथा विषैले तत्व मुख्यत पशुओ के द्वारा दूध मे आते हैं और प्रदूषित दूध पीने के कारण मनुष्यो मे ये रोग उत्पन्न होते रहते हैं।

सक्रामक जीवाणु/ अन्य कारण	जीवाणुओ की किस्म/ अन्य कारण	बीमारी
वायरस	खुरपका-मुहपका रोग की वायरस	खुरपका मुहपका रोग
	गायो मे चेचक रोग की वायरस	गायो मे चेचक रोग
	रैबीज वायरस	रैबीज
बक्टीरिया	बेसीलस एन्थ्रेसिस	एन्थ्रेक्स
	स्टैफिलोकोकस औरियस	बाटराइओमाइकोसिस
	ब्रूसेला एबाटस	ब्रूसेल्लोसिस
	ब्रूसेला सुइस	ब्रूसेल्लोसिस
	ब्रूसेला मेलिटेंसिस	ब्रूसेल्लोसिस
	माइकोबैक्टीरियम ट्यूबरक्युलोसिस (गायो की किस्म)	क्षय रोग
	स्ट्रैप्टोकोकाइ किस्म	थनैला रोग
	स्टफिलोकोकाई किस्म	थनैला रोग
	कार्नीबैक्टीरियम पायोजिनिज	थनैला रोग
	बैक्टीरियम कोलाई	थनला रोग
	डिप्थीरोइड किस्म	थनला रोग
	सालमोनीला एन्टरीटिडिस	पाचन क्रिया मे विघ्न उत्पन्न होना

	सालमोनीला वार ड्यलिन	पाचन क्रिया में विघ्न उत्पन्न होना
रिकेटसिया	सालमोनीला टाइफीमूरियम	,,
फगस	रिकेटसिया बर्नेटी	क्यू ज्वर
विषले पौधे	एक्टीनोमाइकोसिस बोविस	एक्टीनोमाइकोसिस
	सफेद स्नेक रूट	ट्रेम्बल्स
	जीम्मीवीड	ट्रेम्बल्स

II दूध द्वारा रोगी मनुष्यों से स्वस्थ मनुष्यों में फैलने वाले रोग

किसी बीमार व्यक्ति या बीमारी के केरियर व्यक्ति के कारण सीधे सम्पर्क में दूध संदूषित हो सकता है या फिर डेयरी के काम आने वाले पानी और बर्तन इन लोगों द्वारा संदूषित हो सकते हैं या इनके द्वारा वायु भी दूषित हो सकती है और दूध जब भी इसके सम्पर्क में आता है तो वह भी दूषित हो जाता है। इस प्रकार दूध के माध्यम से एक बीमार मानव से स्वस्थ मानव तक जीवाणु आसानी से पहुंचकर उनमें रोग पैदा करते रहते हैं।

संक्रामक जीवाणु	जीवाणुओं की किस्म	बीमारी
वायरस	पोलियोमायलाइटिस रोग की वायरस	पोलियो
बक्टीरिया	विब्रियो कौलेरा	हैजा
	बसिलस डिप्थीरिया	डिप्थीरिया
	बैसिलस डिसेन्ट्री	डिसेन्ट्री
	स्टफिलोकोक्स औरियस	आहार विषायण
	बसिलस टायफोसस	टायफोयड ज्वर
	सालमोनीला पैराटायफी	पराटायफोयड ज्वर
	स्ट्रेप्टोकोक्स हिमोलिटिक्स	स्कारलेट ज्वर
	माइकोबक्टीरियम ट्यूबरक्यूलोसिस (मानवीय प्रकार के जीवाणु)	मानवीय प्रकार का क्षय रोग

III दूध से मनुष्यों में फैलने वाली अन्य बीमारियां

(1) अमाशय व आंत्र की बीमारियां

(2) दूध विषायण या गेलक्टो विष

I दूध द्वारा मनुष्यों मे फैलने वाले पशुओं के रोग –

(1) खुरपका मुंहपका रोग (Foot and Mouth Disease)

यह रोग एक अति सूक्ष्मदर्शी वायरस के कारण होता है। सभी खुर वाले पशुओं और खासकर गो पशुओं सूअरों तथा भेड व बकरियो मे होने वाली यह एक

उग्र अति सक्रामक बीमारी है। इस बीमारी मे मुह तथा परो मे छालेदार घाव बन जाते हैं। मादा पशुओ मे अयन व थनो पर छाले निकल आते हैं तथा ये दूध दुहने पर फट जाते हैं। अयन प्राय सूजा हुआ रहता है। थननली मे वायरस के पहुचने पर दूध दूषित हो जाता है।

इस बीमारी से ग्रसित हुए पशु का दूध पीने से यह रोग मनुष्यो मे भी उत्पन्न हो जाता है। बडो की अपेक्षा यह रोग बच्चो मे ज्यादा असर करता है। इससे पेट व आतो की बीमारी उत्पन्न होती है, गले मे सूजन आना, ग्रीवा ग्रथी (Cervical gland) मे वृद्धि और कभी कभी मुह मे हाथो, कानो सीने और भुजा पर छाले हो जाने हैं। कभी कभी इसके कारण उल्टी व दस्त भी होती है। इस बीमारी के पशु का दूध बिना उबाले या फिर कच्चा उपयोग किया जाये तो मनुष्यो मे भी यह रोग हो जाता है।

इस रोग के कारण बीमार पशु मे दूध के उत्पादन मे कमी हो जाती है तथा दूध बहुत ही पतला होता है। यह दूध लिसलिसा होता है तथा इसे अगर कुछ देर के लिये रख दिया जाये तो दध के पैंदे मे कुछ पदाथ इकटठे हो जाते हैं और गम करने पर यह जम जाता है।

बीमार पशु के दूध मे इस बीमारी की वायरस नही होती है मगर जब ऐसे पशुओ का दूध निकाला जाता है तब उनके थन पर होने वाले फफोले फट जाते हैं। इन फफोलों के द्रव मे वायरस होती है जो बडी आसानी से दूध निकालते समय उसमे मिल जाती है।

खुरपका मुहपका रोग को मनुष्यो मे फलने से रोकने के लिये बीमार पशुओ का दूध बिना उबाले काम मे नही लेना चाहिये। ऐसे दूध को अन्य स्वस्थ पशुओ के दूध मे नही मिलाया जाना चाहिये। दूध को पॉसट्यूटराइज करने से इस बीमारी की वायरस प्राय मर जाती है। अगर दूध मे इस बीमारी की वायरस हो तो दूध का 50° सी पर 15 मिनट या 70° सी पर 10 मिनट तक रखने पर या दूध का 85° सी तापमान होते ही यह वायरस तुरन्त समाप्त हो जाती है।

(ii) गायों की चेचक (Cow pox)

यह गाया मे धीमी गति से फलने वाला वायरस रोग है जिसमे शरीर की चमडी पर फुन्सिया हो जाती हैं। यह गायो मे ग्वालो के हाथा द्वारा फैलता है। पशु के आयन व थनो पर जब फुन्सिया होती हैं तब दूध निकालते समय रगड के कारण ये फूट जाती हैं और इससे दूध दूषित हो जाता है। इस बीमारी के कारण पशु का दूध पतला हो जाता है तथा वह जम जाता है। यह दूध बच्चो और बडो के लिये ठीक नही रहता है। दूध मे इस वायरस के रहने के कारण बच्चो व बडा म बुखार व

शारीरिक कष्ट पदा होते हैं। यह खासकर उनको होता है जिनके चेचक (Small pox) का टीका नही लगाया गया होता है।

इस बीमारी से बचने के लिये बीमार गाय का दूध पीने के काम में नही लेना चाहिये। दूध को जब 48° सी पर गम किया जाता है तो गायों के चेचक रोग की वायरस प्राय नष्ट हो जाती है।

(iii) रबीज (Rabies)

रबीज मूलत कुत्ता आदि का रोग है और उन्ही के द्वारा फलता है। गा और दूसरे दूध देने वाले पशुओ मे यह रोग रबीड कुत्ते के काटने के कारण फलता है रैबीज वायरस बीमार कुत्ते की लार म मौजूद रहती है। जब रैबीज वायरस रोग ग्रस्त दूध देने वाले पशु के केन्द्रीय नाडी मण्डल तन्त्रिका मे उपस्थित हो तो वह उस पशु के दूध व शरीर से दूसरे निकलने वाले स्राव मे भी पाई जाती है। दूध मे इस वायरस का पाया जाना शायद इतना खतरनाक नहीं है क्योंकि यह वायरस मुह और पाचन सस्थान की सामान्य अवस्था म रहने वाली श्लेष्मा झिल्ली को पार करके शरीर मे प्रविष्ट नही कर सकती। अगर मुह या पाचन सस्थान म किसी भी जगह कोई घाव हो तो यह वायरस शरीर में रोग पदा कर सकती है। इसलिये रबीज बीमारो से पीडित पशु का दूध कभी भी उपयोग मे लेने के योग्य नही माना जाता है।

(iv) एन्थ्रक्स (Anthrax)

एन्थ्रक्स तीव्र सक्रामक रोग है जो बेसीलस एन्थ्रसिस नामक सूक्ष्म जीवाणु के कारण होता है। इस रोग से बीमार पशु के दूध मे भी ये जीवाणु पाये जाते हैं। मगर मुख्यत ऐसा पशु के मरने के कुछ समय पहल ही होता है। पशु मे दूध आना प्राय रुक जाता है इसलिये दूध द्वारा इस रोग के फलने का प्रतिशत काफी कम है। फिर भी इस रोग से पीडित पशु के दूध को काम मे नही लेना चाहिये क्योकि खून से जीवाणु दूध मे आते हैं। एन्थ्रक्स से पीडित पशु के दूध को बिल्कुल ही काम मे नही लेना चाहिये और न ही ऐसे दूध को अन्य पशुओ के दूध मे ही मिलाएँ। ऐसे पशु को अलग जगह पर रखें और उसके मल व मूत्र का वज्ञानिक तरीके द्वारा निस्तारण करें ताकि इस रोग के जीवाणु किसी भी माध्यम द्वारा दूध तक नही पहुच सकें।

(v) बॉटराइओमाइकोसिस (Botriomycosis)

स्टैफिलोकोक्स औरियस के कारण दुधारू गायो मे थनला रोग दीघ-स्थायी श्रेणी का होता है जिसके कारण बहुत अधिक आर्थिक क्षति होती है। इस जीवाणु द्वारा उत्पन्न रोग को वाट्राइओमाइकोसिस कहते हैं। इस जीवाणु के कारण विपले लक्षण उत्पन्न होते हैं। आमतौर पर इस रोग की उत्पत्ति के कारण स्तन

ऊतक का काफी भाग जीवाणुओ के आक्रमण के कारण बेकार हो जाता है। इस रोग के कारण अयन मे दानेदार दीर्घ स्थायी विकार हो जाते हैं। ये जीवाणु दूध मे होने पर यह मनुष्यो मे भी बीमारी उत्पन्न करते हैं।

जो गायें बाट्राइओमाइकोसिस रोग से पीडित हो उनका दूध काम मे नही लेना चाहिये। दूध को अगर उपयोग मे लेना हो तो उसे पॉसटयूराइज करके ही काम में लिया जाना चाहिये।

(vi) ब्रूसेल्लोसिस (Brucellosis)

ब्रूसेल्लोसिस बीमारी मनुष्यो, बकरियो, सूअरो तथा अन्य कई पशुओ मे भी होती है। इस जीवाणु की तीन किस्मे मुख्यत पाई जाती हैं जो ब्रूसेला एबाटस, ब्रूसेला सुइस और ब्रूसेला मेलिटेंसिस है। ये तीनो तरह के जीवाणु मनुष्यो मे बीमारी पदा कर सकते हैं। ब्रूसेल्लोसिस बीमारी भारत म भी पाई जाती है और इसके जीवाणु दूध द्वारा मनुष्यो तक पहुच कर उनमे बीमारी पदा करते हैं। बीमार पशु के दूध मे इस बीमारी के जीवाणु काफी बडी तादाद मे होते हैं।

यह मनुष्यो मे दीर्घ स्थायी श्रेणी का रोग है जिसमे उनमे सिर दुखना, जोडो मे गठिये की बीमारी की तरह ही दद रहना, कब्ज व रक्त की कमी आदि लक्षण प्राय देखे जा सकते हैं। इस रोग से मृत्यु तक हो सकती है। यह रोग बीमार पशुओं के सम्पक म आने वाले व्यक्तियो मे भी हो जाता है जिनमे मुख्यत पशु चिकित्सक, ग्वाले, दूध, मास व चम उद्योग मे लगे लोग आदि हैं।

इस रोग से पीडित पशुओ के दूध को काम म नही लेना चाहिये। अगर दूध काम म लेना हो तो दूध को पॉसटयूराइज करना चाहिये। बीमार पशु का पता लगाकर उसे अन्य पशुओ से अलग रखना व उचित उपचार करना चाहिये। ऐसे पशु का दूध स्वस्थ पशुओ के दूध मे नही मिलाना चाहिये। बीमार पशुओ का दूध उनके बच्चों को भी नही पिलाना चाहिये।

(vii) क्षय रोग (Tuberculosis)

यह एक ससर्गी रोग है जो माइकोबक्टीरियम टयूबरक्युलोसिस के कारण उत्पन्न होता है। यह रोग मनुष्यो और पशुओ में पाया जाता है। उष्ण रक्त वाले पशुओ मे क्षय रोग के तीन किस्म के जीवाणु पाये जाते हैं, यथा मानव, गाय और पक्षी। गायो की किस्म का क्षय जीवाणु इनमे से सर्वाधिक महत्वपूर्ण है क्योकि इससे मनुष्य भी सक्रमित हो सकते है। यही कारण है कि आज गायो के इस रोग के सक्रमण पर अधिक ध्यान दिया जा रहा है और दूध के सम्भरण मे इस रोग का बहुत महत्व है। भारत मे करीब सत्तर लाख व्यक्ति क्षय रोग से ग्रसित हैं। इस रोग से होने वाली वार्षिक मृत्यु दर दस लाख तक है। भारत मे प्रति मिनट एक व्यक्ति इस रोग से मरता है तथा इस रोग से ग्रसित कमजोर हुए लोगो की शारीरिक अक्षमता के

कारण हमारे देश को प्रतिवर्ष अनुमानतः दो हजार करोड़ रुपये की हानि होती है। गायों मे क्षय रोग आमतौर पर चिरकालीन होता है और पशुओं म यह रोग धीरे धीरे बढ़ता है। यह रोग अधिक मात्रा मे दूध देने वाली गायो मे ज्यादा पाया जाता है। क्षय रोग के पशुओ मे यह बीमारी कभी भी उग्र रूप धारण कर सकती है जैसे कि मौसम मे अचानक परिवर्तन ब्याने के कारण शारीरिक शक्ति की कमी होना, इन सभी के कारण पशु में प्राकृतिक प्रतिरोधक्षमता में एक दम कमी आ जाती है जिससे क्षय रोग के जीवाणु पशु के शरीर के अन्य भागो म पहुच कर उग्र रूप धारण कर लेते हैं तथा ऐसे पशु कुछ सप्ताहों म ही मर जाते हैं। क्षय रोग ज्यादा उम्र की गायो मे अधिक होता है।

क्षय रोग के जीवाणु प्रश्वसन द्वारा शरीर मे प्रविष्ट होते हैं। सांस की वायु और कफ मे ये जीवाणु फेफड़ों के क्षय रोग के कारण अधिक मात्रा म होने हैं। ये संक्रमण के सक्षम स्रोत होते हैं। क्षय रोग के जीवाणुयुक्त कफ को निगलने पर आंत्रायोजनी ग्रन्थियां और यहां तक कि आंत की भित्तियां भी इसके कारण रोग ग्रस्त हो जाती हैं। ऐसे पशु के मल म भी क्षय रोग के जीवाणु पाये जाते हैं। गाय के गुर्दे भी इस रोग से ग्रसित हो जाया करते हैं और इसी कारण मूत्र के साथ मे जीवाणु शरीर से निकलते रहते हैं। जब यह रोग गाय के गर्भाशय में हो तो इस रोग के जीवाणु पशु की योनि के स्राव म भी पाये जाते हैं।

क्षय ग्रस्त अयन वाली गायो के दूध से उनके बछड़े और ऐसा दूध पीने पर बच्चे और बड़े भी रोग ग्रस्त हो जाते हैं।

अगर गाय का अयन क्षय रोग स ग्रस्त न हो तो उसके जीवाणुयुक्त मल मूत्र या योनि के स्राव से भी दूध सदूषित हो सकता है इसलिये ऐसे पशुओं का पूरा ख्याल रखना चाहिये ताकि वे दूध को सदूषित न कर पाए। इस रोग के कारण दूध देने वाली गाय के अयन मे काफी सूजन रहती है, तथा सुप्रा अयन लसग्रन्थि (Supra mammary lymph gland) मे सूजन आने के कारण वह फूल जाती है। इनका दूध दिखने मे तो सामान्य होता है मगर यह पतला व पानी की तरह होता है। कुछ अवस्था मे यह पीले रंग का हो जाता है तथा इसम दाने नजर आते हैं। दूध क्षारीय हो जाता है। काफी समय पश्चात् अयन से दूध आना बन्द हो जाता है तथा उससे पूरूलेन्ट द्रव्य निकलता है।

डा सोपारकर के अनुसार भारत में 16 से 20 प्रतिशत गायें और भैंसे क्षय रोग से ग्रसित हैं। लेकिन भारत मे इस रोग की प्रतिशत कम होने का कारण शायद यहा की तेज धूप और दूध को उबाल कर फिर काम मे लेना है जिनके कारण मल मूत्र और दूध म होने वाले क्षय रोग के जीवाणु शीघ्र ही समाप्त हो जाते हैं। क्षय रोग से ग्रसित गायो को निम्न तीन श्रेणियो म बाटा जा सकता है —

1 जिन गायो की अयन क्षय रोग से ग्रसित हो, ऐसी गायो का दूध अगर स्वस्थ गायो के दूध मे मिला दिया जाये तब भी यह सारा दूध क्षय रोग फैला सकता है।

2 जिन गायो की अयन एकदम ठीक हो लेकिन शरीर के दूसरे अग क्षय रोग से ग्रसित हो तब भी उस पशु के दूध मे क्षय रोग के जीवाणु पाये जा सकते हैं। ऐसी गायो का दूध भी खतरनाक होता है।

3 जिन गायो मे क्षय रोग के लक्षण जरा भी नजर नही आए मगर ट्यूबर कुलिन परीक्षण करने पर क्षय रोग का पता चले तब ऐसी गायो के दूध को शक की निगाहो से देखा जाता है और ऐसा दूध पीने वाले को क्षय रोग हो सकता है।

क्षय रोग की रोकथाम के लिये ऊपर लिखे गये सभी प्रकार की क्षय ग्रस्त गायो के दूध का उपयोग नही करना चाहिये। इन गायो को डेयरी से निकाल देना चाहिये ताकि स्वस्थ पशुओ और बछडो म यह रोग नही फलने पाए। इसके लिये निम्न तरीके अपनाये जा सकते हैं—

1 गायो की समय समय पर पूण शारीरिक जाच करना। उनकी अयन, सूत्रा अयन और अ य ग्र थया की जाच करना। पशु की नाक, योनि के स्राव, दूध, मल मूत्र की क्षय रोग के जीवाणुओ के लिये सूक्ष्मदर्शी परीक्षा या जविक परीक्षा करना।

2 दूध को पॉसटयूराइज (85° सी पर बीस मिनट तक रखना) करके जावाणुओ को समाप्त करना।

3 उस गाय का दूध बेचना अपराध क्रार दें जिसके दूध मे क्षय रोग के जीवाणु मौजूद हो या अयन क्षय रोग से गस्त हो।

4 ट्यूबरकुलिन परीक्षण की अभिक्रिया करने वाले और न करने वाले पशुओ को पृथक करें और बीमार पशुओ की सवथा अलग से व्यवस्था करे।

5 नये पशु डेयरी मे लाने से पहले उसकी क्षय रोग के लिये जाच करें।

6 पशुघर खुले हो ताकि पशुओं को हर समय ताजी हवा मिलती रहे।

7 क्षय रोग से ग्रस्त पशु को डेयरी से हटा कर उसके मालिक के लिये मुआवजे की व्यवस्था करनी चाहिये।

(viii) थनला रोग (Mastitis)

थनला राग दूध देने वाले पशुओ मे उनके स्त‌न ऊतक पर जीवाणु के आक्रमण के कारण होता है, किन्तु कुछ अ य कारणो से भी यह रोग उत्प न हो सकता है। इस रोग के कारण दूध खराब होने और अयन के ऊतको को हानि होने के कारण बहुत अधिक आर्थिक क्षति होती है व इसके जीवाणुयुक्त व जीवविषो के कारण

मनुष्यो के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पडता है। इस रोग के कारण प्रारम्भिक अवस्था मे दूध म कोई खास परिवतन केवल आख से दिखाई नही देता, मगर दूध में छोटे थक्के बनने लग जाते है, जो ध्यान से देखने पर कभी कभी केवल आरम्भ के दूध की कुछ धारो मे ही नजर आते हैं। कुछ समय पश्चात् जीवाणुओ के कारण अयन सूज जाता है और दूध थक्केयुक्त मट्ठे जसा हो जाता है। इस रोग के कारण दूध का स्वाद, रग पी एच और उसके सघटन के पदार्थों की प्रतिशत मे भी बदलाव हो जाता है और अनुचित दुर्गन्ध भी उत्पन्न हो जाती है। जसे जसे बीमारी बढती है पशु का दूध गाढा तिसलिसा या फिर पानी के जसा पतला और नमकीन स्वाद वाला एव अरुचिकर हो जाता है। उससे बने मक्खन मे गध होती है और पनीर बनाने मे कठिनाई होती है। थनला रोग कई किस्मो के जीवाणुओ द्वारा होता है, लेकिन मुख्यत यह स्ट्रप्टोकोकाई स्टफिलोकोकाई, कार्नीबक्टीरियम पायोजिनिज, बक्टीरियम कोलाई एव डिप्थीरोइड जीवाणुओ द्वारा होता है।

थनला रोग के पशु का दूध पीने पर मनुष्यो मे प्राय चक्कर, उल्टी, दस्त, बुखार, मूर्छा जसे लक्षण देखे जा सकते हैं। अत इस रोग से पीडित पशुओ का दूध उबाले बिना पीने के उपयोग मे नही लेना चाहिये क्योंकि ऐसे दूध म अक्सर जीवाणुओ के होने की सभावना बनी रहती है। सदूषित दूध द्वारा बच्चो व बडो मे स्कारलेट ज्वर एव पूति गलदाह (Septic sorethroat) जसी बीमारिया फलती हैं।

थनला रोग की रोकथाम के लिय पशुओ के अयन का समय समय पर मुआयना करते रहना चाहिय। इसके लिये अयन को थपथपा कर और दूध के आसान परीक्षण करके इस रोग का निदान करना चाहिये। अगर जरूरत हो तो प्रयोगशाला मे दूध की परीक्षा करानी चाहिये ताकि पशु के इस रोग का सही उपचार किया जा सके।

पशु मालिक या ग्वालो को गायो म थनैला रोग के लक्षण की जानकारी देनी चाहिये।

इस रोग का सही समय पर पता लगाने के लिये सभी गायो या दूध देने वाले पशुओ का दूध एक काले रग की उथली तश्तरी म लेकर उसम सूक्ष्म थक्को की मौजूदगी के लिये निरीक्षण किया जाना चाहिये।

सक्रमित गायो का दोहन सबस बाद म करना चाहिये।

ग्वाला को अपने हाथो को प्रत्येक गाय के दोहन से पूव धोते रहना चाहिये।

ग्वालो को दूध द्वारा अपने हाथो को नम नही करना चाहिये।

थनो या अयन पर लगी चोट की तुरत व उचित चिकित्सा करनी चाहिये।

अयनो से निकले सक्रामक दूध या स्राव को जमीन पर नही दुहना चाहिये, बल्कि उन्हें इकट्ठा करके उपयुक्त विधि द्वारा नष्ट कर देना चाहिये। ऐसे दूध को पीने या अन्य काम के लिये उपयोग म नहीं लाना चाहिये।

(xii) मनुष्यो मे दूध से उत्प न होने वाला रोग या डयरी के जानवरो मे ट्रेम्बल (Milk sickness in man or trembles in Dairy Animals)

मनुष्यो मे दूध से उत्पन्न इस रोग का कारण उन गायो का दूध पीना है जिन्होने कुछ विषले पौधे खाये हो। पशुओ मे यह रोग सफेद स्नेकरूट और जीम्मी वीड के खाने से उत्पन्न होता है और इस रोग को ट्रेम्बलस कहते हैं। इन पौधो म ट्रीमीटोल नाम का विषला पदाथ होता है जो पशुओ मे रोग पदा करने की क्षमता रखता है।

इस रोग स ग्रसित पशुओ को चलने म दिक्कत हाती है तथा एक बार बटने पर अपने आप खडे होने मे दिक्कत दरसाते हैं। कुछ समय पश्चात् पशुओ म कप कपी, बचेनी और लकवे आदि के लक्षण दिखाई देते हैं और बाद मे वे मर भी सकते हैं।

ऐसी गायो का दूध पीने पर मनुष्य भी बीमार हो जाते हैं और वे मर भी सकते हैं। मनुष्यो मे इस बीमारी के कारण कमजोरी, चक्कर आना, भूख न लगना, लगातार उल्टी होना, सास लेने मे दिक्कत, शरीर का तापक्रम सामान्य से कम होना और पेट मे दद आदि लक्षण देखे जा सकते हैं। इस बीमारी के कारण मनुष्यो मे प्यास बढ जाती है, जीभ फूल जाती है और उस पर धारियां नजर आती हैं तथा चमडी रूखी दिखाई देने लगती है। जो व्यक्ति इस बीमारी के बाद ठीक हो जाये उसे काफी दिनो तक शारीरिक कमजोरी रहती है। अगर इस बीमारी के विषलेपन से मनुष्य ठीक नही हो तो उसके कारण उसकी मृत्यु तक हो सकती है।

इस रोग से ग्रसित पशु का दूध उपयोग मे नही लेना चाहिये। दूध को पॉस टयूराइज करने पर ट्रीमीटोल विष बहुत धीरे धीरे समाप्त होता है, इसलिये यह विधि विष को निष्क्रय करने के लिये ज्यादा उपयुक्त नही रहती है।

(II) दूध द्वारा रोगी मनुष्यों से स्वस्थ मनुष्यों मे फलने वाले रोग —

मनुष्यो मे होने वाले कुछ रोग के जीवाणु दूध द्वारा एक बीमार व्यक्ति से स्वस्थ व्यक्ति तक पहुच सकते हैं और ये निम्न हैं —

(i) पोलियोमायलाइटिस (Poliomyelitis)

यह एक वायरस रोग है तथा मनुष्यो मे इस रोग के कारण ज्वर तथा लकवा हो जाता है। इस रोग की वायरस रोगी के नाक तथा मुख के स्राव मे रहती है। रोगी जब भी हथेली मुख पर रखकर खासता है तब इस रोग के जीवाणु कफ की बूदो के द्वारा वायुमण्डल मे प्रवेश करते है तथा हथेली पर भी आ जाते हैं। फिर ऐसे व्यक्ति द्वारा दूध निकालने पर ये जीवाणु हथेली से या दूषित वायुमण्डल से दूध मे पहुच जाते हैं। इस रोग के जीवाणु रोगी के मल मे भी रहते हैं और इससे यह पानी तथा भोजन को भी दूषित करते रहते हैं। अगर इस वायरस से दूषित हुए

पानी का उपयोग दूध के बर्तन धोने या दूध देने वाले पशु के अयन या थन धोने के उपयोग मे लाया जाये तो पोलियोमायलाटिस रोग की वायरस बडी आसानी से दूध तक पहुच कर उसको उपयोग मे लेने वाले बच्चो या बडो को पोलियो की बीमारी से पीडित कर सकती है। इस रोग से बचने के लिये दूध को उबालकर या पॉसटयूराइज करने के बाद ही उपयोग मे लाना चाहिये ।

(ii) हैजा (Cholera)

विब्रियो कौलेरा जीवाणु द्वारा केवल मनुष्या मे ही हैजे का रोग होता है। इस जीवाणु का सक्रमण मुख के द्वारा होता है। इन जीवाणुओ के द्वारा सदूषित हुए भोजन, पानी और दूध के द्वारा इस रोग के जीवाणु मनुष्य के आत्र मे प्रवेश करते हैं। यह रोग मक्खी तथा वाहक (Carrier) द्वारा भी फैलता है। यह जीवाणु प्राय हैजे के रोगी के मल मे मिलता है। इस रोग के जीवाणु बीमार मनुष्यो की गन्दी आदतो के कारण या मक्खी के कारण दूध को सदूषित करते हैं। अगर ऐसे दूध को ठीक से नही उबाल कर या पॉसट्यूराइज नही करके पीने के काम मे लिया जाये तो यह रोग मनुष्यो मे तुरन्त फलता है। इस रोग के जीवाणु दूध मे ज्यादा समय तक जिन्दा नही रह सकते इसलिये सदूषित दूध द्वारा मनुष्या मे यह रोग महामारी के रूप मे नहीं फलता। इस रोग को दूध द्वारा फैलने से रोकने के लिये हैजे से पीडित रोगी को दूध के व्यवसाय से दूर रहना चाहिये तथा जो पानी, दूध व हाथ धोने के व पशु के थन धोने के काम मे लाएँ वह पूर्ण रूप से शुद्ध व आरोग्यप्रद होना चाहिये। जल के अभाव मे सूखी जगह पर यह जीवाणु ज्यादा समय तक जिन्दा नही रह सकता। चूने के एक प्रतिशत घोल मे यह एक घटे मे मर जाता है।

(iii) डिप्थीरिया (Diphtheria)

यह रोग बैसिलस डिप्थीरिया नाम के जीवाणु द्वारा होता है। यह रोग प्राय बच्चो मे होता है। रोगियो मे इस रोग के जीवाणु उनके कण्ठ, स्वरयन्त्र, नाक, आख आदि मे रहते हैं तथा दूध निकालने के दौरान ये जीवाणु रोगियो के खासने, नाक साफ करने या बातें करते रहने से दूध तक पहुचते है। ये जीवाणु दूध मे बढोतरी भी करते रहते हैं और इसके कारण दूध मे कुछ भी खराबी नजर नही आती। ये जीवाणु दूध को उबालने पर समाप्त हो जाते हैं।

इस रोग के कारण रोगी के कण्ठ मे झिल्ली बनने से उसे सास लेने मे कठिनाई होती है। यह जीवाणु रोगी के शरीर मे बहिर्जीव विष उत्पन्न करता है। इस विष के कारण हृत्पेशी (Myocardium) तथा तन्त्रिका सस्थान मे विकृति होती है जिससे हृदय गति रुक सकती है या लकवा भी हो सकता है।

इस रोग को फलने से बचाने के लिये दूध के व्यवसाय मे डिप्थीरिया के रोगी या इस रोग से ठीक हुए व्यक्ति को दूध दुहने या वितरण के काम मे नही लिया

जाना चाहिय। इस रोग से ठीक हो जाने के बाद भी रोगी के कण्ठ मे काफी समय तक ये जीवाणु मिल सकते हैं। ऐसे लोगो को केरियर कहा जाता है। इस रोग को दूध द्वारा फलाने मे करियर का प्रमुख हाथ होता है। दूध को उबाल कर या पॉसटयूराइज करके उपयोग में लेना चाहिये।

(iv) डिसे्ट्री (Dysentery)

बॅसिलस डिसेन्ट्री रोग के जीवाणु रोगग्रस्त व्यक्ति से दूध द्वारा स्वस्थ लोगो तक पहुच कर उनमे डिसेन्ट्री उत्पन्न करते हैं। यह रोग बच्चा मे ज्यादा पाया जाता है। यह रोग अक्सर जीवाणुयुक्त बिना गम किये हुए दूध को पीने पर होता है। इस रोग के कारण बच्चो म मृत्यु तक हो सकती है। इसलिये जब भी इस तरह का रोग बच्चो मे फैले तब पूण सावधानी के साथ बीमार रोगी का पता लगाने की कोशिश करनी चाहिये ताकि उसके द्वारा दूध को सदूषित होने से बचाया जा सके।

(v) आहार विषायण (Food Poisoning)

आहार विपायण से सबधित रोग के जीवाणु भी दूध मे ठीक उसी प्रकार आ सकते हैं जसे कि दूसरी बीमारियो वाले जीवाणु दूध तक पहुचते हैं। इनमे बहिर्जीव विष पैदा करने वाला स्टॅफिलोकोकस ऑरियस जीवाणु प्रमुख है तथा यह जीवाणु दध मे गायो से या मनुष्यो से आता है। अगर दूध पूणतया ठीक से ठडा करके नही रखा जाये तो यह जीवाणु दूध मे बहिर्जीवविष उत्पन्न करता रहता है। ऐसे दूध को उबालने पर ये जीवाणु तो नष्ट हो जाते हैं मगर उन के द्वारा पदा किये गये विष पर कुछ भी प्रभाव नही पडता। ऐसे दूध को पीने पर उस व्यक्ति को पेचिस और पेट दद आदि की शिकायत रहती है। दूध, रोग ग्रस्त व्यक्ति या केरियर द्वारा भी सदूषित हो सकता है और ये जीवाणु दूध मे बढोतरी करके बहिर्जीवविष बनाते रहते हैं। इससे बचने के लिये डेयरी मे काम करने वाले लोगो का पूणतया स्वस्थ होना जरूरी है और दूध के काम मे आने वाले वतन व पानी का साफ होना भी जरूरी है ताकि आहार विपायण जीवाणु दूध तक नही पहुच सकें।

(vi) टायफोयड ज्वर (*Typhoid fever*)

मनुष्यो म यह रोग बसिलस टायफोसस के कारण होता है। यह रोग पशुओ में नही होता। मनुष्य के शरीर मे ये जीवाणु भोजन, जल या दूध द्वारा प्रवेश करते हैं। मनुष्य जब टायफोयड ज्वर से ठीक हो जाता है तब भी उसके आत्र मे इस रोग के जीवाणु काफी लम्बे काल तक रहते हैं और ये उसके मल द्वारा शरीर से बाहर निकलते रहते हैं। कुछ रोगियो के पित्ताशय (Gall bladder) मे ये जीवाणु अनेक वर्षों तक रहते हैं खासकर स्त्रियो के पित्ताशय में। ऐसे रोगियो को केरियर कहते हैं। दूध द्वारा इस रोग को फलने में मक्खियों की खास भूमिका है। ये जीवाणु रोगी के मूत्र के द्वारा भी शरीर से बाहर निकलते रहते हैं।

जैसा कि विदित है टायफौयड रोग पानी द्वारा फैलता है, ठीक उसके बाद दूध का भी दूसरा स्थान है जिससे इस रोग के जीवाणु मनुष्यो तक पहुच कर उनमे रोग उत्पन्न करते हैं। इस रोग के जीवाणु पानी मे रहने पर उसके द्वारा धोये गये किसी भी दूध के बतन मे रह कर मनुष्यों तक पहुच जाते हैं। जो व्यक्ति टायफौयड रोग से पीडित हो या केरियर हो उनके द्वारा भी दूध का सदूषण होता है और लोगो मे टायफौयड रोग दूध द्वारा फैलता रहता है।

टायफौयड रोग के जीवाणु दूध मे अपनी बढोतरी करते रहते हैं मगर ऐसा तब होता है जब दूध का तापक्रम 37° सी के आसपास हो। किन्तु जब दूध दुहने के बाद अगर उसे तुरन्त ठडा किया जाये तो दूध मे ये जीवाणु ज्यादा मात्रा मे अपनी बढ़ोतरी नही कर सकते। अगर दूध मे इन जीवाणुओ की सख्या बहुत बढ जाये तो भी उस दूध के रग, स्वाद व सामान्य गुणो मे कोई परिवतन नही दिखाई देता। दूध मे यह क्रीम के साथ-साथ उसकी सतह तक आ जाते हैं और इस सदूषित क्रीम को खाने पर रोग उत्पन्न होते हैं। दूध द्वारा इस रोग को फैलने से रोकने के लिये टायफौयड रोगी व केरियर को दूध दुहने या वितरण आदि काम नही करने देना चाहिये। बतन आदि धोने के लिये साफ पानी का उपयोग करना चाहिये। दूध दुहने के बाद तुरन्त ठडा करके रखना चाहिये। अगर दूध मे टायफौयड रोग के जीवाणु हो तो वे दूध को 60° सी पर दो मिनट तक गम करने पर समाप्त हो जाते हैं। डेयरी मे मक्खियो का नियत्रण करने के लिये उचित उपाय काम मे लाने चाहिये, ताकि वे दूध तक टायफौयड रोग के जीवाणु न ले जा सकें।

(vii) पैराटायफौयड ज्वर (Paratyphoid fever)

यह रोग साल्मोनीला पैराटायफी नाम के जीवाणुओ द्वारा होता है। यह रोग दूध द्वारा मनुष्यो मे फैलता है मगर इस रोग के फलने की प्रतिशत टायफौयड रोग के मुकाबले मे कम होती है। इस रोग के जीवाणुओ के फलने का तरीका भी ठीक टायफौयड के रोग के जीवाणुआ के जैसा ही है तथा इस रोग को नियन्त्रित करने का तरीका भी एक जसा ही होता है।

(viii) स्कारलेट ज्वर (Scarlet fever)

इस रोग से ग्रसित हुए या रोग के केरियर व्यक्ति द्वारा इस रोग के जीवाणु दूध तक पहुच कर उसका उपयोग करने वाले लोगो मे स्कारलेट ज्वर उत्पन्न करते हैं। यह रोग स्ट्रेप्टोकोकस हिमोलिटिकस के कारण होता है। इस रोग से बचने के लिये बीमार व केरियर व्यक्ति को दूध दुहने व इसके वितरण से अलग रहना चाहिये ताकि रोग के जीवाणुओ को दूध तक पहुचने से रोका जा सके। दूध को उपयोग मे लाने से पहले पॉसटयूराइज करने से इस रोग को आसानी से नियन्त्रित किया जा सकता है।

(IX) मानवीय प्रकार का क्षय रोग (Human Type of Tuberculosis)

मनुष्य मे प्राय मानवीय प्रकार के जीवाणु का सक्रमण होता है। यह रोग माइकोबैक्टीरियम ट्यूबरक्यूलोसिस (मानवीय प्रकार) के जीवाणुओ के कारण होता है। इसके कारण मनुष्य मे प्राय फुफ्फुस म विकृति पदा हो जाती है। पशुओ के दूध के द्वारा मानवीय प्रकार के क्षय रोग से बचने के लिये क्षय रोग से पीडित व्यक्ति को न तो दूध दुहना चाहिये और न ही दूध के उपयोग मे लाये जाने वाले बतनो आदि के सपक मे आना चाहिये। डेयरी मे काम करने वाले सभी व्यक्तियों की समय समय पर क्षय राग के लिये जांच की जानी चाहिये।

बीमार व्यक्ति से इस रोग के जीवाणु दूध मे खांसी, नाक साफ करते समय या सीधे ही सपक द्वारा पहुच सकते हैं। दूध को पॉसटयूराइज करके काम में लेने पर इस बीमारी के जीवाणु अगर दूध में हो तो वे प्राय मर जाते हैं और ऐसा दूध स्वास्थ्य को हानि नही पहुचाता।

III दूध से मनुष्यों मे फलने वाली अन्य बीमारियां

(i) आमाशय व आत्र की बीमारियां (Gastro intestinal diseases)

भैंस या गाय का दूध पीने से बच्चो में प्राय आमाशय व आंत्र की बीमारियां होती रहती हैं और इसके कारण नवजात शिशुओ में मौत की प्रतिशत काफी ज्यादा है। स्वच्छता का पूण ज्ञान नही होने के कारण पशुओ के मल मूत्र से दूध का सदूषण होता रहता है और उसमें ई कोलाई के अलावा कई किस्म के जीवाणु होते हैं जिनसे खासकर बच्चो म दूध पीने से काफी हानियां होती हैं।

(ii) दूध – विषायण या गेलक्टो विष (Milk poisoning or Gal acto toxin)

नीचे दिये गये तरीको द्वारा विषाक्त पदाथ दूध तक पहुचते हैं –

(ए) जब दूध को किसी तांबे के बतन मे रखा जाता है तब वह धातु प्राय दूध मे मिल जाती है जो शरीर के लिए उपयुक्त नहीं होती है।

(बी) दुधारू पशुओ के खाने मे विषाक्त पदार्थ आ जाने से वे दूध द्वारा भी शरीर से बाहर निकलते हैं। इससे पशु तथा दूध के उपभोक्ता दोनो की सेहत पर बुरा असर पड़ता है। ऐसा अक्सर पशुओं द्वारा विषाक्त वीड के खाने के कारण होता है।

कभी-कभी पशुओं द्वारा सब्जी के खा जाने पर उनके दूध मे कुछ तत्व ऐसे प्रवाहित होकर आते हैं जिससे उसका उपयोग करने वाले व्यक्ति को पेट की गडबड की शिकायत पदा हो जाती है।

(सी) कभी-कभी पशुओ के शरीर से दूध मे विषले पदाथ आ जाते हैं। ये पदार्थ आयोडीन, सेलिसिलिक अम्ल, ईथर, पारा, एस्परिन और आर्सेनिक आदि

हैं जो पशुओ को उनके रोगो के उपचार के लिये दवाई के रूप मे दिये जाते हैं और जब इनकी मात्रा दवाई के रूप मे ज्यादा हो तो ये दूध मे पहुच कर उसके उपयोग करने वाले व्यक्ति को काफी हानि पहुचाते हैं।

(डी) दूध मे कुछ तरह के जीवाणुओ द्वारा विषैले पदार्थ छोडे जाते रहते है। इन विषले पदार्थों के कारण मनुष्यो मे कई किस्म के रोग उत्पन्न हो जाते है।

दूध प्रदूषण के कारण

1 पशुओ से	(i) रोगग्रस्त अयन से।
	(ii) पशुओ के अयन या थन पर अथवा दूध दुहने वाले व्यक्ति के हाथो पर होने वाले घाव से।
	(iii) दूध मे पशु के शरीर से गिरने वाली जीवाणुयुक्त मिट्टी, गोबर और मूत्र द्वारा।
	(iv) अयन से दूध मे आने वाली दवाइया जसे पारा, सीसा, ताबा, बोरिक ऐसिड क्रोटोन तेल, मार्फीन, इस्टीकनीन, एट्रोपीन, फार्मेलिन, कार्बोलिक ऐसिड, टरपन टाइन, आयोडीन और एटीबायोटिक्स आदि।
2 दूध दुहने व इस काय मे लगे व्यक्तियो द्वारा	(i) जब दूध दुहने वाला या उसे ले जाने वाला अथवा उसे वेचने वाला व्यक्ति दूध से फैलने वाली बीमारी से ग्रसित हो। रोगग्रस्त व्यक्ति के हाथ व म्यूकस द्वारा दूध का सदूषण होना।
	(ii) रोगग्रस्त व्यक्ति द्वारा दूध के बतन और किसी यत्र का सदूषित होना।
3 दूषित पानी द्वारा	(i) दूषित पानी को पशु के अयन थन, बतन धोने या दूध को ठडा करने के काम मे लेना।
4 पशु आवास की दूषित हवा	(i) पशु आवासो मे मनुष्यो या पशुओ के द्वारा आये रोगो क जीवाणुओ से उत्पन्न दूषित हवा द्वारा दूध का सदूषण।
5 मक्खियो द्वारा	(i) मक्खियो द्वारा बहुत से रोगो के जीवाणु दूध म आ सकते हैं जस टायफायड,

		पराटायफोयड, क्षय रोग, एन्थ्रैक्स और डिप्थीरिया आदि ।
6 घरो मे दूध का सदपण	(i)	रोगग्रस्त व्यक्ति द्वारा दूध के जग या बोतल से दूध पीना और फिर इस सदूषित दूध का उपयोग दूसरे उपभोक्ता द्वारा किया जाना ।
	(ii)	समय पर दूध को उबाल कर या ठडी जगह न रखना या उसे खुले मे छोड देना ।

दूध को प्रदूषित होने से बचाने व नियन्त्रण के उपाय –

दूध को जीवाणुओ व अन्य विषैले पदार्थो से दूषित होने से बचाने के लिये यह ख्याल रखना जरूरी है कि जीवाणु और विषैले पदार्थ दूध तक न पहुचने पाएँ और इसके लिये पशुओ का ठीक ढग से मुआयना करना जरूरी होता है । वे किसी ऐसे रोग से ग्रसित न हो जिसके जीवाणु दूध मे आ सकें या उनका इलाज किसी ऐसी दवाई से न किया जा रहा हो जो कि शरीर से दूध द्वारा बाहर निकलती हो । दूध दूषित होने के और भी कई कारण है और इसके लिये निम्नलिखित तरीके अपनाकर दूध की स्वच्छता कायम रखी जा सकती है –

I पशुघरो मे दूध को सदूषित होने से बचाना –

1 स्वस्थ पशु का दूध ही काम मे लेना ।

2 अयन और थन धोने के लिये साफ पानी का उपयोग करना ।

3 गीले कपडे द्वारा पशु के शरीर के पिछले हिस्से, अयन और थनो को पोछना ।

4 पशुघर मे वेन्टीलेशन के लिये सही तरीका अपनाना ।

5 पशुघर से मल मूत्र की निकासी का सुनियोजित ढग से प्रबन्ध करना ।

6 पशुघरो मे मक्खियो को आने से रोकने के प्रबन्ध करना ।

7 पशुघर मे प्रकाश का पूर्ण प्रबन्ध करना ।

8 दूध दुहने के लिये छोटे मुह वाले बर्तन का उपयोग करना ।

9 दूध दुहने वाले व्यक्ति द्वारा हाथ साफ तरीके से धोना व साफ कपडे पहनना ।

10 दूध दुहने वाला व्यक्ति पूर्णतया स्वस्थ हो तथा उसके हाथ व अगुलियों पर किसी तरह का घाव न हो ।

11 सही तरीके से दूध को निकालना ।

12 दूध की पहली कुछ धारें काम मे नही लेना ।

13 दूध दुहने के बाद उसे ठडी जगह मे इकट्ठा करके रखना ।

II दूध को वितरण के समय सदूषण से बचाना —

1 दूध को साफ बतन मे रखना।

2 दूध को ढक कर रखना।

3 वितरण के दौरान दूध ठडा रखना जिससे उसमे जीवाणुओ की सख्या मे वृद्धि न होने पाए।

4 अगर दूध वितरण मे समय लगे तो उसे उबाल कर ठडा करने से उसमे होने वाले जीवाणुओ मे कमी होगी और दूध ज्यादा समय तक रखा जा सकेगा।

III घरों में दूध को सदूषित होने से बचाना —

1 *साफ बतन मे दूध लें। ताबे के बतन मे दूध सग्रह करके नही रखें।*

2 दूध को ठीक समय पर गम करें और ठडा होने पर ढक कर रखें।

IV अन्य उपाय —

दूषित दूध द्वारा जो बीमारिया फैलती हैं वे ठीक उसी तरह हैं जसे कि दूषित पानी द्वारा फैलती हैं। पानी से फलने वाले रोग उस जगह के पूण समुदाय मे फलते है, मगर दूध द्वारा फैलने वाले रोग एक ही जगह मे न होकर उन सभी व्यक्तियो मे फलते हैं जो उस शहर मे किसी एक ग्वाले से या डेयरी से ही दूध लेते हों। ऐसी अवस्था मे उपभोक्ताओ को प्रदूषित दूध का उपयोग नही करना चाहिये।

उन सभी बीमार पशु या ग्वालो या अन्य व्यक्तियो को जिनके कारण दूधद्वारा बीमारिया फैलती हो, डेयरी से तुरन्त हटा देना चाहिये ताकि शहर के लोगो म दूध द्वारा बीमारिया न फैल सकें। ऐसे रोग उन परिवारो मे ही फलेंगे जो दूषित दूध का उपयोग करते हैं। ये बीमारिया कम समय मे ही कुछ खास जगहो मे फलेंगी और उनके फलने मे भी कम समय लगता है। ये बीमारिया उन लोगो म ज्यादा होगी जो दूध का उपयोग ज्यादा करते हैं और इससे बच्चो के बीमार होने की तादाद हमेशा ज्यादा रहती है।

दूध के प्रदूषण से फैलने वाली बीमारियो को रोकने के लिये दूध के व्यवसाय मे लगे लोगो और उनके परिवार के सदस्यो का तथा पशुओ के स्वास्थ्य का समय-समय पर मुआयना करते रहना चाहिये। दूध के काम मे लाये जाने वाले बतनो का स्टरलाइजेशन ठीक से करना चाहिये। डेयरी के व्यवसाय के लिये शुद्ध व आरोग्यप्रद पानी का उपयोग करना चाहिये। दूध को पासटयूराइज करके ही वितरित किया जाना चाहिये।

5

मास

भारत मे अक्सर मढे और बकरे के मास का उपयोग खाने के लिये किया जाता है। सूअर का मास भी इस देश मे खाने के लिये काम मे लिया जाता है पर यह इतना प्रचलित नही है। आज के इस आधुनिक युग मे स्वस्थ तथा पूण रूप से विकसित शारीरिक मासल रचना वाले युवा उम्र के पशुओ का मास खाने के लिये पसद किया जाता है। दूध देने वाले प्राणी के शवो के खाने या न खाने लायक भाग और खाने के काम मे आने वाले अगो और ग्र थियो को मास कहते हैं। मास प्रोटीन का एक अच्छा स्रोत है (सूअर मे 15 प्रतिशत, बकरी व भेड मे 20 प्रतिशत) और इसमे मानव शरीर के जरूरत के अमिनो ऐसिड होते हैं। इसके कारण शरीर का ताप बनाये रखने म और ऊर्जा उत्पादन म काफी सहायता मिलती है। इसमे वसा की काफी मात्रा रहती है जिससे मास खाने के बाद काफी लम्बे अरसे तक भूख नहीं लगती। मास के मुकाबले सब्जी मे होने वाले प्रोटीन पेट मे जल्दी ही पच जाने के कारण वहा ज्यादा समय तक नही रुकते और इसके कारण भूख जल्दी लगती है। मास मे 72 से 80 प्रतिशत पानी तथा 20 से 28 प्रतिशत ठोस पदाथ होते हैं।

मास जीवाणुओ के कारण जब सडने लगता है तब यह पीला, गीला, मुलायम, चिपचिपा हो जाता है तथा इससे खराब गध आने लगती है। कुछ समय पश्चात् इसका रग हरा हो जाता है। ऐसे मास की मास पेशिया जब खीचते हैं तब वे आसानी से फट जाती हैं। कभी कभी मास खराब होने पर सतह से तो ठीक दिखाई देता है मगर चाकू से काटकर भीतर से सूघने पर उसमे गध महसूस होती है। अच्छे व ताजे मास को अगर चाकू से काटें तो मास पर चाकू का दबाव एक समान देने से वह बिना रुकावट कट जायेगा, जबकि खराब मास पर कुछ ज्यादा दबाव लगाना पडेगा और अगर किसी बीमारी के कारण कोई गाठ आदि हो तो ऐसे मास को काटने मे चाकू का काफी जोर लगाना पडेगा।

भारत मे लोग खाद्य पदार्थों की स्वच्छता पर ज्यादा ध्यान नही देते हैं और फिर कभी कभी उनको यह पता भी नही होता कि रुग्ण मास को छूने व खाने से उनको पशुओ की क्या क्या बीमारिया हो सकती हैं। आमतौर पर मास खाने वाले व्यक्ति यह मान कर चलते है कि वे जो भी मास बाजार से खरीदते हैं उसे पूण रूप से

जाच के बाद ही बेचने के लिये आने दिया जाता है। मगर आम जनता को यह ख्याल रखना होगा कि जो भी मास बाजार मे खाने के लिये दूकानो पर मिलता है वह शुद्ध और आरोग्य है या नही है। क्योंकि अक्सर कसाई और मास के व्यवसाय मे लगे अन्य लोग घटिया व बीमारी से ग्रसित पशु का मास बाजार म बेचने की कोशिश करते हैं, या फिर यह मास किसी दुघटना मे मरे हुए पशु का भी हो सकता है। वे ऐसे पशुओ का मास भी बेच सकते हैं जो बीमार हा और उनकी ठीक होने की कुछ भी गुजाइश नही हो या फिर उन पशुओ मे ऐसी बीमारिया हो जिनके मास खाने से मनुष्या मे रोग उत्पन्न होते हो। खराब गन्ध वाला या सडा हुआ मास भी कभी कभी बेचा जाता है। बकरे के मास को मेढे क मास के नाम से बेचकर भी ज्यादा पसा कमाया जा सकता है। पशुओ से मनुष्यो म फलने वाले रागो को जोआन्ओटिक रोग कहते हैं। पशुओ के मास द्वारा य रोग मनुष्यो मे रोगग्रस्त पशु के मास को छूने से या उसे खाने से फलते हैं। कभी कभी मास मे जीवाणुओ द्वारा विषले पदाथ छोड दिये जाते हैं और ऐसे माम को खान पर भी मनुष्यो मे बीमारिया उत्पन्न हो जाती हैं। कुछ अन्य कारण जसे मास से किसी खास व्यक्ति को ऐलर्जी रोग का होना और मनुष्यो मे मास म पाये जाने वाले विषले रासायनिक पदार्थों का होना भी है।

वधशाला में कसाई व अन्य काम करने वालो को दुघटनाओ से खतरा बना ही रहता है, जसे चिकनी फश के कारण फिसलकर गिरना पशुओ द्वारा चोट पहुचाना और चाकू से चमडी का कटना। इन कारणो से जब वधशाला मे वहा पर काय करने वालो के शरीर की चमडी पर जब भी खरोंच आती है तब इन घावो के द्वारा मास से रोग फलाने वाले जीवाणुओ से रोग लगने का खतरा रहता है। निम्न प्रकार के रोग माम को छूने या खाने से मनुष्यो मे हो सकते हैं –

1 मास द्वारा मनुष्यो मे फैलने वाले पशुओ के रोग

संक्रामक जीवाणु/ अन्य कारण	जीवाणुओ की किस्म/ अन्य कारण	बीमारी
(I) दूषित मास के सम्पर्क से मनुष्यो मे फैलने वाले पशुओं के रोग		
वायरस	सक्रामक फुसीयुक्त त्वचा शोथ वायरस	सक्रामक फुसीयुक्त त्वचा शोथ
	भेड की मस्तिष्क सुषुम्ना शोथ वायरस	भेड म मस्तिष्क सुषुम्ना शोथ
	खुरपका मुहपका रोग वायरस	खुरपका मुहपका रोग
बक्टीरिया	बैसिलस एन्थ्रैसिस	एन्थ्रक्स
	ब्रूसेला एबार्टस	ब्रूसेल्लोसिस
	ब्रूसेला सुइस	ब्रूसेल्लोसिस

	ब्रूसेला मेलिटेंसिस	ब्रूसेल्लोसिस
	एरिसिपेलोथ्रिक्स रूजियोपेथी	एरिसिपेलास रोग
	लिस्टेरिया मोनोसाइटोजीनस	लिस्टेरियोसिस रोग
	पास्चुरेला टूलेरेन्सिस	टूलेरिन्सिस रोग
	विब्रियो फीटस	विब्रियोसिस
	माइकोबैक्टीरियम-ट्युबरक्यूलोसिस (गायों की किस्म)	क्षय रोग
स्पाइरोकीटस	लेप्टोस्पाइरा इक्टीरोहिमोरेजिका	लेप्टोस्पायरोसिस
	लेप्टोस्पाइरा केनिकोला	लेप्टोस्पायरोसिस
रिकेटसिया	रिकेटसिया बरनेटी	क्यू ज्वर
फगस	ट्राइकोफाइटॉन वीरूकोसम	दाद
	ट्राइकोफाइटॉन मेंटाग्रोफाइट	दाद

(II) मनुष्यों में दूषित मास खाने से विषायणता

(अ) मास में जीवित जीवाणुओं के कारण विषायणता

बैक्टीरिया	साल्मोनीला डबलिन	टायफॉयड
	साल्मोनीला टायफीमूरियम	टायफॉयड
	साल्मोनीला एन्टराटिडिस	टायफॉयड
	सिगला फ्लेक्सनीरी	सिगलोसिस
	सिगला सोनेयाई	सिगलोसिस
सेस्टोड	टीनिया सोलियम	टीनियासिस (सूअर का मास खाने से)
	टीनिया सैजिनेटा	टीनियासिस (गाय का मास खाने से)
	डाइफिलोबोथ्रियम लेटम	डाइफिलोबाथ्रिएसिस (मछली खाने से)
नीमेटोड	ट्राइकीनेला स्पाइरेलिस	ट्राइकीनेलोसिस (सूअर का मास खाने से)

(ब) मांस में जीवाणुओं के बहिर्जीव विष के कारण विषायणता

बक्टीरिया का बहिर्जीव विष	स्टैफिलोकोकस औरियस	विषाक्तता
	बैसिलस सिरस	विषाक्तता
	प्रोटीयस किस्म	विषाक्तता

	स्ट्रेप्टोकोकस पायोजिनिस (टाइप 1 व 2)	विषाक्तता
	क्लोस्ट्रीडियम बोटयूलाइनम	बोटयूलिज्म
	क्लोस्ट्रीडियम वेलछाई	विषाक्तता

(III) मास व अण्डे द्वारा ऐलर्जी

प्रोटीन	मास, मुर्गी, अण्डा और मछली	एलर्जी

(IV) पैतृक विषैले पदार्थ

विषैले पदार्थ	मछली, सेल मछली	विषाक्तता
	पोलर बीयर का यकृत	हाइपर विटामिनोसिस–ए

(V) मास का रासायनिक पदार्थों से सदूषण

रासायनिक पदार्थ	पारद	मिनेमिटा रोग
	जस्ता	रासायनिक विषाक्तता
	आर्सेनिक	,,
	सीसा	,
	एन्टीमनी	,,
	केडमियम	,,
	तावा	
	डी डी टी	
	बी एच सी	

2 मुर्गियो के मास व अण्डा द्वारा मनुष्यो मे फलने वाले रोग –

सक्रामक जीवाणु/ बहिर्जीव विष	जीवाणुओ की किस्म	रोग
वायरस	न्यू कसल रोग वायरस	कन्जेक्टीवाइटिस
	सिटाकोसिस लिम्फोग्रेन्यूलोमा ग्रुप वायरस	ओरनिथोसिस
बैक्टीरिया	साल्मोनीला थोम्पसन	टायफोयड रोग
	साल्मोनीला टायफोमूरियम	,,
	साल्मोनीला एन्टरीटिडस	,,
	माइकोबैक्टीरियम ट्यूबरक्युलोसिस (पक्षी की किस्म)	क्षय रोग
	एरिसिपेलोथ्रिक्स रूजियोपोथी	एरिसिपेलास रोग
	लिस्टेरिया मोनोसाइटोजोनस	लिस्टेरियोसिस रोग
बक्टीरिया का बहिर्जीव विष	स्टैफिलोकोकस ओरियस	विषाक्तता

(1) मास द्वारा मनुष्यो मे फलने वाले पशुओं के रोग —

(I) दूषित मास के सम्पक से मनुष्यो मे फैलने वाले पशुओ के रोग

(i) सक्रामक फुसीयुक्त त्वचा–शोथ, मुखदाह (Contagious Pustular Dermatitis, Contagious ecthyma, Orf)

यह एक वायरस रोग है जो भेड व बकरियो म पाया जाता है। कभी-कभी यह रोग मनुष्यो मे भी पाया जाता है। इस रोग मे पहले फफोले पुटिका के रूप मे प्रकट ० कर बाद मे छाले, पीवयुक्त फुंसियो तथा खुरट का रूप धारण करते हैं। इस बीमारी के घावो म मक्खी के लार्वा भी पदा होते हैं जिनसे पशुओ को काफी तक लीफ रहती है। पशुओ मे यह रोग उनके हाठो तथा थनो पर दानो के रूप मे प्रकट होता है। इस रोग का वायरस खुरट पर निवास करता है, तथा स्वस्थ पशु मे शरीर के किसी भी भाग की त्वचा मे खुरट का टीका देने पर विशिष्ट क्षतस्थल उत्प न कर सकता है। यह वायरस शरीर के बाहर छालो म मौजूद रहकर जाडो भर जीवित रहता है। वधशाला म बीमार पशुओ से जब किसी व्यक्ति की कटी-फटी त्वचा के सम्पक मे यह वायरस आती है तो 48 मे 72 घटे मे यह उस व्यक्ति मे राग उत्प न कर देती है। मनुष्यो म इस बीमारी के लक्षण उनके हाथ, हथेली और कोहनी पर अक्सर देखे जा सकते है। पशुओ के समान मनुष्यो मे फफोले के शुरूआत के लक्षण दिखाई नही देते है। लेकिन बाद म गोल उभार युक्त लाल रग के दाने कोहनी के अ दर वाले भाग म दिखाई देते हैं। यह रोग मास से सबधित फैक्टरियो म काम करने वाले लोगो म भी पाया जाता है। पशुओ मे यह रोग अक्सर बसत और गर्मियो के शुरू के महीनो मे पाया जाता है मगर वधशाला मे काम करने वाले व्यक्तियो मे यह रोग सर्दियो के मौसम म भी पाया जाता है जिससे ऐसा लगता है कि इस राग की वायरस पशुओ म बिना बीमारी के लक्षण पदा किये भी शरीर म रहती है।

निणय — जिन पशुओ पर इस रोग का सन्देह किया गया हो या जो पशु इस रोग से पीडित हों उनका मास उत्पादन के लिये वधशाला मे वध नही करने देना चाहिये।

(ii) मानसिक अवसन्नता भेड की मस्तिष्क सुषुम्ना–शोथ (Louping ill Infectious encephalomyelitis of sheep)

यह रोग भेड म वायरस के कारण उत्पन्न होता है तथा इसे इनमे तन्त्रीय लक्षणो द्वारा पहचाना जाता है। इस रोग के कारण भेड मे 106° एफ तक तेज बुखार होता है जो कुछ समय तक रहता है। बीमार पशु म दूसरी बार पांचवें दिन फिर बुखार के लक्षण देखे जाते हैं और बीमार भेड को छूने पर वह कापन लगती है मास पेशियो म ऐंठन होती है तथा वह अपने सिर को पीछे या एक ओर

खीचकर रखती है। होठो से चपचपाहट की आवाज निकलती है, आखें घूमती हुई दिखाई देती हैं तथा मुह से लार गिरती है। अत मे भेड मे पक्षाघात के लक्षण दिखाई देते हैं और कुछ ही घटा या एक-दो दिन मे पशु कमजोर होकर मर जाता है। पशुओ का यह रोग मनुष्यो मे होने वाले पोलियो रोग से मिलता जुलता होता है। भेड मे यह रोग किलनिया द्वारा रोग से पीडित पशु का रक्त चूसकर बाद मे स्वस्थ भेड का खून पीने के कारण फलता है।

मास उद्योग मे लगे व्यावसायिक व्यक्तियो मे भी यह रोग फला करता है। इस रोग का वायरस हवा म होने पर सास द्वारा भी मनुष्यो मे रोग उत्पन्न करती है। वायरस जब पशु के रक्त मे हो और अगर वह कटी हुई चमडी के सपर्क मे आये तब वधशाला मे काम करने वाले लोगों म यह रोग उत्पन्न हो जाता है। इस रोग से पीडित व्यक्ति म इनफ्लुएन्जा जसे लक्षण दिखाई देत ह।

निणय - इस रोग से पीडित पशु का मास के लिये वधशाला मे वध करना सवथा अनुचित है क्योकि ऐसे पशुओ का रक्त व मास कटी हुई चमडी के सपर्क मे अगर आये तो इससे वधशाला मे काय करने वाले, मास का वितरण करने वाले व इसका उपयोग करने वाले लोगो मे यह रोग उत्पन्न हो सकता है।

(iii) खुरपका मुहपका रोग (Foot and Mouth Disease)

यह रोग वायरस द्वारा खुरो वाले पशुओ मे होता है। इस रोग मे पशुओ के पैरो व मुह मे छाले पडते हैं। लगडाकर चलना, दद होना, मुह से लार गिरना आदि लक्षण इस रोग मे देखे जा सकते हैं। मनुष्यो मे यह रोग बहुत ही कम पाया जाता है। रोगग्रस्त होने पर मनुष्यो मे बुखार, मुह सूखना तथा मुह, होठ, जीभ और उगलियो के नाखून की जड मे छाले बनते हैं।

निणय - बीमार पशु के शव से रोगग्रस्त अगो को हटा कर अलग कर देवें तथा शेष मास खाने के लिये उपयुक्त माना जाता ह।

(iv) एन्थ्रक्स (Anthrax)

यह रोग बसिलस एन्थ्रसिस जीवाणु के कारण उत्पन्न होता है तथा यह रोग सभी किस्म के पशुओ तथा मनुष्यो मे हो सकता है। इस रोग के कारण पशु की प्लीहा बढ जाती है इसलिये इसे प्लीहा का बुखार भी कहते हैं। इस रोग के जीवाणु की वर्धी प्रकार (Vegetative form), रोगग्रस्त पशुओ के रक्त मे या तत्काल मरे हुए पशुओ के तन्तुओ म पाई जाती है। यह जीवाणु छड के आकार का होता है जो ऊपर से कैप्सूल द्वारा ढका रहता है तथा शरीर के तन्तुओ मे छोटी छोटी जजीरो के रूप मे स्थिर रहता है। ये जीवाणु हवा की उपस्थिति मे स्पोर का निर्माण कर लेते हैं। रोगी पशु का मल स्पोर का प्रमुख स्रोत होता है। स्पोर अक्सर चमडा, ब्रुश, ऊन, बाल, चारे, दाने, पानी, हड्डिया, अस्थिचूण व पशु उपजातो म पाय जात हैं।

इस रोग के कारण सूअर के चेहरे व गले पर सूजन पदा होती है जिससे दम घुटने के कारण ये प्राय मर जाते हैं। उनके होठो पर रक्त मिश्रित झाग व त्वचा पर रक्तस्राव के धब्बे दिखाई देते हैं। इसम तेज बुखार होता है तथा रक्त मिश्रित पेचिश के साथ आन्त्रार्ति भी होती है।

गायो और भेडों मे यह रोग अति उग्र रूप म पाया जाता है और इनके लिये यह प्राणघातक राग है। पशुओ के शरीर मे ऐंठन पदा होती है तथा वे कुछ ही मिनटों से लेकर तीन चार घटो मे मर सकते हैं। इस रोग मे पशुओ में दात पीसना, तीव्र हृदय गति, श्लेष्म झिल्लियो का रक्तवण होना, श्वास लेने म कठिनाई, मुह तथा नथुनों व मल मूत्र माग से रक्त का निकलना और बेहोश होकर मृत्यु हो जाना आदि लक्षण प्राय देखे जा सकते हैं। जो मनुष्य ए थ्रैक्स रोग से पीडित जानवरो के सपक मे आते हैं उनमें इस जीवाणु का सक्रमण हो सकता है। कसाई को, जानवरो के गोश्त का व्यवसाय करने वाले को या घर मे गोश्त को काटते समय घाव के सपक के कारण यह रोग हो सकता है। भेड की ऊन के कारखानो मे काम करने वालो या भेड बकरी के चमडे के कारखानो मे काम करने वाले लागो म भी यह रोग पैदा हो जाता है। जानवरो के बालों से दाढ़ी का ब्रुश बनाया जाता है और अगर इनम ऐन्थ्रैक्स रोग के जीवाणु हो और ऐसे ब्रुश को अगर स्टरलाइज नही किया जाए तब इस ब्रुश से भी इस जीवाणु का सक्रमण हो सकता है।

जानवरो के बालो के कारखानो मे काम करन वालो के श्वसन माग मे बाल की धूल के कण के साथ एन्थ्रैक्स के स्पोर भी प्रवेश करते हैं और ये फुफ्फुस में विकृति उत्पन्न करते हैं। इस प्रकार जो रोग उत्पन्न होता है उसे वूलसोरटर रोग या ऊन छाटन वालो का राग कहते हैं। अगर मनुष्य के हाथ म घाव हो और वह ऊन छांटने का काम करता हो तो भेड व ऊन से यह जीवाणु मनुष्य के घाव मे प्रवेश करता है और दुदम्य व्रण या मैलिग्नन्ट पस्टयूल की उत्पत्ति होती है। इस घाव से जीवाणु रक्त मे भी प्रवेश कर सकते हैं। कभी कभी इस जीवाणु का सक्रमण मुख द्वारा रोगग्रस्त जगली जानवर का मास खाने पर भी हो सकता है।

बगीचों मे ए थ्रैक्स के जीवाणुयुक्त खाद के प्रयोग से या जीवाणुयुक्त बोरे को काम मे लेन से भी यह रोग मनुष्यो म फल सकता है।

निणय — एन्थ्रैक्स रोग से पीडित पशु को वधशाला से तुरन्त हटा देना चाहिये तथा ऐसे पशुओ का वध करना सवथा अनुचित है। इस रोग से मरे हुए पशुओ और उनके शरीर से निकले मल और रक्त तथा बिछावन को तत्काल जला देना चाहिये या उनको गहर गड्ढे मे डाल कर उसे चूने से ढककर गाडना चाहिये। ऐसे मृत पशुओं के शरीर की काटपीट नही करनी चाहिये।

ए थ्रैक्स रोग से पीडित पशु का मास खाने के उपयोग मे नही लाना चाहिय। हालांकि इसके जीवाणु पेट मे रहने वाले गेस्टिक ज्यूस के कारण मर जाते हैं मगर

एन्थ्रक्स के स्पोर पर इनका कुछ भी प्रभाव नही होता और इसके कारण मनुष्यो मे रोग उत्पन्न हो जाता है। अगर मुह मे किसी प्रकार का घाव हो तब भी मास मे होन वाले एन्थ्रक्स के जीवाणु मनुष्यो मे रोग उत्पन्न कर सकते हैं।

(v) ब्रूसेल्लोसिस (Brucellosis)

यह रोग ब्रूसेला एबाटस (गायो मे) ब्रूसेला सुइस (सूअर मे) व ब्रूसेला मेलिटेंसिस (बकरियो मे) नाम के जीवाणुओ से पदा होता है। इन जीवाणुओ के कारण मनुष्य मे जो राग उत्पन्न होता है उसे माल्टा फीवर या अनडुलेन्ट फीवर कहते हैं।

इस रोग के जीवाणु गोल या अण्डाकार होते है। यह प्राय अकेला रहता है या अनेक जीवाणु एक लाइन मे चैन के समान रहते हैं। कभी कभी दो जीवाणु एक साथ भी मिलते हैं।

पशुओ मे इन जीवाणुओ के कारण गर्भपात एव बाझपन के लक्षण दिखाई देते हैं। पशुओ मे सभोग की वृत्ति मे कमी, एक या दोनो अण्डकोषो मे सूजन आदि लक्षण मिलते हैं। पशु के खानपान में अरुचि हो जाती है तथा उसके शरीर का भार कम होने लगता है। यह जीवाणु रोगी पशुओ के दूध, मल मूत्र, प्लीहा मे प्रचुर सख्या मे रहता है। कभी कभी यह रोगी के रक्त मे भी पाया जाता है। ये जीवाणु रोगग्रस्त पशुओ के जननागो मे भी पाये जाते हैं।

इस बीमारी की रोकथाम के लिए पशुओ का रक्त परीक्षण किया जाता है तथा जो पशु परीक्षण के दौरान सक्रमित पाये जाते हैं उन्हें अलग रखा जाता है और अन्त मे उन पशुओं का बध कर दिया जाता है। इस दौरान जो व्यक्ति इन बीमार पशुओ का वध करते हैं व उनके मृत शरीर के अगो के सम्पक मे आते हैं, उन्हें इस बीमारो से पीड़ित होने का खतरा बना रहता है।

ब्रूसेला एबाटस के कारणमनुष्यो मे समय समय पर बुखार होता रहता है। यह रोग उन्हें बीमारीयुक्त बिना उबला दूध पीने, रोगी पशु या उसके मास के सपक मे आने से पदा होता है। ये जीवाणु मनुष्यो के लिये ज्यादा खतरनाक नहीं हैं।

ब्रूसेला मेलिटेंसिस के कारण अनडुलेन्ट फीवर का रोग मनुष्यो मे बिना उबाले हुए बकरी का दूध पीने से होता है या दूध निकालते समय तथा मास के सपक मे आते समय यदि मनुष्य के हाथ पर घाव हो तब ये जीवाणु घाव द्वारा शरीर मे पहुच कर रोग उत्पन्न करते हैं। इस रोग के जीवाणु मल मे भी पाये जाते हैं तथा मल सूखने पर ये हवा द्वारा मनुष्यो के श्वास द्वारा उनके शरीर मे प्रविष्ट करके रोग उत्पन्न करने की क्षमता रखते हैं।

मनुष्यो के शरीर मे ब्रूसेला सुइस के जीवाणु वधशाला म मृत पशुओ का मुआयना करते समय या उनका वध करते समय प्रवेश कर जाते हैं।

निणय –ब्रूसेला मेलिटेंसिस और ब्रूसेला सुइस दोना ही प्रकार के जीवाणु मनुष्यो मे रोग उत्प न करते हैं।

रोग ग्रस्त पशु के मरने के पश्चात् उसकी मास पेशियो म ब्रूसेला जीवाणु कम ही समय तक जिन्दा रह पाते हैं क्योंकि मृत शरीर म अम्ल बनने लगता है जिससे जीवाणु शीघ्र ही मर जाते हैं।

ब्रूसेला जीवाणु यदि मृत पशु के शरीर के अगो म, मास पेशियो, लसग्र थ या हड्डियो मे हो और उन्हे रेफ्रिजरेटर मे रखें तो ये जीवाणु एक माह की अवधि तक जीवित रह सकते हैं।

अगर मृत पशु के शरीर मे ब्रूसेला रोग के जीवाणु हो तो उसके शव से फेफडे यकृत, प्लीहा, गुर्दे, आतें, अयन, अण्डकोषो और रक्त आदि को हटा देना चाहिये और उन्हें मनुष्यो के खाने के काम मे नही लेने देना चाहिये। शव के भीतरी अगा और लसग्रन्थियों को भी हटा देना चाहिये। अगर वध किये पशु के शव मे बहुत कम ही अगो में बीमारी क लक्षण हो तो ऐसे अगो को शरीर से हटाकर उनका ठीक तरीके से निस्तारण करें तथा शव के शेप भागो को खाने के योग्य घोषित कर देवें।

(vi) सूअर मे एरिसिपेलास रोग (Swine Erysipelas)

यह रोग मुख्यत सूअरों मे एरिसिपेलोथ्रिक्स रूजियोपेथी नामक जीवाणु के कारण होता है। यह एक उग्र, कुछ कम उग्र अथवा दीघकालीन अवस्थाओ म प्रकोप करने वाली एक छुत की बीमारी है। यह रोग मनुष्य, मेमने, मुर्गी, खरगोश व चुहियो आदि मे भी पाया जाता है।

इस रोग के जीवाणु पशु के शरीर मे विषले पदाथ छोडते हैं जिनके कारण पेट, आतें, फेफडे और गुर्दे म रक्तस्राव होता है। पशु को 105 से 108° फारने हाइट तक तेज बुखार होता है। पशु खाना पीना छोड देते हैं। उनके चलने पर पिछले धड मे कमजोरी नजर आती है। वे प्राय उल्टी करते हैं। पहले उन्हें कब्ज रहती है तथा बाद मे दस्त आने लगते हैं। शरीर तथा परो की त्वचा पर गहरे लाल अथवा काले रग के चौकोर अथवा भुजाकार $\frac{1}{2}$ से 2" आकार क चकते पाए जाते हैं।

वधशाला म पशुओ का वध करते समय यह रोग बीमार पशु स मनुष्यो को उनके हाथ पर कटी चमडी या घाव के कारण लग जाता है। मनुष्यो मे यह रोग एरिसि पेलोइड शोथ के नाम से जाना जाता है। इस रोग के कारण अगुली या अगूठे मे सूजन पदा हो जाती है जो धीरे धीरे हाथ मे फल जाती है तथा उसे दबाने पर किसी प्रकार का गड्ढा दिखाई नही देता। हाथ मे काफी पीडा रहती है जिससे उस व्यक्ति को नीद लेने म अडचन पदा होती है। हाथ के जोड म काफी सूजन पदा हो जाती है।

निणय – इस रोग की सेप्टीसीमिक किस्म के कारण पशु की मास पेशिया सेट नही होती हैं तथा ऐसे मास को खाने के उपयुक्त नही माना जाता है। अगर सूअर के शरीर पर चमडी पर चक्ते हो तो उन पशुओ की चमडी हटा देनी चाहिये और मास को खाने के उपयुक्त घोषित किया जाना चाहिये। अगर पशु के शरीर की वसा तक खराबी उत्पन्न हो जाये तो उसे भी काट कर हटा देनी चाहिये जिससे कि पशु का मांस खाने लायक हो सके।

(VII) लिस्टेरियोसिस, चक्कर की बीमारी (Listeriosis)

भेड बकरियो, सूअरो तथा अन्य पशुओ की यह एक प्राणघातक छूत की बीमारी है जो लिस्टेरिया मोनोसाइटोजीनस जीवाणु द्वारा उत्पन्न होती है। इस बीमारी मे पशु चक्कर काटता है तथा उसमे पक्षाघात हो जाता है। पशु किसी दीवार से अपने सिर को टकराकर खडा होता है। उसका निचला होठ व एक कान लटका हुआ दिखाई देता है। पशु के मुह से लार गिरती है, नाक से श्लेष्मा बहना तथा आखो की झिल्ली का सूज जाना इसके अन्य लक्षण हैं। मनुष्यो मे यह रोग इन जीवाणुओ के वायुमण्डल मे रहने के कारण श्वास द्वारा फैलता है।

निणय – लिस्टेरिया रोग से पीडित पशु का मास के लिये वध नही करना चाहिये।

(VIII) टूलेरिमिया (Tularemia)

यह रोग भेड, खरगोश, मुर्गियो और चूहो मे पास्चुरेला टूलेरिन्सिस के द्वारा उत्पन्न होता है। मनुष्यो मे यह रोग इन बीमार पशुओ के सीधे सपर्क मे आने से या मृत पशुओ के सपर्क मे आने से व चीचड व मक्खी द्वारा फलता है। पशु के जीवाणुयुक्त रक्त या मास के सम्पर्क से इस रोग के जीवाणु चमडी या श्लेष्मा झिल्ली द्वारा मनुष्य के शरीर मे प्रवेश कर जाते हैं। यह रोग दूषित जल पीने से और रोग ग्रस्त मास खाने से भी फैलता है। इस रोग के कारण मनुष्यो मे सर्दी लगना, बुखार होना, खडे होने की क्षमता न होना व लसग्रन्थियों मे सूजन होना तथा उनमे पीब पडना आदि लक्षण दिखाई देते है।

निणय – इस रोग से बचने के लिये बीमार पशु और जगली खरगोश के घाव या उनके मास और रक्त के सीधे सपर्क मे नही आना चाहिये। रोग से पीडित पशुओ के पास जाने से पहले हाथ पर रबर के दस्ताने पहनने चाहिये।

(IX) विब्रियोसिस (Vibriosis)

यह रोग प्राय भेड व गाय मे पाया जाता है जो विब्रियो फीटस के कारण होता है। इस रोग से पशुओ मे गर्भपात और बाझपन के लक्षण दिखाई देते हैं। इस रोग के जीवाणु नर पशुओ के अण्डकोषो मे रहते हैं और इनसे यह रोग उन जातियो के मादा पशुओ मे फैलता रहता है। इस रोग के जीवाणु स्त्रियो और मर्दो मे भी

पाये गये हैं। इन जीवाणुओ के कारण स्त्रियो म गमपात व मनुष्यो मे दस्त लगना, जोडो मे सूजन, एन्डोकार्डाइटिस और मेननजाइटिस आदि के लक्षण देखे जा सकते हैं।

निणय – ऐसा माना जाता है कि यह रोग मनुष्यो मे सदूषित दूध व बीमार पशुओ के कारण फलता है। इसलिये वधशाला म बीमार पशुओ का ध्यान से वध करना चाहिये। इस रोग से ग्रसित अगों का चाकू से काटकर अलग कर देना चाहिये ताकि पशु का मास इससे सदूषित नही होने पावे।

(x) क्षय रोग, तपेदिक (Tuberculosis)

क्षय रोग माइकोबैक्टीरियम टयुबरक्युलोसिस जीवाणु के द्वारा उत्पन्न होता है। इसकी गायो, पक्षी और मानव जातीय तीन किस्मे होती हैं। इस जीवाणु की गायो की किस्म सभी स्तनधारी पशुओ मे क्षय रोग उत्पन्न करने की क्षमता रखती है। पशुओ के सपक से कई रोग मनुष्यो मे फलते हैं लेकिन सवप्रथम गायो के क्षय रोग को प्रमाणित करके वैज्ञानिको ने यह सिद्ध किया कि यह रोग पशुओ से मनुष्यो में फैलता है। इस रोग को टयुबर्किलो द्वारा पहचाना जाता है जिनम सूखना, कल्शियम का जमना तथा फोडे बनने जसे परिवतन होते हैं। प्रमुख तौर पर यह बीमारी लिम्फ ग्रथियो पर प्रभाव डालती है।

गौ पशुओ मे क्षय रोग का प्रमुख स्थान प्राय श्वसनतत्र होता है। पशु इस रोग के कारण श्वास में कष्ट महसूस करता है तथा जल्दी जल्दी सास लेता है। पशु प्राय खासते हैं। अतडी के क्षय रोग पशु मे दस्त व कमजोरी उत्पन्न करते हैं। चारा खाने के बाद रूमेन मे अफारा होकर उनका पेट फूल जाता है। मेसेण्टेरिक लसीका ग्रथिया फूल जाती हैं। पशुओ मे इस रोग का प्रभाव अयन, जननेन्द्रियो, चमडी तथा केन्द्रीय तन्त्रिका तन्त्र पर भी रहता है।

मनुष्यो मे इस रोग के कारण लगातार बुखार रहता है वजन घटता है खासी होती है व इसके साथ थूक मे रक्त आने लगता है तथा गले के पास की लसग्रन्थि मे सूजन दिखाई देती है।

पशुओ तथा मनुष्यो मे यह रोग पाचन सस्थान, सास नली द्वारा, जननेन्द्रियो, कटी हुई चमडी तथा बच्चो मे रोगग्रस्त गर्भाशय द्वारा फलता है।

क्षय रोग के जीवाणु पशु के रोगग्रस्त मास या अन्य अगो से किसी भी मनुष्य में उसकी कटी हुई चमडी के द्वारा उसके शरीर मे प्रवेश कर उनम क्षय रोग पैदा कर सकते हैं।

निणय – वधशाला मे पशु के शव के सम्पूण भागो मे अगर क्षय रोग के ट्युबक्ल हो तो ऐसे शव के मास को खाने के लिये अयोग्य माना जाना चाहिये। किसी जगह अगर ऐसे शवों की ठीक से मुआयना करने की व्यवस्था नही हो

तो ऐसे मे जो व्यक्ति या कसाई इन शवो के सम्पक मे आता है या जो व्यक्ति इस मास का सेवन करते हैं उनमे क्षय रोग उत्पन्न होने की पूण सभावना बनी रहती है। मास को पकाने से ये जीवाणु पूणतया समाप्त हो जाते हैं, ऐसे मास को अगर ठीक मे नही पकाया जाये तो क्षय रोग के जीवाणु उसमे जिन्दा रह सकते हैं। अगर पशु के किसी एक या दो स्थान पर ही क्षय रोग के टयुबक्ल हो तो उन भागो को हटाकर शव के मास को खाने योग्य घोषित किया जा सकता है।

अगर पशु के सिर की कोई लस ग्रथि क्षय रोग से ग्रस्त हो तो उस पशु के शव से सिर को हटा कर शव का शेष भाग खाने योग्य घोषित कर दिया जाता है।

अगर क्षय रोगग्रस्त मास किसी दूसरे पशु के मास के सपर्क मे आ जाये तो सम्पक मे आये मास को काट कर हटा दते हैं और मास के शेष भाग को खाने के लिये योग्य घोषित कर देते हैं।

(xı) लेप्टोस्पायरोसिस (Leptospırosıs)

लेप्टोस्पायरोसिस की बीमारी पशु व्यवसाय मे लगे मनुष्यो मे होती रहती है। मनुष्यो मे यह रोग पशुओ व चूहे के मूत्र द्वारा फलता है। वधशाला मे काय करने वाले कसाई, पशु चिकित्सक और वहा नालियो की सफाई करने वाले व्यक्तियो मे प्राय यह रोग पाया जाता है। यह रोग लेप्टोस्पाइरा इक्टोरोहिमोरेजिका, लोप्टोस्पाइरा केनिकोला, लेप्टोस्पाइरा इन्टरोगेन्स और लेप्टोस्पाइरा बाइफेक्सी के कारण पदा होता है।

मनुष्यो मे यह रोग पशु के मास, मूत्र या दूषित पानी के सपक मे आने से पदा होता है। इस रोग के कारण पशुओ और मनुष्यो मे यकृत व गुर्दे मे बाधा उत्पन्न हो जाती है तथा सभी श्लेष्मा झिल्लिया रक्तहीन होकर पीली पड जाती हैं। इस रोग मे यूरिमिया, टोक्सीमिया और शरीर के अगो मे रक्तस्राव के लक्षण दिखाई देते हैं।

निणय – इस रोग से बचने के लिये वधशाला मे स्वच्छता बनाये रखना जरूरी है। यहा पर काम करने वाले लोगो को इस रोग से बचने के लिये उपलब्ध टीके लगवाने चाहिये।

(xıı) क्यू ज्वर ('Q' Fever)

क्यू ज्वर स्वस्थ दिखने वाले पशुओ म पाया जाता है। ये पशु इस रोग के केरियर रहते हैं। कभी कभी पशुआ मे इसके कारण ब्रोन्को न्युमोनिया और गभपात होते रहते हैं। यह रोग रिकेटसिया बरनेटी जीवाणु के कारण होता है। इस रोग के जीवाणु पशु के मल मूत्र, दूध प्लेजन्टा और गभपात से गिरे हुए मृत बच्चे म रहते हैं और मनुष्य जब इनके सम्पक मे आता है तो उसमे क्यू ज्वर होने की सम्भावना बनी रहती है। मनुष्यो मे इस रोग के कारण तेज ज्वर, शारीरिक दद, भूख न लगना व एक या दो सप्ताह तक शरीर मे कमजोरी जसे लक्षण दिखाई देते हैं। इस रोग के

कारण न्युमोनिया भी होता है तथा बाद मे एन्डोकार्डाइटिस होती है और मनुष्य की मृत्यु तक हो सकती है।

यह बीमारी मनुष्यो मे रोगग्रस्त पशुओ के मांस, मल मूत्र, रिकेटसियायुक्त हवा, ऊन, बाल व चमडी के सम्पर्क म आने से होती है।

निणय – रोगग्रस्त पशुओ को वधशाला मे नहीं आने देना चाहिये। इसके लिये पशुओ का सीरम लेकर इस बीमारी के लिये टेस्ट करना चाहिये ताकि बीमार पशु मास के लिये न कटने पाये। वधशाला म काय करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को इस रोग स बचने के लिये टीका लगवाना चाहिये।

(xiii) दाद, दद्रु (Ringworm)

फफूद ट्राइकोफाइटॉन वोरूकोसम और ट्राइकोफाइटॉन मेटाप्रोफाइट द्वारा उत्पन्न होने वाला यह एक छुतला चम रोग है जिसमे शरीर पर गोल तथा परिगत खुरटयुक्त उभरे हुए भाग नजर आते हैं। यह रोग छोटे पशुओ मे ज्यादा होता है तथा दाद ½ से 3" गोलाई मे फले रहते हैं और ये अक्सर पशु के सिर और गरदन पर ज्यादा होते हैं। यह रोग गौ पशुओ मे अधिक पाया जाता है। यह वद मे किसी भी समय फल सकता है किन्तु पतझड और जाडो मे अधिक होता है। यह रोग मनुष्यो मे बीमार पशुओ के सम्पर्क मे आन से फलता है। जो लोग पशु रखते हो या वधशाला म उसके सम्पर्क मे आते हो और उनकी चमडी पर कही घाव हो या वह कही से कटी हुई हो तब यह रोग उनमे बडी आसानी से फलता है।

निणय – रोगग्रस्त पशु का वध करते समय अगर किसी व्यक्ति की चमडी पर घाव खरोंच आदि हो तो उसे रबड के दस्ताने इस्तेमाल करने चाहिये ताकि फफूद उस व्यक्ति के खुले घाव के सम्पर्क मे न आ सके।

(II) मनुष्यों मे दूषित मास खाने से विषायणता (Poisoning in man by eating contaminated meat)

लोगो को यह बात पुराने समय से विदित है कि बीमारी से मरे हुए पशुओ के मास को खाने से वे खुद भी बीमार हो सकते हैं और इसलिये हमेशा स्वस्थ पशु का ही मास खाने के उपयोग म लिया जाता है। मास मे विषाक्तता निम्न कारणो से हो सकती ह —

मास निम्न दो कारणो से विषाक्त होता है —

(अ) मास म जीवित जीवाणुओ के कारण विषायणता

अगर मास म जीवित जीवाणु हो और जब वे मास के साथ शरीर म प्रविष्ट हो जायें तो रोग उत्पन्न करने से पहले वे कुछ समय तक शरीर मे अपनी सख्या बढ़ाते हैं और कुछ दिनो बाद उस व्यक्ति मे दस्त, उल्टी व बुखार जैसे लक्षण देखे जा सकते हैं। किसी किसी रोग को फलने मे 12 घटे से कम समय लगता है मगर ज्यादातर इस तरह से फलने वाले रोग काफी लम्बा समय लेते है।

(i) साल्मोनीला डबलिन, साल्मोनीला टायफीमूरियम, साल्मोनीला एन्टरीटिडिस, सिगला फ्लेक्सनीरी और सिगला सोनेयाई –

ये सभी जीवाणु मास के द्वारा मनुष्य के शरीर मे प्रवेश करके उनमे बुखार, दस्त, सर्दी लगना, उल्टी व पेट मे दद जैसे लक्षण पैदा करते हैं। ये जीवाणु 7 या 12 घट से लेकर 7 दिनों मे मनुष्यो मे राग उत्प न करने की क्षमता रखत हैं।

(ii) टीनियासिस (सूअर का मास खाने से)

टीनिया सोलियम के कारण टीनियासिस रोग का सक्रमण मनुष्यो मे सूअर का मास खाने स होता है। सिस्ट या सिस्टीसरक्स सूअर की मास पेशियो मे रहते हैं और जब मनुष्य ऐसा मास खाता है तो उसकी आत मे 3 से 9 फीट लम्बा टेपवम बनता है। कुछ समय बाद उस मनुष्य के मल के साथ कृमि के अण्डे शरीर के बाहर निकलते है और सूअर के द्वारा इस मल को खाने पर ये अण्डे सूअर की आत्र मे प्रवेश करते हैं। यहा इन अण्डो से औंकोस्फीयर निकलते हैं। वे औंकोस्फीयर सूअर की पेशियो मे जाकर सिस्टीसरकस बनाते है। इस प्रकार सूअर का मास खाने पर ये सिस्ट फिर से मनुष्यो की आत्र म पहुच कर टपवम बनाते है।

निणय सिस्टयुक्त मास को 45° सी से 50° सी तक गम किया जाये तो सिस्ट प्राय समाप्त हो जाती है। सिस्टयुक्त मास को 3 से 4 सप्ताह तक पिक्लिग (25 भाग भार से नमक तथा 100 भाग भार से पानी) करने से सिस्ट समाप्त हो जाती है मगर इसमे मास को 1 8 से 2 2 कि ग्रा के भार के टुकडो म काट कर डालना चाहिये। अगर पशु के शरीर के सम्पूण मास मे सिस्ट हो तो ऐसे मास को खाने के काम म नही लिया जाना चाहिये।

(iii) टीनियासिस (गाय का मास खाने से)

मनुष्यो मे **टीनिया सँजिनेटा** कृमि का सक्रमण गौ–वश के जानवरो का मास खाने से होता है। मनुष्य जब सिस्टयुक्त मास खाता है तब सिस्टीसरक्स मे से स्कोलेक्स निकल कर मनुष्य की आत्र म कृमि बनाते हैं। यह कृमि 30 फीट तक लम्बी होती है। मनुष्य के मल के साथ इस कृमि के अण्ड शरीर से निकलते रहते है और ये गौ वश पशु के चारे के साथ उसके शरीर म प्रवेश कर जाते हैं। इन अण्डो से लार्वा बनता है जो पशु की पेशियो मे पहुच कर सिस्ट बनाते है।

निणय – अगर पशु के मास मे एक दो सिस्ट ही हो तो उसे उसके पास के माससहित निकाल कर फेंक देना चाहिये और शेष मास खान के योग्य रहता है। अगर सिस्ट कुछ ज्यादा हो तो पशु के शव को 20° एफ तापमान पर 3 सप्ताह रहने देते हैं जिससे मास मे रहने वाली सिस्ट रोग पदा करने की क्षमता खो देती है। इस तरह ठडे तापमान पर रखे गये शव का मास मनुष्यों के खाने के योग्य रहता है। अगर सम्पूण शव मे सिस्ट हो तो ऐसे मास को खाने के लिए अयोग्य घोषित करना चाहिये।

(iv) डाइफिलोबोथ्रिएसिस

डाइफिलोबोथ्रियम लेटम कृमि का संक्रमण मनुष्यों और कुत्तों में सिस्टयुक्त मछली खाने से होता है। यह कृमि मनुष्य और कुत्ते की आन्त्र मे रहता है। इस कृमि की लम्बाई 6 से 35 फीट तक होती है। इसके अण्डे मनुष्य व कुत्ते के मल द्वारा शरीर से निकलकर पानी मे पहुचते हैं। अण्डे से एमब्रिओ निकलकर क्रसटेसियन नाम के जीवाणु मे जाता है। मछली जब इस जीवाणु को खाती है तब इसका संक्रमण मछली मे पहुचता है। प्लीयोसर्काइड करीब एक इच लम्बे, भूरे-सफेद, गोल आकार मे मछली के फेटी मिसेंट्रीक टिश्यू ओवरी, टेस्टीज और पेशियो में फैले रहते हैं। इस कृमि के कारण मनुष्यों और कुत्तों में एनिमीया पैदा हो जाता है।

निर्णय अगर सिस्टयुक्त मछली को ठीक ढग से तली, ओवन में सेकी या पकाई जाये तो उसमें रहने वाली सिस्ट मर जाती है लेकिन ऐसी मछली को खाने के काम में नही लेनी चाहिये।

(v) ट्राइकीनेलोसिस

ट्राइकीनेला स्पाइरेलिस के कारण ट्राइकीनेलोसिस रोग का संक्रमण मनुष्यो में इस रोग से पीडित सूअर का कच्चा मास खाने से होता है। इसका संक्रमण चूहे तथा सूअर दोना में ही मिलता है। सूअर की पेशियो में इसके सिस्ट रहते हैं। मनुष्य जब सूअर का कच्चा मास खाता है तब ये सिस्ट उसके आमाशय में पहुचते हैं। सिस्ट के अन्दर से लार्वा निकलकर आन्त्र में पहुचता है और बडा होकर कृमि बनता है। मादा कृमि लार्वा पैदा करती है। यह लार्वा लसवाहिनियो तथा रक्तवाहिनियो द्वारा मनुष्य की पशियो में पहुचकर सिस्ट बनाता है। मनुष्य में लार्वा तथा कृमि दोनों रहते हैं। इसके अण्डे मादा कृमि के गर्भाशय मे ही रहते हैं और उनके अन्दर से शीघ्र ही लार्वा निकलता है, इसलिय मनुष्य के मल में इसके अण्डे नही मिलते हैं। मल में कभी कभी कृमि मिल सकता है।

इस रोग के कारण मनुष्यो में दस्त और पेट दर्द के लक्षण देखे जाते हैं। सिस्ट युक्त मास खाने के नौ दिनो पश्चात् लार्वा रक्त में पहुचता है तथा इनफ्लूएन्जा या टायफोयड रोग जैसे लक्षण देखे जा सकते हैं। गठिये के रोग में जो शारीरिक दर्द होता है ठीक वैसा ही दर्द इस रोग में भी दिखाई देता है। लार्वा के कारण मायोकार्डाइटिस और एनकफलाइटिस हो जाती है। शरीर में 2000 लार्वा होने पर रोग के लक्षण दिखाई देन लगते हैं और अगर इनकी सख्या 80,000 हो जाय तो मनुष्य की मृत्यु तक हो जाती है। अगर मनुष्य रोगयुक्त मास का लगातार कई दिनों तक सेवन करे तो यह रोग उनमे उग्र रूप धारण करता है। सर्दी के दिनो में सूअर का मास ज्यादा खाये जाने के कारण मनुष्यों में यह रोग उसी मौसम मे ज्यादा पाया जाता है।

निणय यह रोग सूअर की वसा और भीतरी अगो मे नहीं होता है, इसलिए उन्हे शव से अलग कर देते है और शेष भाग खाने के लिए अयोग्य माना जाता है।

मास को छ इच के टुकडो मे काट कर 5° एफ तापक्रम पर 20 दिनो तक रखे रहने से उसमे होने वाली ट्राइकीनेला सिस्ट की रोग पदा करने की क्षमता नष्ट हो जाती है।

मास को 58° सी पर गम करने से ट्राइकीनेला के लार्वा मर जाते हैं। सूअर के मास को 2° सी पर 40 दिनो तक क्यूर करने व 45° सी पर 10 दिनो तक स्मोकिंग करने से मास मे रहने वाली सिस्ट मर जाती है।

(ब) मास मे जीवाणुओ के बहिर्जीवविष के कारण विषायणता

मास में पाये जाने वाले कुछ जीवाणु अनुकूल परिस्थितियो में कुछ विषले पदार्थ पदा करते हैं और इनसे मनुष्यो के आत्र और अन्य अगो को काफी नुकसान होता है। इनमें मुख्य जीवाणु निम्न हैं—

(i) स्टैफिलोकोकस ओरियस

यह जीवाणु मास में बहिर्जीवविष पैदा करता है। मास पकाने पर ये जीवाणु मर जाते हैं मगर उनका छोडा हुआ विष गम या ठडे तापक्रम पर भी बेअसर नही होता है। ऐसा मास खाने के 2–3 घटे बाद उस मनुष्य में लार गिरना, उल्टी दस्त और जी मचलना जसे लक्षण दिखाई देते है जो 24 घटे तक रहते हैं।

(ii) बैसिलस सिरस, प्रोटीयस और स्ट्रैप्टोकोकस पायोजिनिस टाइप 1 और 2

ये जीवाणु मास मे बहिर्जीवविष छोडते है। ऐसे मास का उपयोग मनुष्य मे हानि पैदा करता है।

(iii) क्लोस्ट्रीडियम बोटयूलाइनम

ये जीवाणु पके हुए तथा बद डिब्बो में रखे हुए मास में बहिर्जीवविष छोडते हैं। ये जीवाणु बिना आक्सीजन के जीवित रहते हैं। यह हवा के साथ रहने पर स्पोर बनाता है तथा मास पकाने पर उसमें तापक्रम कम हो तो यह प्राय जीवित रह जाता है। ऐसा मास जब डिब्बो में बद किया जाता है तब ये जीवाणु आक्सीजन की अनुपस्थिति में बढोतरी करते हैं और उस समय ये बहिर्जीवविष छोडते हैं। इस विष के कारण भोजन को निगलने में दिक्कत रहती है तथा आखो की रोशनी में फक आने लगता है। श्वास की पेशियो का पक्षाघात हो जाता है और मृत्यु तक हो जाती है। विषाक्त मास के कारण मनुष्य में दो घटा से आठ दिनो के बीच में इस विष के लक्षण नजर आते हैं।

(iv) क्लोस्ट्रीडियम वेलछाई

ये जीवाणु दुबारा गम करके तैयार किये ठडे या बना कर रखे हुए मास मे

वहिर्जीवविष पदा करते हैं। विषाक्त मास सेवन के 2 से 18 घटो बाद मनुष्यो म जी मा मचलना, उल्टी, पेट मे दद व दस्त आदि के लक्षण देखे जाते हैं। ये लक्षण मनुष्य मे 8 से 12 घटो तक ही रहते हैं।

(III) मांस व अण्डे द्वारा एलर्जी

मास एक ऐसा खाद्य पदाथ है जिसमे प्रोटीन की काफी मात्रा रहती है। पशुओं, मुर्गियो और मछलियों के मास मे तथा अण्डा व अन्य खाद्य पदार्थों म काफी मात्रा मे प्रोटीन रहता है। ऐसा बताया गया है कि 30 प्रतिशत लोगा को किसी न किसी प्रकार के खाद्य पदाथ के प्रोटीन से एलर्जी रहती है।

(IV) प्राकृतिक विषैले पदार्थ

मछली और सेल मछलियो म भी कुछ जातियो मे परम्परा स उनके वशजों मे कुछ विषैले पदार्थों का अनुकरण हाता रहता है जिसे खाने से मनुष्यो म विषाक्तता पदा होती है। पोलर भालू के यकृत खाने से मनुष्यो मे हाइपर विटामिनोसिस ए हो सकता है।

(V) मांस का रासायनिक पदार्थों से सदूषण

अगर पशु या मछली या मास किसी विषैले रसायन के सपक मे आये तो उनमे विषाक्तता पदा हो सकती है। ऐसे मास का सेवन करने से मनुष्या के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल असर होता है।

मिनेमिटा रोग जो मनुष्य, पशु व पक्षी जब पारद के विपलेपन स पीडित मछलियो को खाते हैं तो उनको मिनेमिटा रोग हो जाता है। इस रोग से ये मनुष्य पक्षी व पशु सभी स्नायुमण्डल सम्बन्धी रोगो स ग्रसित हो जाते हैं। तथा उनकी मृत्यु तक हो सकती है और विकलाग सतति उत्पन्न होने लगती है।

जस्ता, आर्सेनिक, सीसा, एन्टीमनी, केडमियम और तांबा आदि के वतन म मास को रखने स उसम इन पदार्थों से विषाक्तता उत्पन्न हो जाती है। पशुओ के मास म डी डी टी, बी एच सी और रेडियो धर्मित पदाथ की भी अत्यधिक मात्रा मिल सकती है और ऐसे मास के उपयोग से मनुष्य के स्वास्थ्य को हानि होती है।

2 मुर्गियों के मास व अण्डो द्वारा मनुष्यों मे फलने वाले रोग

(1) न्यू कसल रोग (Newcastle disease)

यह रोग मुर्गियो मे होता है तथा कबूतरो और वतखो म भी फलता है। रोगग्रस्त मुर्गियो के सपक मे आने से मनुष्यो मे कन्जेक्टीवाइटिस पदा होती है। मुर्गियो में यह रोग तीव्र और अति उग्र होता है। इस रोग के कारण मुर्गी में सुस्ती अण्डा उत्पादन में गिरावट, भूख में काफी कमी मुख खोल कर सास लेना पीले हरे रग का डायरिया कलगी की श्यावता, और टर टर आवाज करने के विशेष लक्षण प्रकट होत हैं और उनकी शीघ्र ही मृत्यु हो जाती है। जीवित रहन वाली

मुर्गिया दुबल हो जाती हैं, कापती हैं, व उनके पखो और पावो को लकवा हो जाता है।

निणय बीमार मुर्गियो और उनके मास के सम्पक में आने से मनुष्या में कन्जेक्टीवाइटिस रोग हो जाता है। बीमार मुर्गी का मास खाने से मनुष्य में यह रोग नही फलता है।

(ii) सिटाकोसिस ओरनिथोसिस (Psittacosis Ornithosis)

यह एक वायरस रोग है जो अय वायरस, बक्टीरिया और रिक्टेसिया से भिन्न है तथा इसे सिटाकोसिस लिम्फोग्रेन्यूलोमा ग्रुप या सिटाकोसिस लिम्फोग्रेन्यूलोमा ट्रेकोमा (पी एल टी) ग्रुप या बेडसेनिए कहते हैं। यह रोग मुर्गी टर्की, बतक, कबूतर, चिडियो व तोते के जाति के पक्षियो मे होता है तथा कभी कभी इनसे यह रोग मनुष्यो मे भी फैलता है। इस रोग के कारण रोगी के फेफडो म रोग के लक्षण दिखाई देते हैं। इनमे बेचनी, यूरेट का अधिक मात्रा मे इकटठा होना, वेन्ट का हिस्सा हरा दिखाई देना और इनमे शरीर का कापना आदि प्रमुख लक्षण देखे जा सकते हैं।

जो मनुष्य बीमार मुर्गी के सपक मे आते हैं या उनके पास रहते हैं उन्हें यह रोग आसानी से लग जाता है तथा उनम न्युमोनिया तथा सप्टीसिमिया के लक्षण पदा होते हैं और रोगी की प्राय मृत्यु हो जाती है।

निर्णय — रोगग्रस्त मुर्गी व अय पक्षी से यह रोग सीधे सम्पक द्वारा फलता है इसलिये इनका मास के लिये वध नही करना चाहिये।

(iii) साल्मोनीलोसिस, टायफोयड रोग (Salmonellosis)

साल्मोनीला जीवाणुओ से मुर्गिया व उनके चूजा मे मृत्यु दर अधिक होता है और जो जीवित रह जाते हैं वे केरियर बन जाते हैं और उनमे रोग के लक्षण नहीं दिखते हैं। ऐसी मुर्गियो का मास व अण्डा मनुष्यो मे टायफोयड रोग उत्पन्न करता है। मास व अण्डो के द्वारा विषायण प्राय साल्मोनीला थोम्पसन, साल्मोनीला टायफीमूरियम और साल्मोनीला एन्टरीटिडिस जीवाणुओ के कारण होता है।

निणय — टायफोयड रोगग्रस्त या केरियर मुर्गियो को मास के उपयोग म नही लाना चाहिय। अगर इन मुर्गियो का मास पूणतया नही पकाया जाये तो इससे मनुष्यो म अन्न विषायण होता रहता है। ऐसी मुर्गियो के अण्डा को 10 स 15 मिनट तक उबालने के पश्चात् ही उनकी ऊपर की परत हटानी चाहिये। बिना उबले या आधे उबले अण्डे की ऊपरी सतह पर टायफोयड जीवाणु जीवित अवस्था म रहते हैं और अण्डे के खोल को उतारते समय ये जीवाणु अण्डे की भीतरी भाग म पहुच कर उसे खाने वालो मे रोग उत्पन्न करते हैं।

(iv) क्षय रोग (Tuberculosis)

मुर्गियो म यह रोग माइकोबक्टीरियम ट्यूबरक्युलोसिस के पक्षी प्रकार क

जीवाणु द्वारा होता है। ये जीवाणु मुर्गी मे यकृत, प्लीहा, आन्त्र और हड्डियो में विकृति पैदा करते हैं।

निर्णय – मुर्गियो के विरुम का क्षय रोग मनुष्यो मे बहुत कम पाया जाता है। इस रोग के जीवाणु अण्डे मे भी पाये जाते हैं। इस रोग से बचन के लिये अण्डे को पूण रूप से उबाल कर या पका कर ही खाने के काम मे लिया जाना चाहिये। अगर मुर्गी का मास पूण रूप से पका कर खाया जाये तो इस रोग के फलने का खतरा नही रहता है। किसी मुर्गी मे क्षय रोग के लक्षण हों और वे उसके सम्पूण शरीर मे फले हुए हो तो उसे खाने के लिये अयोग्य माना जाता है। अगर सिफ जिगर और आतो मे ही रोग के लक्षण हो तो उन्हें हटा कर शेष मांस खाने के उपयोग म लिया जा सकता है, मगर उसे पूण रूप से पका कर ही खाना चाहिये।

(v) अन्य रागा के कारण

एरिसिपेलस, लिस्टेरियोसिस जीवाणु और स्टैफिलोकोक्स का बहिर्जीवविष भी मुर्गी के मास के सेवन से मनुष्यो मे रोग उत्पन्न करने की क्षमता रखते हैं तथा ऐसे मास के निणय के बारे मे पीछे दिया गया है।

मांस प्रदूषण के कारण –

1 पशु को जब लम्बी दूरी से वधशाला तक लाया जाता है तब लम्बी यात्रा के दौरान वह थकता है और कमजोर हो जाता है, जिसके कारण कई तरह के जीवाणु उसकी सास से या आन्त्र से रक्त मे पहुचते हैं। ऐसे पशुओ का वध करने पर उनका मास किसी व्यक्ति के सम्पर्क म आने या खाये जाने पर रोग उत्पन्न कर सकता है।

2 अगर वधशाला में पशु का रक्त निकालते वक्त चाकू या छुरी या उसकी चमडी पर कुछ जीवाणु हो तो वे रक्त नलिकाओ द्वारा शरीर के अगो व मास मे पहुच जाते हैं।

3 पशु का रक्त निकालते समय जब उसकी भोजन की नली भी कट जाये तो उसमे से निकले खाद्य पदार्थ मे होने वाले जीवाणुओ से गदन के मास व जीभ का सदूषण होता है।

4 पशु का मास, उस पर से चमडी हटाते समय पशु के शरीर पर लगे मल मूत्र व अन्य गन्दगी के कारण प्रदूषित हो जाता है।

5 पशु के शव को गन्दे पानी से धोने से उसके मास का सदूषण होता है।

6 मास गन्दे हाथ कपडे या किसी औजार के कारण दूषित हो सकता है।

7 वधशाला की फश अगर साफ नही हो और उस पर अगर मास रखा जाये तो इससे भी जीवाणुओ द्वारा मास का सदूषण हो सकता है।

8 अगर बीमार पशु का वध किया जाये तो उसके दूषित मास से मनुष्यो म रोग उत्पन्न हो सकते हैं।

मास को प्रदूषित होने से बचाने व नियंत्रण के उपाय

1 दूर स्थानो से मास के लिये लाये गये पशुओ को वधशाला मे 24 घटे तक आराम करने दें।

2 वधशाला मे लाये गये पशुओ के पीने के लिये शुद्ध व आरोग्यप्रद पानी की व्यवस्था करें।

3 पशुओ को वध करने से पहले उन्हे पानी से धोकर उनके शरीर से मल मूत्र साफ करें ताकि उनके शरीर पर से जीवाणुओ की मात्रा कम हो जाये और उनका वध होने पर जब उनकी चमडी उतारी जाये तो मास के सदूषण मे कमी हो।

4 कसाई स्वच्छता बनाये रखे और स्टरलाइज औजारो का उपयोग करे। इसके लिये चाकू, छुरी, करोती, कपडे आदि को धोने वाले सोडे के 4 प्रतिशत घोल के पानी मे आधा घटे तक उबालें।

5 मास उत्पादन के लिये स्वस्थ पशुओ का ही वध करें।

6 वधशाला के फर्श, दीवारो और नालियो की स्वच्छता बनाए रखें।

7 वधशाला मे बिजली की रोशनी का पूर्ण प्रबध करें।

8 कसाई व मास वितरण के कार्य मे लगे लोगो को चमडी, आख व श्वास का रोग नही होना चाहिये। उनके स्वास्थ्य की समय समय पर जाच होनी चाहिये तथा उनको स्वच्छता के बारे मे पूर्ण ज्ञान कराना चाहिये।

9 मास व अण्डो को 5° सी तापमान पर रखें या पकाने के बाद तुरन्त इस्तेमाल करें और बचे हुए खाद्य पदार्थ को रेफ्रिजरेटर मे ही रखें।

10 अधपके मास का सेवन नही करें। मास को छोटे छोटे टुकडो मे बाट कर पकायें। अगर मास के बडे टुकडे पकाने हो तो उन्हे पूर्णतया सही तापमान पर पकायें।

11 मास निरीक्षक द्वारा वधशाला मे पशुओ को वध से पहले व बाद में उनके मास का बहुत बारीकी से निरीक्षण करना चाहिये। बीमार पशुओ का वध नही करने देना चाहिये और स्वस्थ पशुओ का वध करवाकर खाने योग्य मास को ही वधशाला से बाहर आने देना चाहिये।

6

पशुओ के शव, अयोग्य एव बचे हुए मास का निस्तारण

पशुओ के शव अयोग्य व बचे हुए मास म विकार पदा करने वाले कई किस्म के सूक्ष्म जीवाणु होते हैं और इनका निस्तारण ठीक विधि द्वारा नही होने से ये पानी और हवा दानो को प्रदूषित करते हैं। बीमारी पदा करने वाले कई किस्म के जीवाणु पशु के मरने के कुछ समय बाद ही समाप्त हो जाते हैं। इन जीवाणुओं को समाप्त करने म राइगर मोरटिस (Rigor mortis) की बहुत सहायता रहती है। यह क्रिया पशु के मरने के तुरन्त बाद ही शुरू हो जाती है। स्वस्थ पशु के मास पेशी का पी एच 7 होता है, जबकि पशु के मरने के कुछ समय पश्चात् यह 5 4 तक आ जाता है और इस कारण ज्यादातर सूक्ष्म जीवाणु समाप्त हो जाते हैं। लेकिन कुछ किस्म के जीवाणु जैसे ए थ्र क्स और क्लोस्टीडियम समूह के जीवाणु जब अपने चारो ओर स्पोर बना लेते हैं तब यह बहुत लम्बे समय तक के लिये जीवित रह सकते हैं। एन्थ्र क्स जीवाणुओ को स्पोर बनाने से रोकने के लिये कुछ तरीके अपनाये जा सकते है जसे कि इस बीमारी से मरने वाले पशु के शव को नही खोलना और शरीर के प्राकृतिक खुले द्वारो (नाक के छिद्र मुह, मल और मूत्र निकासी द्वार) को रसायन से भीगी हुई रूई या कपडे द्वारा बन्द करना। इस विधि को अपनाने से इस रोग के जीवाणु हवा के सपक मे नही आ पाने के कारण स्पोर बनाने मे असमथ रहते हैं।

पशु के मरने के तुरन्त बाद उसके शव को जीवाणु मारने वाले रसायन मे भिगोये गये बोरे से ढक देते हैं। ऐसा करने से कुत्ते गिद्ध और मक्खिया शव के पास नही आते, और ऐसा नही करने पर शव के द्वारा सूक्ष्म जीवाणु फलते हैं और इस कारण सक्रामक रोगो को नियन्त्रित करना मुश्किल हो जाता है। मृत शव के मल मूत्र से सदूषित हुई भूमि घास और पशुघर की बिछावन को भी चूने, लकडी के बुरादे या राख द्वारा ढकें और उसका निस्तारण ठीक तरीके से करें। शवो को अक्सर खुली हवा मे ही छोड दिया जाता है। इससे कुत्ते जगली जानवर गिद्ध और मक्खिया आकर्षित होती हैं। शवो को हवाई अड्डे के पास कभी नही छोडना चाहिये इससे वहा हजारो की सख्या मे गिद्ध आकर्षित होते हैं और इसके कारण वायुयान या हेलीकोप्टर दुघटना ग्रस्त हो सकते हैं। इनके द्वारा इनफेक्सीयस और

कटेजीयस बीमारी वाले जीवाणु भी फलते हैं। अक्सर शवो को ०र के बाहर खुले म या नदी मे छोड दिया जाता है। इससे वायुमण्डल की हवा म दुर्गन्ध फैलती है और जीवाणुओ से पानी और हवा का सदूषण होता है।

ऊपर लिखी गई बातो से यह फ जाहिर होता है कि पशुओ के शवों तथा अयोग्य व बचे हुए मांस के निस्तारण मे लापरवाही बरतने से भारी नुकसान होते हैं और इस कारण बीमारियों को नियन्त्रित करने म काफी कठिनाइयो का सामना करना पडता है।

शवो का सही ढग से निस्तारण करने के लिय उनको ो श्रेणियो में बाटते हैं। एक तो वे पशु जो कटेजीयस बीमारी द्वारा ग्रसित होकर मरे हों या इसका सदेह हो। ऐसे शवो का पूर्णरूप से निस्तारण कर देना चाहिये। दूसरी श्रेणी मे वे शव, मास और उनके बचे हुए टुकडे आते हैं जिनमे बीमारी वाले सूक्ष्म जीवाणु होने का बिल्कुल सदेह नहीं होता है और वे कारखानो म पशु आहार या खाद बनाने के काम मे लिये जा सकते हैं।

शवों के निस्तारण के तरीके –

1 गाडना
2 शवो के लिये बनाये गये कुओ का उपयोग
3 जलाना
4 शवो से बाइ प्रोडेक्ट बनाना
 (ए) गीली विधि द्वारा
 (बी) सूखी विधि द्वारा

1 गाडना

पशुओ के शवो का अक्सर इस विधि द्वारा निस्तारण किया जाता है। जिन शवो मे स्पोर या केपस्यूल बना सकने वाले जीवाणु हो उन सभी के निस्तारण के लिये यह विधि ठीक नही रहती है। इस तरीके के लिये 6 से 8 फुट गहरा गड्ढा खोदकर उसमे शव रखते हैं और उसे चूने या अन्य जीवाणु मारने वाले रसायन से ढकते हैं। शव पर कम से कम 4 फुट मिट्टी की परत जरूर डालनी चाहिये। शव का पोस्टमार्टम, खोदे गये गड्ढे के पास ही करना चाहिये और इसके पश्चात् शव व उसके अदर के सभी अगो और पास में सदूषित हुई घास या मिट्टी आदि सभी गड्ढे में डाल दें। शव की चमडी को चाकू द्वारा कई जगह पर से काटते हैं इससे चम उद्योग में लगे लोग हतोत्साहित होगे और शव को मिटटी में से दुबारा निकालने का कोशिश नही करेंगे, क्योकि कटी हुई चमडी की बाजार मे कीमत नही मिलती है। अयोग्य व बचे हुए मास का भी जमीन मे गाड कर निस्तारण किया जाता है तथा उसे भी चूना या अन्य रसायन से ढक कर मिटटी म दवा देते है।

एन्थ्रैक्स बीमारी से मरे हुए पशुओ मे शवो का पोस्टमाटम नही करना चाहिये। शव मे हवा नही मिल पाने के कारण ये जीवाणु मृत शरीर मे तीन दिना से ज्यादा समय के लिये जीवित नही रह पाते हैं और सडने की क्रिया द्वारा ये शीघ्र ही मर जात हैं। कुत्ते या अन्य जगली जानवर शवा की गन्ध से आकर्षित हुआ करते हैं इसलिये इन्हे रोकने के लिये वहा कटीले तार या कटीली झाडी की बाड लगायें और उस खड्डे की मिट्टी पर फिनाइल का घोल डाल देवें।

जहा शवो का निस्तारण करना हो वह जगह शहर की आबादी से काफी दूर होनी चाहिये।

2 शवों के लिये बनाये गये कुओं का उपयोग

ये कुए फाम या गावो के लिये बहुत उपयोगी हैं। ये जमीन मे 10 से 20 फुट गहरे और 10 से 15 फुट व्यास के हाते हैं। इनके फश पर सिफ मिट्टी होता है और इसकी दीवार सीमेट व ककरीट की बनाई जाती है। इसके ऊपर कुए के चारो ओर लोहे की बनी जाली का ढाचा लगाया जाता है जिससे पक्षी अदर नही जा सकते हैं। जमीन के ऊपर इस पर दस फुट गोलाई मे दीवार भी बनाई जा सकती है और उस पर एक जाली का ढाचा रखा जाता है। जहा वर्षा ज्यादा हो वहा इसकी छत के लिये एक सड का प्रबध किया जा सकता है और उसके नीचे कुछ जगह वन्टीलेशन के लिये दी जानी चाहिये। कुए के ऊपर जमीन पर सीमट का एक प्लेटफाम बनाते हैं जिस पर शव का पोस्टमाटम किया जाता है और शव व उसके भीतरी अगो को कुए म फेंक दिया जाता है। शव को चूने और नमक से ढका जाता है। कुछ दिनो बाद चमडी व मास सडकर गल जाते है और सिफ हड्डिया ही रह जाती है। इस विधि द्वारा शवो की हड्डियो का नुकसान नही होता है, और उन्हे इकट्ठा करके बेचा जा सकता है।

3 जलाना

शवो, अयोग्य व बचे हुए मास आदि सभी के निस्तारण के लिये जलाने की विधि बहुत ही उत्तम और स्वास्थ्यप्रद है। कटेजीयस रोगो से मरे हुए पशुओ के निस्तारण के लिये इस विधि को ही काम मे लाया जाना चाहिये। शव जलाने के लिये जमीन या दाहक भट्टी का उपयाग किया जा सकता है।

गाया के लिये 7 फुट लम्बा, 5 फुट चौडा और $1\frac{1}{2}$ फुट गहरा गड्ढा बनाया जाता है। इसके अन्दर भी एक छोटा गडढा बनाया जाता है, जो 7 फुट लम्बा, 4 फुट चौडा और $2\frac{1}{2}$ फुट गहरा होता है। छोटे वाले गडढे म लकडी, घास और जलान के लिये तेल रखा जाता है। ऊपर वाले गडढे की चौडाई की तरफ जो आधा फुट जगह शप रहती है उस पर कैची के आकार मे दा लाहे की छडें लगाकर उस पर शव को रखा जाता है। शव के आसपास कुछ लकडिया रख कर शव को जला दते हैं।

शवो को जमीन पर जलाने के लिये 2 फुट की दूरी पर दो समानातर खाइयाँ 5 से 6 फुट लम्बी, 9 इच चौडी और 9 इच गहरी खोदी जाती हैं। शव को खाइया पर रखा जाता है। शव के ऊपर व आसपास लकडिया, कोयले और तेल को रख कर उसे जलाया जाता है। अगर शव किसी कटेजीयस बीमारी का न हो तो इसके भीतर से पेट, आतें आदि बाहर निकाल कर आग जलायें तो ज्यादा अच्छा रहता है। बडे शहरो, प्रयोगशालाओ और जहा पर ज्यादा तादाद मे शव, सदूषित मास इत्यादि हो तो वहा दाहन भटटी का उपयोग किया जाता है। यह काफी सस्ती व सही विधि है। यह उचित जगह पर बनाई जाती है इसलिये इससे निकलने वाली दुग ध से आसपास रहने वालो का तकलीफ नही होती है। इसके लिये लकडी, कोयला तेल, गस या बिजली किसी का भी उपयोग किया जा सकता है। सही व तीव्र गति से शव का निस्तारण करने के लिये भटटी म करीबन 1300° सी तापक्रम की जरूरत होती है।

4 शवो से बाइ प्रोडक्ट बनाना

ऊपर दिये गये तरीको से कुछ भी बाई प्रोडक्ट हासिल नही होता है और इसके कारण काफी नुकसान उठाना पडता है। मास से बाई प्रोडक्ट बनाने के लिये उन पशुओ के शवो को चुना जाता है जो इ फेक्सीयस या कटेजीयस बीमारी से ग्रसित होकर नही मरे हो, और जिनकी मृत्यु किसी दुघटना मे हुई हो, या जिन पशुओ का मास उनकी शारीरिक कमजोरी के कारण अच्छे खाने योग्य मास मे नही आता हो या न खाने योग्य बचा हुआ मास आदि। अगर इन सभी का सही उपयोग नही किया जाये तो एक तो काफी नुकसान होगा और दूसरा इसके सडने से बीमारिया और बदबू फलेगी। अगर बाइ प्रोडक्ट बनाने के लिये कोई शव लाया जाये तो उसक साथ म डाक्टर का प्रमाण पत्र भी लाना जरूरी होता है, जिसमे खासकर यह लिखा हो कि 'यह शव ए थ्रैक्स बीमारी का नही है। इस विधि द्वारा अनुपयोगी मास से बसा और कुत्तो, बिल्लियो व मुर्गियो के लिये उपयोगी भोजन बनाया जाता है और फर्टीलाइजर भी तयार किये जाते है। इसके लिय निम्न विधियो का उपयोग किया जा सकता है –

(ए) गीली विधि द्वारा

मास को हड्डिया आदि स अलग करत है और उन्ह [illegible] म 15 पाण्ड भाव पर आधा घटे तक रख कर मास व हड्डियो से आहार बनाते हैं। इस विधि द्वारा बने आहार से मास की वसा और प्रोटीन का काफी नुकसान होता है। [illegible]मके लिय वसा को मास स और हड्डियों स अलग किया जाता है। इससे बने प्राडक्ट का फर्टीलाइजर के लिय काम म लाया जाता है।

(ब) सूखी विधि द्वारा

एक बद कमरेनुमा बडे पात्र म मास को रखा जाता है। उसक चारा [illegible]

म गम वाष्प प्रवाहित होती रहती है। उसके अन्दर एक लोहे की छड होती है जिस पर बहुत सार हत्थे (Arms) लगे रहते है। जब वह छड घूमती है तो उसके हत्थे द्वारा माम ऊपर नीचे हिलता रहता है और उसम मास अपनी ही पिघली हुई वसा मे पक कर तयार हो जाता है। ज्यादा वसा, जो पिघली हुई अवस्था मे होती है, इसके पेन्द म लगी टोटी को खोलकर अलग निकाल ली जाती है। इस विधि म शव की वसा और प्रोटीन बेकार नही जाते। उसम पका हुआ मास पशुओ को खिलाने के काम म लिया जाता है या फिर उसके साथ फॉसफेट मिलाकर खेतो के लिये फर्टीलाइजर तयार किया जा सकता है। यह विधि बहुत उपयोगी है क्योकि इसके द्वारा कीमती बाइ प्राडक्ट तयार होते हैं।

वृक्षारोपण

वृक्षारोपण द्वारा प्रदूषण से मुक्ति का एक उपाय

वास्तव मे प्रदूषण एक तरह का जहर है जो हवा, पानी, प्रकाश और खाद्य पदार्थ जसे प्राणदायक तत्वों को जहरीला बनाता है। आज के युग म धरती पर वृक्ष ही एक ऐसा माध्यम है जो अपन पास होने वाले प्रदूषण से हमारी रक्षा करता है, प्राण वायु देता है तथा दूषित पानी मे पनप कर पानी के स्रोतो को प्रदूषण से होने वाले खतरा से बचाता है। जैसा कि विदित है कि वृक्षारोपण द्वारा प्रदूषण से मुक्ति मिलती है परन्तु एक वृक्ष को बढने मे कई वर्ष लगते है इसलिय वृक्ष लगाने का काम जल्दी से जल्दी हाथ मे लेना चाहिये।

यह बात सच है कि मनुष्यो और पशुओ के लिये, चाहे वे शहर म हो या वनो मे, वृक्ष उनके जीवन और मृत्यु का प्रश्न है, क्योंकि अगर वृक्षों को रोप कर उनकी देखभाल नही की जाये तो आने वाले वर्षों मे जीवन दुष्कर हो जायेगा। हर व्यक्ति को यह भावना पदा करनी होगी कि 'वृक्ष होगे तो पर्यावरण अच्छा हो सकेगा, और इसके कारण मनुष्य व पशु और पक्षी भी स्वस्थ रह सकेगे। इसलिये अच्छे स्वास्थ्य और वातावरण तथा दीर्घ जीवन के लिये वृक्षारोपण पर ज्यादा ध्यान देना बहुत ही जरूरी है जिससे हर प्रदेश का विकास पूर्ण रूप से हो सकेगा।

प्रदूषण की समस्या किसी खास व्यक्ति विशेष की नही है बल्कि यह सारे मानव समाज की समस्या है। यहा तक कि नगरपालिका वाले क्षेत्र म भी ग द पानी से होने वाले प्रदूषण को वृक्ष लगा कर कम किया जा सकता है।

वृक्ष हमारा जीवन है अत हर व्यक्ति को खुद को और मिल जुल कर तथा सस्थाए बनाकर वृक्षारोपण करना चाहिये। आज के युग मे पर्यावरण का प्रदूषण से बचाने के लिए हर व्यक्ति को तहे दिल से भागीदारी निभानी चाहिय। राज्यो मे 'वन विभाग' हर साल योजना के अनुसार करोडो पौधे लगवाता है लेकिन इसकी पूर्ण सफलता तभी मिल सकती है जब हर व्यक्ति इन पौधो की देखभाल अच्छी तरह से करे, ताकि उनके लिये तथा भावी पीढी क लिए भविष्य मे एक सुनहरा पर्यावरण तयार हो सके।

हर व्यक्ति को वृक्षारोपण करके पर्यावरण उस तरह का बनाना है जैसा कि हमे बुजुर्गों से विरासत मे मिला। मनुष्य बिना सोचे-समझे अपनी जरूरतें पूरी

करन के लिये वृक्ष काटते जा रहे हैं, जिससे जंगल उजडते जा रहे है और हरा भरा जगल बजर भूमि म बदलता जा रहा है। इसी कारण से आज मानव समाज को बाढ और सूखे का सामना करना पड रहा है। इन प्राकृतिक विपदाओ से बचन के लिए वृक्षारोपण करना बहुत जरूरी है। इसस प्रकृति का सतुलन बना रहेगा। पिछले 30 सालो से भारत की आबादी तेज से बढी है और इसके साथ ही कृषि और कारखानो के क्षेत्र मे भी बहुत बढोतरी हुई है। कृषि के काम मे लिये जाने वाले रासायनिक पदार्थों और कारखाना स निकलने वाली गदगी के कारण प्रदूषण बढ गया ह। इ ही कारणा से पिछले 15 सालो स प्रदूषण की समस्या बहुत तेजी से बढी है और यह एक चिता का विषय है। इसके कारण हमारा देश ही नही बल्कि पूरा विश्व प्रभावित है।

प्रदूषण की समस्या को हल करने के लिय हर व्यक्ति को आधुनिक तरीके स (चित्र 10) जल्दी बढने वाले वृक्ष लगाने चाहिये। पौधों की सुस्थापना के समय उनको नियमित पानी देने मे होने वाली परेशानी स और पानी की मात्रा मे बचत करने के लिये, केन्द्रीय मरु अनुसधान सस्थान, जोधपुर के बीकानेर प्रादेशिक सस्थान (गुप्ता आदि 1987)* द्वारा एक विकसित की गई तकनीक का उपयोग किया जा सकता है। इस तकनीक मे एक दोहरी दीवार वाले गमले का उपयोग करते हैं (चित्र 10)।
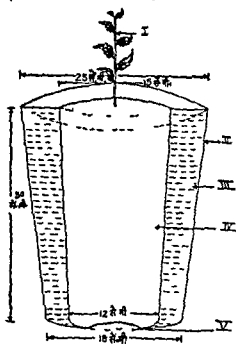
चित्र 10 परिवर्धित गमले का अनुदघ्य काट। I पौधा, II रग स पुती हुई सतह, III पानी, IV मिट्टी और V खुला हुआ भाग

* आई सी गुप्ता, पी एम सिह, एन डी यादव तथा बी डी शर्मा, (1987) पौधों को सुस्थापित करने की नई विधि परिवर्धित गमला। आविष्कार, अगस्त, 293–294

इस गमले की बाहरी दीवार के मुह का व्यास 25 से मी तथा भीतरी गमले का व्यास 15 से मी होता है। गमले की ऊंचाई 30 से मी तथा आधार पर बाहरी ओर अन्दर के गमले का व्यास क्रमश 18 तथा 12 से मी रहता है। भूमि मे पानी का रिसाव रोकने के लिये गमले की बाहरी दीवार कोलतार से या सीमेन्ट से पोत दी जाती है। दोनो गमला के बीच के स्थान मे पानी भरा जाता है तथा अन्दर वाले गमले में नसरी से प्राप्त पौधा उसकी मिट्टी सहित लगाया जाता है। पानी भरे हुए स्थान को ऊपर से पोलीथीन से ढक देते हैं जिससे कि वाष्पन द्वारा पानी की हानि नही हो। अन्दर वाले गमले का तल पूरा खुला रहता है ताकि वृद्धि के समय पौधे की जडें सुगमतापूवक नीचे की भूमि की तरफ बढ सकें। गमले के अदर भरी गई मिटटी मे उत्पन्न चूषक बल से पानी अदर की ओर रिसता है और गमले की मिटटी को लगातार नम बनाए रखता है जिससे पौधो की वृद्धि कम पानी मे भी अच्छी होती रहती है। इस तकनीक से जल के परिवहन, मात्रा और लगने वाली मजदूरी मे बचत होती है। अगर पानी मे थोडा सा यूरिया घोल दिया जाये तो पौधो को पानी के साथ-साथ खाद भी मिलती रहेगी। इस विधि द्वारा तयार किये गये गमले मे पेड लगाकर जमीन मे रखकर रेत के टीलो को आसानी से हरा भरा किया जा सकता है।

वन कम होते रहने और आबादी के बढने से वातावरण मे काबन डाइ-आक्साइड की मात्रा सामान्य से अधिक बढती जा रही है जिसके कारण मनुष्यो और दूसरे प्राणी मात्र को आने वाले समय मे एक गम्भीर समस्या का सामना करना पड सकता है। आज के समय मे शहरो और कारखानो के पास वाले क्षेत्र के वायुमण्डल मे कावन डाइआक्साइड की मात्रा 330 अश प्रति मिलियन है जो कि कारखानों के लगने से पहले से 14 प्रतिशत ज्यादा हुई है। इससे यह बात साफ जाहिर होती है कि वनो के इलाके घटने व आबादी और कारखानो के बढने से वातावरण मे आक्सीकरण की क्रिया मे कमी होती जा रही है और इसलिए काबन डाइआक्साइड की मात्रा बढ रही है। यह समस्या मानव जीवन के लिये एक गम्भीर चुनौती है। इसलिये यह जरूरी है कि सभी जगह आबादी वाले भाग के पास नये उपवन, बाग व बगीचे लगाये जावें जिससे शहरो के लिये शुद्ध हवा मिल सके, क्योकि ये पेड फेंफडो के रूप मे काय करते रहते हैं। ये वायुमण्डल से काबन डाइआक्साइड लेकर बदले मे शुद्ध हवा देते हैं।

कारखानो वाले क्षेत्रो मे और जहा धुआ तथा जहरीली गैसें छोडी जावें वहा भी वृक्ष हवा मे फैलने वाले इस जहर को बराबर लेते रहते हैं और बदले मे वायुमण्डल मे शुद्ध हवा छोडते रहते हैं। कारखानों से निकलने वाली जहरीली गैसो मे से सल्फर डाइआक्साइड, नाइट्रिक आक्साइड, ओजोन, हाइड्रोजन सल्फाईड, हाइड्रोजन क्लोराइड और क्लोरीन आदि गैसो को वृक्षो की पत्तिया हवा से सोखती

रहती हैं और वातावरण को दूषित होने से बचाती हैं जिससे कई मनुष्यो व जानवरो की जान बचती है।

आज के समय में वृक्ष नही लगाने से अगले 50 सालो बाद शहरो में यह हालत हो सकती है कि मनुष्यो को जिन्दा रहने के लिये आक्सीजन मास्क लगाकर घूमना पडेगा। यदि वृक्ष लगाकर प्रदूषण को रोका नही गया तो मनुष्यो और पशुओ म सक्रामक रोग, मानसिक हालत का बिगडना और कई तरह की कैंसर जसी भयकर बीमारिया फैल सकती हैं। इसलिये इन सभी बीमारियो से बचने के लिये वक्षारोपण जरूरी है।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रोफेसर राव इस सबध मे बताते हैं कि कई तरह के वक्ष हवा से हानिकारक गसो का विषपान कर सकते हैं। कुछ वक्ष रेतीली भूमि पर भी लगाये जा सकते हैं। इनमें मुख्यत पीपल, बरगद, कचनार, अर्जुन, अशोक, नीम और गुलनार आदि हैं।

प्रकृति मे वनस्पति और जीव जन्तुओ के समूह एक-दूसरे पर निभर रहते हैं। इनसे पर्यावरण म अच्छा वातावरण, पर्याप्त जलस्रोत और भूमिगत व्यवस्था भी अच्छी रहती है। वृक्षारोपण से और भी कई फायदे हैं विशेषत हवा में नमी बनी रहती है जिससे गर्मी से काफी बचाव रहता है और ऐसी जगहो पर वर्षा भी अधिक होती है। वृक्षो से जो पत्तिया गिरती हैं वे सूखने और सडने पर पेडो व खेतो के लिये अच्छी खाद का काम करती हैं व इससे उपज मे बढ़ोतरी भी होती है। वृक्षो के कारण भूमि का कटाव रुकता है तथा भूमि के नीचे पानी का अच्छा जमाव होता है। वृक्षो के कारण जीव व जन्तुओ को भी सरक्षण मिलता है।

जहा वन होते हैं वहा वर्षा का पानी एकदम जमीन म सोख लिया जाता है और वह पानी जल्दी ही धरती के निचले पानी के स्रोतो मे पहुच जाता है। इस प्रकार जहा वनो में वृक्ष अधिक होते हैं उस धरती के नीचे पानी बहुत मात्रा मे इकट्ठा हुआ मिलता है और इससे बहुत बडा आर्थिक फायदा होता है।

वृक्ष मरुभूमि का नियत्रण करते हैं और भूमि मे बढने वाले क्षार तत्वों से होने वाले नुकसान से बचाते हैं।

वृक्षो के कारण पशुओ को अच्छा वातावरण मिलता है और कुछ तरह के वक्षो की पत्तिया उनके चारे के काम म भी आती हैं जिससे उनकी दूध देने की क्षमता मे बढोतरी होती है। प्रदूषण की रोकथाम और अच्छे व सतुलित पर्यावरण के लिये हमारे पूरे भू भाग के 33 प्रतिशत भाग पर वन होने जरूरी हैं। भारत म $12\frac{1}{2}$ प्रतिशत क्षेत्र मे ही वन पाये जाते हैं और जहा जहा 10 प्रतिशत वन का भाग उजाड हो गया है वहा बर्बादी ही हुई है। राजस्थान म वन क्षेत्र घटन की दर प्रति 10 सालो मे एक प्रतिशत रही है। राजस्थान मे वन क्षेत्र कुल 4 प्रतिशत भूमि पर ही है, जिससे यह बात सामने आती है कि राजस्थान मे वनो की बहुत कमी है।

भू उपग्रह से राजस्थान और हरियाणा के जगलो की तस्वीर ली गयी तो पता लगा कि दोनो प्रदेशों मे जहा जहा विश्नोई समुदाय के लोग बसे हुए हैं वहा ही हरियाली दिखाई दी। इससे यह साफ जाहिर होता है कि वृक्षो की जी जान से सेवा की जाये तो रेगिस्तान को भी हरा भरा किया जा सकता है। इसलिये परिवार के हर सदस्य को एक वृक्ष जरूर लगाकर उसकी रखवाली की जिम्मेदारी लेनी चाहिये। इन वृक्षो के प्रति दोस्ती की भावना जगाना भी जरूरी है। इससे फायदा ही फायदा है और खास कर प्रदूषण की रोकथाम आसानी से होती है।

भारत की प्राचीन सस्कृति मे भी यह स्पष्ट झलकता है कि आश्रम व्यवस्था के ब्रह्मचय काल मे और वानप्रस्थ अवस्था मे भी मनुष्य पेड लगाकर उनकी देख-भाल किया करते थे।

कृषि क्षेत्र की बढती माग को पूरी करने के लिये वन क्षेत्रो को घटाना नही चाहिये और साथ मे यह भी ख्याल रखना चाहिये कि पशुओं की सख्या मे बढोतरी हो रही है और इनसे वनो मे वक्षो को होने वाले नुकसान की रोकथाम जरूर करनी चाहिये।

आज के युग में मनुष्यो और पशुओ का जीवन बहुत विषला होता जा रहा है क्योकि इनके लिये आज न तो खाने के लिये शुद्ध अ न है न पीने के लिये शुद्ध पानी और न ही सास लेने के लिये प्राणदायी साफ सुथरी हवा ही है। आज के युग मे जितनी वैज्ञानिक प्रगति हुई है उसके साथ साथ एक ओर मनुष्य अ न, जल और हवा को अपने भौतिक कारणो से दूषित करता जा रहा है। आज सभी लोग इस बढते हुए प्रदूषण से बचने के तरीके लगातार खोज रहे है, पर उनको यह बात नही भूलनी चाहिये कि प्रकृति ने हमे हरे भरे वक्ष और वन विरासत म दिये हैं। इन वृक्षो द्वारा बहुत ही आसानी से मनुष्य गैसीय पानी और आवाज जैसा प्रदूषण से उत्पन्न होने वाली हानिया से बच सकता है। यह सच है कि वृक्ष ही ऐसी चीज है जो कि दूषित वातावरण को बदलकर हमे प्राण वायु देती हैं जिससे वातावरण शुद्ध रहता है। ऐसा माना गया है कि औसतन 50 टन भार वाला एक हरा भरा वृक्ष एक साल मे करीबन एक टन आक्सीजन छोडता है। वृक्ष दूषित पानी को भी साफ करते हैं और साथ ही शोर से होने वाले प्रदूषण को भी कम करते हैं। इस तरह से वृक्ष प्रदूषण रोकने मे हमारी बहुत मदद करते हैं। हर व्यक्ति को अपने आगन मे, खेत मे, जमीन पर, रेल मार्गों के साथ साथ सडको के किनारे और कारखानो वाली बस्ती म वक्ष जरूर लगाने चाहिये ताकि उनका जीवन इस प्रदूषित वातावरण म भी सुरक्षित रह सके।

प्रदूषण रोकने के लिये पर्यावरण ़ रक्षण आज के युग की सबसे बडी समस्या है। विकास के नाम पर आज हम भावी पीढी के लिये जहरीली वायु, दूषित जल बजर भूमि, नगे पहाड, कोलाहल पूण वातावरण और मौसम के घातक परिवतन

जसी समस्याए छोड रहे हैं। इन सभी समस्याओं के समाधान के लिये 5 जून, 1972 को प्रथम अतर्राष्ट्रीय पर्यावरण सम्मेलन का आयोजन हुआ और तब से 5 जून हर वष विश्व पर्यावरण दिवस के रूप मे मनाया जाने लगा है। पर्यावरण सरक्षण के लिये भारतवष मे 1976 मे 42 वें सविधान सशोधन के जरिये हमारे सविधान में एक नया 'नीति निर्देशक' सिद्धान्त (अनुच्छेद 48 ए) जोडा गया जिसके अनुसार 'हर एक नागरिक का यह कत्तव्य होगा कि वह वनो, झीलो, नदियो एव वन्य जीवो सहित प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा करे और उसे बेहतर बनाये तथा सभी जीव धारियो के प्रति करुणा भाव अपनाये। उपरोक्त समस्याओ की ओर अगर पूण मनायाग से दृष्टिपात किया जाये तो यह साफ जाहिर होता है कि यदि वक्षारोपण के महत्व को स्वीकारते हुए पेड पौधो को विकसित किया जाये तो इससे जहरीली वायु दूषित जल, बजर भूमि, नगे पहाड, कोलाहल पूण वातावरण और मौसम जसी जटिल समस्याओ का समाधान करने मे बहुत सहायता मिलेगी। इसलिये पेड-पौधों को लगाना और उनकी रक्षा की भावना रखना हर व्यक्ति और खासकर विद्यार्थियो के लिये बहुत जरूरी है। इससे आने वाली पीढी को प्रदूषित वातावरण से मुक्ति मिल सकेगी।

द्वितीय भाग

पानी और हवा का विश्लेषण

(प्रायोगिक)

पानी-स्रोतो से प्रयोगशाला तक

परिचय

मनुष्यो और पशुओ के लिये शुद्ध व आरोग्यप्रद पानी प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध होना अति आवश्यक है । यह उनके अच्छे स्वास्थ्य के लिये जरूरी है । शुद्ध पानी वह है जो रगहीन, गधहीन व उचित स्वाद वाला हो और उसमे किसी भी प्रकार की गदलापन जसी अशुद्धिया न हो । आराग्यप्रद पानी वह है जिसमे रोग उत्पन्न करने वाले सूक्ष्म जीवाणु न हो तथा उसमे विषाक्त रसायन हो तो वह स्वीकार योग्य मात्रा मे हो । इसके साथ ही उसमे ऐसे पदाथ न हो जो कि शीशा, जस्ता, लाहा एव दूसरे विषाक्त पदार्थों को पानी के सग्रह एव वितरण के दौरान घाल लें ।

पानी के स्रोत--

(अ) वर्षा का पानी

(ब) धरातल का पानी

(1) नालो, नदियो और ऊपरी भूमि का पानी

(स) भूमिगत पानी

(1) छिछले कुए (Shallow Well) का पानी

(2) गहर कुए का पानी

(3) पाताल तोड कुए (Artesian Well) का पानी
ऐसा कुआ जिसमे दाब द्वारा भूमि का पानी लगातार सतह पर पहुच जाता है ।

(4) झरना ।

(अ) वर्षा का पानी,

वर्षा का पानी जब धरती पर आता है तो वायुमण्डल से आक्सीजन, नाइट्रोजन, कावन डाइआक्साइड, अमोनिया का धुआ, वाष्पित अम्ल, धूल के कणा तथा सूक्ष्म जीवो को भी अपने साथ ले आता है । कावन डाइआक्साइड की उपस्थिति के कारण पानी अम्लीय हो जाता है ।

(ब) धरातल का पानी

वर्षा का पानी जब धरती पर पहुचता है तो वहा मौजूद वानस्पतिक पदार्थों

को अपने साथ बहा ले जाता है जो कि कुछ समय म पानी मे गलकर ह्यूमिक अम्ल (Humic acid) का निर्माण करते हैं। इसके साथ ही वह पानी मनुष्यो एव पशुआ के मल को भी अपने साथ बहाकर ले जाता है जिसमे रोग उत्पन्न करने वाले हानिकारक सूक्ष्म जीवाणु होते हैं। इस तरह का पानी जो शहर, गाव एव औद्योगिक वस्तियो से आता है अपने साथ अस्वीकृत खनिज तथा विषाक्त पदाथ बहा ले आता है। अत वर्षा का पानी हानिकारक होता जाता है। ऐसे पानी मे शैवाल (Algae), भूमि के जीवाणु फफूदी एव प्राणी जगत् के मुख्य जीव जैसे मालस्का, स्पाज एव प्रोटोजोआ भी हो सकते हैं।

(स) भूमिगत पानी

छिछले कुए का भूमिगत पानी सदेहास्पद होता है क्योकि उसमे अकार्बनिक व कार्बनिक अशुद्धिया व अनेक तरह के हानिकारक सूक्ष्मजीवी भी पाये जाते हैं। गहरे कुओ का पानी भारी होता है क्योकि उसम कल्शियम मैग्निशियम के बाई कार्बोनिटस, सल्फेटस, फ्लोराइड व कल्शियम, मैग्निशियम और सोडियम के नाइट्रेटस पाये जाते हैं।

पानी के वितरण के कई स्रोत होत हैं और हर प्रकार के स्रोत मे कई तरह की अशुद्धिया पाई जा सकती हैं। इसके लिये यह आवश्यक हो जाता है कि पानी की शुद्धि व आरोग्यता के लिये पूणतया परीक्षण किया जावे जिससे मनुष्यो और जानवरो का स्वास्थ्य सुरक्षित रखा जा सके तथा जानवरो से होने वाले उत्पादन मे भी वृद्धि हो सके। शुद्ध एव आरोग्यप्रद पानी जो कि डेयरी, कुक्कुटशाला और वध शाला इत्यादि म शुद्ध दूध अण्डे और मास के उत्पादन के लिये वितरित किया जाता है से जन स्वास्थ्य की भी रक्षा होता है।

पानी का नमूना एव उसका परीक्षण

पानी के नमूनो को एकत्रित करके उनका परीक्षण निम्न उद्देश्यो के लिये किया जाता है --

उद्देश्य

(1) शुद्धता की स्थिति को ब नाये रखना।

(2) पानी का उपलब्ध स्रोत मनुष्यो व जानवरो के काम आ सके, इसका पता लगाना।

(3) तुलनात्मक परीक्षणो के द्वारा पानी के सबसे उत्तम स्रोत का चयन करना।

(4) पानी की योग्यता का घरेलू उपयोग के लिये, चमडे व ऊन की धुलाई के लिये और बूचडखानो के लिय पता लगाना।

(5) नदी के पानी मे होने वाले प्रदूषण का पता लगाकर उसके उद्गमस्थल की खोज करना ।

(6) नदी व कुओ के पानी के गुणो मे वर्षा, बाढ व अकाल के समय होने वाले परिवतन का पता लगाना ।

(7) पानी का धातुओ पर होने वाले प्रभाव का पता लगाना । (उदाहरण – धातु की टकिया व नल जो कि पानी के वितरण मे काम आते हैं ।)

(8) पानी को शुद्ध करने एव उसे मृदु बनाने वाले रसायनो की क्षमता का पता लगाना ।

(9) गहरे कुओ मे विभिन्न गहराइयो पर पानी के गुणो म होते रहने वाले परिवतनो का जाचना ।

(10) हैजा, दस्त, डिफथीरिया, एन्थ्रेक्स, लगडी, खुरपका – मुखपका और रिण्डरपस्ट इत्यादि पानी स फलने वाली बीमारियो का महामारी के समय जीवाणुओ वाले पानी के स्रोतो का पता लगाना ।

(11) गठिया व वृक्क तथा अ य बीमारियो से पीडित मनुष्यो और जानवरो के लिये उपलब्ध पानी की योग्यता का पता लगाना ।

(12) किसी भी स्थान पर पाये जाने वाले पानी को उपयोग मे लेने से पहले उसका शुद्ध करने के लिये अच्छा व सस्ता तरीका निकालना ।

(13) नलो से या भूमि के नीचे बिछे गट्टर से निकले गदे पानी के रिसाव का पता लगाना ।

पानी के नमूने इकट्ठे करना

पानी का नमूना लेत समय बहुत सावधानिया रखनी चाहिये ताकि वह कि ही बाहरी कारणो से सदूषित नही हो । इसके साथ पूण जानकारी देनी चाहिये ताकि उसका सही परीक्षण हो सके । पानी का नमूना लेते समय निम्न सावधानिया रखनी चाहिये –

(अ) पानी के नमूने का प्रयोगशाला मे किस तरह का विश्लेषण करना है जस– भौतिक, रासायनिक, जविक व सूक्ष्मदर्शी परीक्षण ।

(ब) पानी के नमूने को अलग अलग समय मे तथा अनेक बार इकट्ठा किया जाना चाहिये जिससे प्रयोगशाला मे उसका विश्लेषण करके सही परिणाम प्राप्त किया जा सके ।

(स) पानी के नमूने को इकट्ठा करत समय उसक बहाव की गति मे होने वाले परिवतन को ध्यान म रखना चाहिय ।

(द) विश्लेषण से निकले परिणामों को पूणरूप से उपयोग मे लाना चाहिये।

बोतल का सकलन

पानी के नमूने बोरो सिलिकेट काँच, कठोर रबर अथवा पोलीथीन की बोतलों मे इक्टठे किये जाने चाहिये। जीवाणुओं के परीक्षण के लिये कार्निग के काँच की बनी रगहीन व अच्छे ढक्कन वाली बोतल (जिसमे हवा व धूल न जा सके) ही काम में लेनी चाहिये। जब पानी के नमूने को कार्बनिक पदार्थों के विश्लेषण के लिये इक्ट्ठा किया जाये तो उसे हरे या गहरे भूरे रग की बोतल में ही लेना चाहिये। पानी में शेष बची क्लोरीन की जाच के लिये गहरे रग की बोतल ही काम मे लेनी चाहिये। रेडियोधर्मी तत्वो की जाच के लिये पोलीथीन की बोतल काम म ली जानी चाहिये।

बोतल तैयार करना

बोतल एव उसके ढक्कन को अच्छे साबुन के पाउडर एव साफ पानी से धोना चाहिये। फिर बोतल को गधक के अम्ल से तथा बाद म शुद्ध पानी से बार बार धोना चाहिये। धुली हुई बोतल को अच्छी तरह सुखाकर उस पर ढक्कन को लगाकर रख देना चाहिये। पोलीथीन की बोतल को शुद्ध पानी मे या उबलते हुए शुद्ध पानी मे रखकर साफ करना चाहिये। काच की बोतल को जीवाणु रहित करने के लिये उसे ओटोक्लेव (Autoclave) मे 15 पौण्ड के दबाव पर बीस मिनट तक या 160° सी पर गम हवा के आवन (Hot air oven) मे नब्बे मिनट तक रखना चाहिये।

नमूने एकत्रित करने की सामान्य विधियां

पानी के नमूने के लिये 5 लीटर भराव क्षमता वाली ढक्कनदार काच की बोतल को काम मे लेना चाहिये। पानी को कीप या नलिका की सहायता से एकत्रित न करके सीधा जीवाणु रहित बोतल मे ही एकत्रित करना चाहिये। जो बोतल नमूने के पानी के लिये काम मे ली जा रही है, उसे उसी पानी से एक बार साफ करना चाहिये। यह सावधानी बरतनी चाहिये कि हाथ से लगकर पानी बोतल मे न चला जाय। बोतल को पैंदे से पकडना चाहिये और उसम ¾ ही पानी भरना चाहिये क्योकि पानी तापक्रम के कारण ऊपर उठकर बोतल को तोड सकता है।

नमूने के प्रकार

(अ) ग्रेब नमूना (Grab Sample) पानी का वह नमूना जो पोखर या झील के किसी भी स्थान से एकाएक लिया गया हो।

(ब) कम्पोजिट नमूना (Composit sample) पानी का वह नमूना जो विभिन्न जगहो से अलग अलग गहराई (लम्बवत् व समानान्तर) से लेकर एक साथ मिला दिया गया हो।

(स) इटीग्रेटेड नमूना (Integrated Sample) पानी का वह नमूना जिसे किसी निश्चित समय के अतर पर नदी या स्रोतो से इकट्ठा किया जाता है। फिर ऐसे नमूनो को एक साथ मिलाकर उसका एक भाग लेकर परीक्षण किया जाता है। ऐसा करने से बहते हुए पानी मे उत्पन्न होने वाली विभिन्नताओ का पता लगाया जा सकता है।

(द) प्रतिनिधि रूप का नमूना (Representative Sample) पानी का नमूना जो भिन्न भिन्न समय पर बार बार लिया जाता है। बार बार पानी के नमूने का लेना उसके उपयोग मे लेने के उद्देश्य व तद्देशीय जनसख्या पर निर्भर करता है।

पानी के नमूनो को विभिन्न स्रोतो से एकत्रित करने के तरीके

धरातल के स्रोत

तालाब एव झीलें पानी के नमूनो को किनारे से काफी दूर जहा पानी की ज्यादा गहराई हो वहा स इकट्ठा करना चाहिये। नमूने के पानी को ठीक ढग से एकत्रित करने के लिये पानी म उठे हुए धूल के कणो को ठीक से नीचे बठने देना चाहिये। पानी का नमूना लेने वाली बोतल का उसके पदे से पकडना चाहिये। ढक्कन लगी बोतल को पानी मे एक से दो फीट की गहराई तक उल्टी अवस्था म ले जाना चाहिये। बोतल का मुँह ऊपर उठाते हुए उसे तिरछी अवस्था मे करके उसका ढक्कन हटा लेना चाहिये जिससे बोतल के अन्दर की हवा बाहर निकल सके तथा पानी अन्दर चला जाये। बोतल को उसके तीन चौथाई भाग तक भरकर उस पर ढक्कन लगाकर बाहर निकाल लेना चाहिये। नाद (Water trough) से भी इसी विधि से पानी के नमूने इकट्ठे करने चाहिये।

नदियाँ एव झरने नदी व नाले से नमूने के रूप मे पानी उस जगह स इकट्ठा करना चाहिये जहा पानी सही धारा के रूप मे बह रहा हो। किनारे से पानी का नमूना कभी भी नही लेना चाहिये। मझधार ही पानी के नमूने को लेने की सही जगह होती है। कम्पोजिट व इटीग्रेटेड पानी के नमूने भी इसी तरह से लेने चाहिये।

कुए

छिछले कुए नमूने की बोतल को लोहे अथवा किसी धातु के ढाचे (Stand) पर पेचो की सहायता से कस देना चाहिये (चित्र 11)। बोतल के ढक्कन और धातु के ढाचे को दो अलग अलग रस्सियो से बाध देना चाहिये। धातु के ढाचे को व बोतल को कुए की गहराई मे उतारते समय इस बात का पूरा ख्याल रखना चाहिये कि बोतल कुए की दीवार से न टकराने पाये। जब बोतल करीब आठ फीट तक पानी के अन्दर तक चली जाये तब ढक्कन वाली रस्सी को एक हल्का सा झटका देना चाहिये।

इस प्रकार ढक्कन बोतल से अलग हो जायेगा और हवा के बुलबुले बाहर निकलने लगेंगे व पानी बोतल के अन्दर भरने लगेगा। जब पानी की बोतल से हवा के बुलबुले निकलने बन्द हो जाये तब इस बात का सकेत होता है कि बोतल पानी से पूरी भर गई है। बोतल को कुए से बाहर निकाल कर उसके ऊपर ढक्कन लगा देना चाहिये।
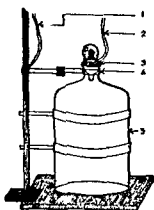
चित्र 11 छिछले कुए मे पानी का नमूना लेने वाली बोतल। (1) धातु के ढाचे पर बधी रस्सी, (2) रस्सी, (3) बोतल के ढक्कन पर बधी रस्सी, (4) शिकजा और (5) बोतल।

गहरे कुए काच की एक बोतल लेते हैं। उस पर दो छिद्र वाला रबड का ढक्कन लगा देते है (चित्र 12)। ढक्कन के एक छिद्र मे काच की एक लम्बी नली
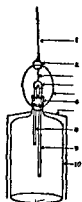
चित्र 12 गहरे कुए से 300' तक गहराई से पानी का नमूना लेने वाली बोतल। (1)रस्सी, (2) धातु का छल्ला, (3) तांत, (4) रबड की नली, (5) रबड के पटटे, (6) रबड का ढक्कन, (7) सीसे का आवरण, (8) काच की कम लम्बाई वाली नली, (9) काच की लम्बी नली और (10) पानी का नमूना लेने की बोतल।

तथा दूसरे छिद्र म एक कम लम्बाई वाली नली लगा देते हैं। दोनो ही काच की नलियो को उनके ऊपरी भाग से एक रबड की नली से जोड देते है। इस प्रकार पूरा उपकरण वायु अवरोधक हो जाता है तथा कुए के पानी मे ज्यो ही बोतल पर से रबड की नली हटाते हैं, हवा बोतल म से निकलती जाती है और उसमे पानी भरता जाता है। रबड की नली को तांत (Catgut) के एक सिरे से बाधे हुए रखते हैं तथा उसके दूसरे भाग को धातु के छल्ले से बाध देते हैं। छल्ले का दूसरा सिरा एक मजबूत रस्सी से बाध देते हैं और उसके द्वारा बोतल को कुए के पानी मे उतारा जाता है। रबड के पटटे को धातु के छल्ले के अ दर से निकालते हैं और उसके दोनो भाग बोतल की

गदन पर ठीक से बाध देते हैं। बोतल की गदन को छोड़कर पूरी बोतल पर सीसे (Lead) का आवरण चढा देते हैं। यह आवरण बोतल को भार प्रदान करता है तथा कुए की दीवार से टकराकर टूटने से भी बचाता है। इस पूरे उपकरण को कुए मे इच्छित गहराई तक डुबा देते है और रस्सी का एक तेज झटके द्वारा जोर से हिलाते हैं। इस प्रकार की क्रिया से रबड की नली काच की नली पर से हट जाती है। बोतल म काच की एक नली से पानी अन्दर आता रहता है तथा दूसरी नली से वायु बाहर निकलती रहती है। ज्योंही पानी की सतह पर बुलबुले आने ब द हो जायें, बोतल को कुए से बाहर निकालकर उसकी काच की नलियो पर रबड की नली फिर से लगा देते हैं।

जिन कुओ पर पम्प लगे हो, ऐसे कुए के पानी का नमूना लेते समय पम्प चलाकर नल मे ठहरा हुआ पानी कुछ देर तक निकलने देना चाहिये, ताकि पानी का सही नमूना लिया जा सके। पानी का नमूना लेने से पहले नल का मुह अच्छी तरह से साफ कर लेना चाहिये।

नल

पानी का नमूना लेते समय नल का मुह अच्छी तरह से साफ होना आवश्यक है। रात या दिन भर नल में ठहरे हुए पानी का नल के धातु पर होने वाले प्रभाव के परीक्षण के लिये जब पानी का नमूना इकटठा करना हो, तब पानी को नल खोलते ही इकटठा कर लेना चाहिय। जब पानी के नमूने को सूक्ष्मजीवी परीक्षण के लिये लिया जाता है तब सबसे पहल नल के मुह को ब्लो लेम्प से गम करना चाहिये, जिससे उस पर लगे जीवाणु मर जायें। पानी का नमूना लेते समय ब्लो लेम्प को नल के मुह के पास रखा जाना चाहिये जिससे कि वायु के जीवाणु बोतल म न आने पावे। सूक्ष्मजीवी परीक्षण के लिये नल से कुछ समय तक पानी निकालने के बाद 200 एम एल पानी नमूने के रूप म एकत्रित करना चाहिये। पानी का नमूना लेने के बाद बोतल को शीघ्र ही प्रयोगशाला मे ठडी (6 से 8° सी) अवस्था म पहुचा देना चाहिये ताकि उसका परीक्षण छह घटे के भीतर हो जाये। किसी भी अवस्था मे पानी की बोतल का बारह घटे क भीतर प्रयोगशाला मे पहुचा देनी चाहिये जिससे पानी का विश्लेपण सही परिणाम दे सके।

प्रयोगशाला मे परीक्षण होने तक पानी के नमूना का सुरक्षित रखने के तरीके और उनके अधिकतम भण्डारण की अवधि —

विश्लेषण	सुरक्षित	अधिकतम भण्डारण का समय
1	2	3
स्वाद	तुर त विश्लेषण	—
आविलता (टर्बिडिटी)	उसी दिन विश्लेपण करें या अधेरे म रखें।	दो दिन

1	2	3
चालकता	तुरन्त विश्लेपण	—
नाइट्रेट	तुरन्त विश्लेपण या पी एच 2 तक H_2SO_4 मिलावें व ठण्डा रखे	दो दिन
क्षारता	प्रशीतन	चौदह दिन
फ्लोओराइड	—	अटठाईस दिन
आयरन	तुरन्त विश्लेपण या एक एम एल सान्द्र हाइड्रोक्लोरिक अम्ल प्रति 100 एम एल नमूना	चौदह दिन
क्लोरीन	तुरन्त विश्लेपण	—
जीवाणु	छह से आठ डिग्री तापक्रम पर ठण्डा रखना	छह से बारह घंटे

पानी के नमूने की बोतल पर नीचे लिखे अनुसार सूचक पत्र तैयार करके लगाना चाहिए।

(1) नमूना किस परीक्षण के लिय सौंपा गया—	भौतिक/रासायनिक/सूक्ष्मजीवी/ सूक्ष्मदर्शी।
(2) नमूना किस के द्वारा सौंपा गया—	इकटठा करने वाले का नाम व पता
(3) नमून लेने का स्रोत	वर्षा/धरातल/कुआ/नल का पानी
(4) नमूना लेन की जगह—	पता
(5) नमूना किसके सामने लिया गया	व्यक्ति का नाम, पता व हस्ताक्षर
(6) नमूना लेने वाले अधिकारी के हस्ताक्षर—	

प्रयोगशाला मे नमूना भेजने की विधि

पानी के नमूने की बोतल को सावधानीपूवक ब द करके जल्दी से जल्दी प्रयोगशाला मे भेज देना चाहिये। जब पानी क नमूने को सूक्ष्मजीवी परीक्षण के लिये भेजा जाता है तो उसे छह से आठ डिग्री सलिसयस तापक्रम पर रखा जाता है जिससे कि जीवाणुओ की सख्या मे परिवहन के समय वृद्धि या कमी न हो। इसके लिये बोतल को बफ के साथ थमस फ्लास्क में रखा जाता है। उन पानी के नमूनो के लिए, जिनम शेष बची क्लोरीन का या ग दे नाले के पानी मे शेष बची क्लोरीन का परीक्षण करना हो तो, विशेष सावधानी रखनी चाहिये। इसके लिए सोडियम थायोसल्फेट स साफ की गयी बोतल म नमूना इकटठा करना चाहिये।

पानी के नमूनो का भौतिक परीक्षण

परिचय

भौतिक परीक्षण के द्वारा पानी के गुणो का तुरन्त उसी जगह पर पता कर सकते हैं। सबसे पहले पानी के गध की पहचान करनी जरूरी होती है। इस परीक्षण से पानी के रासायनिक व जविक गुणो का प्राथमिक आभास हो जाता है, परन्तु इससे किसी अन्तिम निष्कर्ष पर नही पहुचना चाहिए। इसके लिये दूसरे प्रयोग भी करने चाहिए। रगीन पानी कार्बनिक पदार्थ तथा जीवाणुओ का होना दरसाता है। अत ऐसी परिस्थितियो म पानी का जविकी परीक्षण करना चाहिये। अकार्बनिक पदार्थों की उपस्थिति के कारण पानी गदा दिखाई देता है और ऐसे पानी का रासायनिक परीक्षण करना जरूरी होता है। दुर्गधयुक्त पानी का मनुष्य व जानवर दोनो ही पसद नही करते। गदला पानी को मनुष्य कभी स्वीकार नही करता परन्तु ऐसे पानी को जानवर पी लेते हैं। भौतिक परीक्षण के लिय पानी के उपलब्ध नमूने मे निम्न गुणो की जाच करनी चाहिये—

(1) रग (2) गध (3) स्वाद (4) कार्बनिक पदार्थ (5) तापक्रम (6) मान (पी एच) (7) गदलापन।

(1) रग (Colour)

प्रदूषण के कारण जल रगीन हो सकता है। पानी के रग के परीक्षण के लिये नपना जार (Nessler cylinder) को उपयोग मे लाते हैं। यह प्रयोग फली हुई (Diffused) सूर्य की रोशनी मे अथवा सफेद कृत्रिम रोशनी मे करना चाहिये। रग का एक फुट की गहराई से पता लगाना चाहिये और पानी के नमूने की शुद्ध आसुत जल से तुलना करनी चाहिये। पानी म गदगी को एक समान फैलाने के लिये कम से कम उसे पच्चीस बार हिलाना चाहिये। सौ सी सी पानी को लेकर आसुत पानी से उसका तुलनात्मक अध्ययन करते हैं। पानी का परीक्षण करते समय उसका ऊपर से लम्बवत् देखना चाहिये।

आसुत पानी का रग एक फुट की गहराई पर पीले नीले स गुलाबी रग का दिखाई देता है। पानी का हरा रग उसमे एक कोशीय शवाल (Algae) का होना दरसाता है। हरा पीला रग पानी मे प्राकृतिक वनस्पति के कारण होता है, जबकि पानी मे

मुह मे लिया जाता है तथा दूसरी बार जब मुह के द्वारा बाहर निकाला जाता है। समुद्र व गहरे कुओ का पानी नमकीन होता है, लोहा व मैग्नीशिया पानी को कडवा बनाते हैं। स्याही जैसा कडवा स्वाद आयनिक (Ionic) पानी का, और बेस्वाद या फीका स्वाद मृदु पानी का होता है। अच्छा व बहुत रुचिकर (Highly palatable) स्वाद वाला पानी पूर्ण रूप से पीने के योग्य होता है जो शरीर को आवश्यक खनिज उपलब्ध करवाने के साथ साथ सन्तुष्टि भी प्रदान करता है, जबकि बगर स्वाद (Unpalatable) वाला पानी खनिजो की अनुपस्थिति के कारण पीने के लिये अस्वीकार्य होता है। पीटयुक्त या प्रदूषित पानी निश्चित रूप से पीने के लिये अनुपयोगी माना गया है।

(4) कार्बनिक पदार्थ (Organic matter):

कार्बनिक पदार्थों का पानी मे पाया जाना यह चेतावनी देता है कि पानी गदे पानी से, मृत पशुओ से या फिर वनस्पति की उपस्थिति के कारण दूषित हो गया है। इससे हानिकारक बीमारी पैदा करने वाले सूक्ष्म जीवाणुओं की सख्या मे वृद्धि होती है जो कि पानी को बहुत ही हानिकारक बना देते हैं। इसी के साथ जब वातावरण का तापक्रम शारीरिक तापक्रम के बराबर हो जाता है तो इन जीवाणुओ की सख्या और भी बढ जाती है। मृतजीवी किस्म के जीवाणुओ की सख्या मे वृद्धि 20 से 22° सी तापक्रम पर होती है और इससे पानी मे कार्बनिक पदार्थों की उपस्थिति का सकेत मिलता है। कार्बनिक पदार्थों का परीक्षण करने के लिये 100 सी सी क्षमता के कोनीकल फ्लास्क मे 50 सी सी पानी का नमूना भरते हैं। इसी प्रकार एक दूसरे खाली फ्लास्क मे इतनी ही मात्रा मे आसुत पानी भी लेते हैं। दोनो पानी के फ्लास्को को चार से पाच मिनट की अवधि तक हिलाते है। फिर उसमे उठने वाले बुलबुलो या झाग की आसुत पानी से तुलना करते हैं। पानी की सतह पर बुलबुलो का देर तक रहना उसम कार्बनिक पदार्थों की उपस्थिति को दरसाता है। आसुत पानी की सतह पर छोटे छोटे बुलबुले बनते हैं तथा वे कुछ ही क्षणो मे समाप्त हो जाते हैं।

(5) तापक्रम (Temperature)

जब पानी का नमूना एकत्रित किया जाता है तब उसी समय थर्मामीटर से पानी का तापक्रम भी दर्ज करना चाहिये। इसको अलग अलग गहराई पर लेना चाहिये। सही तापक्रम लेने के लिये नमूने की बोतल का अच्छे थर्मस फ्लास्क मे रखना चाहिये। ज्योही पानी के नमूने को बाहर निकालते हैं, उसका तापक्रम ले लेना चाहिये। इससे उसकी गहराई व स्रोतो के प्रकार का पता चलता है। गहरे पानी के स्रोतों का तापक्रम छिछले पानी के स्रोतो से ज्यादा होता है। बड़े जलाशयो मे गहराई के अनुसार पानी का तापक्रम भिन्न होता है। पानी मे गदलापन, कार्बनिक पदार्थ एव तापक्रम (?2–37° सी) का ज्यादा समय तक बना रहना घातक प्रदूषण की उपस्थिति का द्योतक होता है।

(6) मान (Reaction)

लाल व नीले लिटमस पेपर की सहायता से पानी के पी एच का पता लग जाता है। सही निर्धारण के लिये केलोरीमीटर विधि या पी एच मीटर काम म लिया जाता है। दो परखनलियो म पानी के नमूने को लेकर एक मे लाल व दूसरी म नीला लिट्मस पेपर डालते है, अगर लाल लिट्मस पेपर नीला हो जाय तो प्रतिक्रिया क्षारीय होती है और जब नीला लिटमस पपर लाल हो जाय तो अम्लीय प्रतिक्रिया दरसाता है। पानी का पी एच 7 0 से 8 5 तक होना चाहिये। पानी के पी एच का पता लगाना बहुत जरूरी होता है क्योकि ज्यादा अम्लीय या ज्यादा क्षारीय पानी नलो की धातु से क्रिया करके उनकी कुछ मात्रा अपने मे घोल लेता है। यह पानी को अजीब तरह का स्वाद देता है और पानी को कठोर बना देता है। यह परीक्षण जन स्वास्थ्य एव पशुओ के स्वास्थ्य की सुरक्षा तथा कृपि कार्यो के लिए भी आवश्यक है।

(7) गदलापन (Turbidity)

एक 250 सी सी क्षमता के गाल पैदे वाल काच के फ्लास्क म 100 सी सी नमूने का पानी लेना चाहिये। एक सफेद कागज फ्लास्क के पीछे रखकर सामने स देखते हुए उसका निरीक्षण करना चाहिये। तुलना के लिये उतना ही आसुत पानी लेकर उपरोक्त विधि द्वारा पानी का निरीक्षण करना चाहिये। छोटे से छोटे कणो का भी सावधानीपूर्वक निरीक्षण करना चाहिये।

पानी मे गदलापन खनिज अथवा कार्बनिक पदार्थों की उपस्थिति के कारण हो सकता है। यह प्रदूषण का सूचक होता है। इस तरह का प नी पीने के काम म नही लेना चाहिये। नमूने के पानी को कुछ दर तक रखना चाहिये या उसे सेंट्रीफ्यूज करके पैंदे पर आई गदगी को सूक्ष्मदर्शी की सहायता से जाचना चाहिये। खनिज पदार्थों की उपस्थिति कोई विशेष महत्व नही रखती। ऐस पानी को छानकर भी साफ किया जा सकता है जबकि कार्बनिक पदार्थों की उपस्थिति गम्भीर प्रकार के प्रदूषण की द्योतक हाती है। ऐसे कार्बनिक पदाथ पानी मे वानस्पतिक तन्तु और मास के ततु क रूप मे दिखाई देते है और उसम पाये जाने वाले जीवाणु छानने की विधि से भी पानी से अलग नही किये जा सकते और ये प्रदूषण के सूचक होते है। पानी का नमूना हल्के रग का, दूधिया रग का, गदला अथवा बहुत ज्यादा गदला भी हो सकता है। उपभोक्ता के लिए पानी म किसी भी चीज की उपस्थिति को आख द्वारा देखना ज्यादा महत्वपूर्ण है। जेकसन केण्डल टरबीडीटी मीटर (Jackson candle turbidity meter) द्वारा पानी म पाये जाने वाले गुदलेपन का पता लगाया जाता है।

पानी के नमूनो का रासायनिक परीक्षण

औद्योगिक कारखाने देश मे धन की बढोतरी तो करते हैं किंतु ये वातावरण को प्रदूषित भी करते हैं, जिसके कारण पानी का सदूषण बढता ही जा रहा है जो मनुष्यो, पशुओं और पौधो के लिये अत्यन्त ही घातक है। छिछले कुओ का और नालो का पानी ज्यादातर इनसे सदूषित होता है जबकि गहरे कुओ के पानी मे धरातल के पानी की अपेक्षा रासायनिक तत्वों की मात्रा ज्यादा होने का अदेशा बना ही रहता है। जिस पानी म रासायनिक तत्व मैक्सिमम परमिशिबल लिमिट (M P L) तक हो, वह पानी गर्मी के मौसम मे पीने के लिये हानिकारक हो सकता है जस कि जब वातावरण का तापमान बढ जाता है और पानी का वाष्पीकरण होता है और सूखे घास मे पानी की मात्रा कम होना जिसस गर्मियो मे सामान्य से अधिक पानी पीना। दूध देने वाले कम उम्र के और कमजोर पशुओ को भी पानी में पाये जाने वाले रसायन हानि पहुचाते हैं। मरुक्षेत्र मे क्षारीय कुआ का पानी जब जानवर पीते हैं तो उनकी सामान्य शारीरिक क्रिया मे बाधा उत्पन्न होती है और यहा तक कि जानवर मर भी सकते हैं। जानवर ऐसी अवस्था मे पानी पीना कम कर देते हैं और फलस्वरूप वे चारा भी कम खाते है। पानी मे मैग्नीजइअम् की मात्रा ज्यादा होने पर उनमे अक्सर दस्त की शिकायत रहती है। जिस पानी मे रसायनो की मात्रा मैक्सिमम परमिशिबल लिमिट के पास है वहा यदि कुछ बातो का ध्यान रखा जाये तो पशुओ को काफी हद तक नुकसान से बचाया जा सकता है, जैसे पानी की कुण्डी को समय समय पर साफ करके पानी को बदलते रहना, इससे वाष्पीकरण के कारण पानी मे हानिकारक रसायन की बढी हुई मात्रा का असर नही होगा और वर्षा का या दूसरी जगह से अच्छा पानी लाकर वहा के उपलब्ध पानी मे मिलाकर पिलाना।

पानी के नमूने का रासायनिक परीक्षण एक प्रारम्भिक परीक्षण है और इसके द्वारा पानी मे पाये जाने वाले गुणो को परखने मे सहायता मिलती है। इस परीक्षण द्वारा यह पता लग जाता है कि आगे इस पानी के नमूने का कौनसा परीक्षण विस्तार से किया जाना चाहिये। अगर पानी मे विषले पदार्थ उपस्थित हो तो ऐसे पानी का उपयोग नही करना चाहिये। विशेषतया यह परीक्षण कार्बनिक प्रदूषण के बारे मे सूचना देता है। यह परीक्षण पानी मे पाये जाने वाले धात्विक व अधात्विक

दोनो प्रकार की अशुद्धियो की उपस्थिति जानने के लिये किया जा सकता है। मनुष्यो और जानवरो के पीने के पानी मे इनकी एम पी एल का विवरण सूची सख्या 1 से 4 तक मे दिया गया है। कुछ अधात्विक अशुद्धिया निम्नलिखित प्रकार की हैं–

अधात्विक अशुद्धियां (गुण सम्बन्धी)

अमोनिया (Ammonia)

एक परखनली मे 10 एम एल नमूने के पानी को लेकर उसमे कुछ बूंदें नेस्लरस रिएजेन्ट की डालते हैं। गहरा पीला या भूरा या काला रग अथवा अवक्षेप का दिखाई देना अमोनिया की उपस्थिति बताता है।

अनुमान अमोनिया पानी मे स्वतन्त्र रूप से अथवा अमानिया के लवण के रूप मे पाया जाता है। यह नाइट्रोजनयुक्त कार्बनिक पदार्थों के प्रथम आक्सीकरण से बनती है। अमोनिया की सूक्ष्म मात्रा की उपस्थिति भी पानी को सदेहास्पद बना देती है और यह इस बात का सकेत देती है कि पानी का हाल ही मे गदे पानी अथवा पशुओं या मनुष्यो के मल मूत्र द्वारा सदूषण हुआ है। पानी मे अमोनिया का न पाया जाना शुद्ध पानी का द्योतक नहीं है। नाइट्रेटयुक्त पानी जब लोहे के नलो से गुजरता है तो नाइट्रेट, अमोनिया म अवकृत हो जाते हैं।

मुक्त अमोनिया की मात्रा का ज्यादा पाया जाना और एल्ब्यूमिनाइड अमोनिया की कम मात्रा का पाया जाना यह दर ।ता है कि पानी मे गदगी अथवा, पशु पदार्थों का विघटन हो रहा है तथा नत्रजन की उपस्थिति वानस्पतिक पदार्थों का होना दरसाता है।

मुक्त अमोनिया का एम पी एल 0 05 पी पी एम तथा एल्ब्यूमिनाइड अमोनिया का 0 1 पी पी एम है।

क्लोराइड (Chloride)

एक परखनली मे 10 एम एल नमूने के पानी को लेकर उसम कुछ बूंदें हल्के सिल्वर नाइट्रेट घोल की डालने पर अगर सिल्वर क्लोराइडस का सफेद अवक्षेप आता है तो इससे क्लोराइड की उपस्थिति का पता चलता है।

अनुमान सभी तरह के पानी मे मुख्यत क्लोराइड की उपस्थिति सोडियम क्लोराइड के रूप मे होती है। इसके साथ साथ मैग्नीशियम पोटेशियम व कलशियम के क्लोराइडस भी मिलते हैं। स्वास्थ्य के लिहाज से क्लोराइड की कम मात्रा का होना विशेष महत्व नही रखता, लेकिन जब इसकी मात्रा बहुत ज्यादा हो तो पानी पीने योग्य नही रहता है। जिस पानी मे क्लोराइड के साथ कार्बनिक पदार्थ भी अगर ज्यादा मात्रा मे हो तो इसका अर्थ यह लगाया जाता है कि पानी हाल ही में मल या मूत्र द्वारा दूषित हुआ है। गदे व दूषित पानी मे नाइट्रेट व क्लोराइड की मात्रा साथ साथ बढ़ती है।

सल्फेट (Sulphate)

एक परखनली मे 10 एम एल नमूने के पानी को लेकर उसमे कुछ बूंदें हाइड्रोक्लोरिक अम्ल की डालते हैं। इसमे दस प्रतिशत बेरियम क्लोराइड की कुछ बूंदें भी डालते हैं। अगर सफेद अवक्षेप प्राप्त होता है जो कि हल्के अम्ल मे अघुलनशील हो तो यह सल्फेट की उपस्थिति दरसाता है और जब सल्फेट कम मात्रा मे हो तो उसे गम करने पर सफेद अवक्षेप आता है।

अनुमान अगर सल्फेटयुक्त पानी नित्य पीने के काम मे लिया जाता है तो उससे मनुष्यो मे दस्त व जानवरों मे स्काउर (Scour) की बीमारी पदा हो जाती है। मैग्नीशियम सल्फेट की उपस्थिति के कारण पानी कठोर हो जाता है और ऐसा पानी पीने योग्य ही नही अपितु औद्योगिक कारखानो के लिये भी ठीक नहीं रहता है।

नाइट्राइटस (Nitrites)

एक परखनली मे 10 एम एल नमूने के पानी को लेकर उसमें कुछ बूंदें सल्फानेलिक अम्ल (Sulphanalic acid) की डालकर उसे अच्छी तरह हिलाते हैं तथा फिर उसमे कुछ बूंदें अल्फानेपथलमीन घोल (Alphanaphthalamine solution) की डालकर परखनली को हिलाकर कुछ देर के लिये रख देते हैं। अगर उसमे गुलाबी रग आ जाये तो वह नाइट्राइटस की उपस्थिति बताता है।

अनुमान मिट्टी व पानी मे नाइट्रेट्स अवक्रत होकर नाइट्राइटस बनाते है। यह क्रिया लोहा, शीशा और जस्ता जसी धातुओ के अवकरण से होती है। यह जानवरो के कार्बनिक पदार्थों एव सड़े हुए मल मूत्र जसी गदगी से पानी का दूषित होना दरसाता है। ऐसा पानी रोगयुक्त होता है इसलिए पीने के लिए बहुत हानिकारक होता है।

नाइट्रेट्स (Nitrates) (जब नाइट्राइट्स अनुपस्थित हो)

नाइट्रेटस के परीक्षण के लिये नाइट्राइट का परीक्षण उपर लिखी विधि को दोहराकर करते हैं तथा उसमे एक चुटकी भर जस्ते का पाउडर डालकर उसे पाच मिनट बाद देखते हैं। अगर परखनली मे गुलाबी रग आ जाये तो वह नाइट्रेटस की उपस्थिति बताता है।

अनुमान पानी मे पाये जाने वाले नाइट्रेटस प्राय पशुओ के कार्बनिक पदार्थों से प्राप्त होते है, जसे नालियो मे बहने वाली गदगी, पशुओ का मल तथा गडे हुए शव आदि। पानी मे अधिक मात्रा मे नाइट्रेटस व क्लोराइड्स का होना मल मूत्र की गदगी द्वारा पानी का सदूषण होना बताते हैं। वाहित मल द्वारा पानी का सदूषण होने पर नाइट्रेट, नाइट्राइट व अमोनिया के साथ उपस्थित होते है तथा वह यह भी दरसाता है कि पानी मे सफाई की क्रिया भी साथ साथ चल रही है। ऐस पानी का जिसमे नाइट्रेट की मात्रा अधिक हो, जीवाणविक परीक्षण करना चाहिये।

फ्लोरीन (Fluorine)

एक परखनली मे 10 एम एल नमूने के पानी को लेकर उसमे कुछ बूं फेरिक क्लोराइड के घोल की डालते है। स्वच्छ, सफेद अवक्षेप का दिखाई देन फ्लोरीन की उपस्थिति बताता है। इस क्रिया को धूप की रोशनी मे देखना ज्याद ठीक रहता है।

अनुमान फ्लोरीन की अशुद्धि, हाइड्रोजन फ्लोराइड या सिलिकान फ्लोराइड के रूप मे पानी म प्रवेश करती है। अक्सर गहरे कुओ के पानी मे इसकी मात्र ज्यादा पायी जाती है और इस तरह का पानी पीने से अक्सर मनुष्यो व जानवरे के शरीर मे अनेक प्रकार के विकार पैदा हो जाते हैं। सुपरफॉस्फेट, चमकीली इटें, काच इत्यादि का सामान बनाने वाले कारखानो से बाहर निकलने वाले पानी मे फ्लोरीन की मात्रा जरूरत से ज्यादा पाई जाती है।

पीने के पानी मे फ्लोरीन की मात्रा कम होन से दन्त केरीज (Dental caries) की बीमारी उत्पन्न हो जाती है। ऐसी स्थिति म फ्लोरीडेसन विधि द्वारा पानी म जरूरत के अनुसार फ्लोरीन मिलाया जाता है। फ्लोरीन एक उच्च क्षमता वाला विषाक्त तत्त्व है और अधिक फ्लोरीन की मात्रा वाले पानी को लगातार पीने से कर्बुरित दात (Mottled teeth), कब्ज और अनेक तरह के चम रोग उत्पन्न हो जात हैं। इसस चलने फिरने म कठिनाई कमजोरी तथा दूध की मात्रा म कमी और खासकर हड्डियो (लम्बी व जबडा की) म बाह्य विकृत वृद्धि आदि प्रमुख लक्षण दिखाई देते हैं।

साइनाइड, प्रूसीन ब्लू रिएक्शन (Cyanide, Prussian blue reaction)

एक परखनली मे 10 एम एल नमूने के पानी को लेकर उसम कुछ मात्रा फेरस सल्फेट घोल की डालें। मिश्रण को कुछ समय तक गम करके उसमे थोडा सा हाइड्रोक्लोरिक अम्ल तब तक डालें जब तक कि स्वच्छ घोल प्राप्त न हो जाय। अगर नीला रग प्राप्त होता है तो उससे साइनाइड की उपस्थिति का पता लगता है।

अनुमान फोटोग्राफी का सामान तथा हवाई जहाज बनाने वाली फक्ट्रियो से निकली गदगी मे साइनाइड पाया जाता है। पीने के पानी मे साइनाइड की मात्रा अश म भी नही होनी चाहिये। इसकी विषाक्तता के कारण पशुओ मे हल्के दस्त आना, आखो स आसू बहना, मासपेशियो का ऐंठना, सुस्त होना, चलते समय लडखडाना, सास लेने मे कष्ट होना, मुह खोलकर सास लेना और मुह स झाग गिरना आदि लक्षण प्राय देखने को मिलते हैं।

ठोस पदाथ (Total Solıds)

पानी मे घुले हुए ठोस पदार्थों की मात्रा का पता लगाने के लिये 250 एम एल पानी लें, अगर पानी बहुत कठोर हो तो 50 एम एल पानी की मात्रा हो काफी होती है। पानी का नमूना कम होने से उसके वाष्पीकरण मे कम समय लगता है तथा उसमे बचा हुआ पदाथ शीघ्र ही सूख जाता है। अगर पानी म कुछ तरते और न घुलने वाले ठोस पदाथ हो तो उस पानी को छान लेते हैं। जाच के लिये छना हुआ पानी काम मे लेते हैं ताकि पानी मे घुलनशील ठोस पदार्थों का अलग से पता लगाया जा सके।

एक खाली क्रूसिबल (Crusebal) को तोल (a) कर उसमे 50 एम एल नमून का पानी लेते है। क्रूसिवल को वाटर बाथ के मुह पर रख देते हैं और 50 एम एल नमूने का पाना पूरा उडने देते है। पानी उडन के बाद क्रूसिवल का गम हवा के आवन मे 180° सी पर एक घट के लिये रहने देते हैं। उसमे स जब पानी पूण रूप से उड जाये तब उसे बाहर निकाल कर ठडा करते हैं। क्रूसिवल का भार दुवारा (b) ज्ञात करते है। जब 50 एम एल नमूने के पानी का वाष्पीकरण किया जाता है तो ठोस पदार्थों का भार निम्न तरीके से निकाला जाता है–

$$\text{पानी मे घुले ठोस पदार्थों का भार (पी पी एम)} = \frac{(a-b) \times 1,000}{50}$$

अनुमान टोस पदार्थों की मात्रा पानी के स्रोत पर निभर करती है। जसे वर्षा के पानी मे धरातल के पानी तथा गहरे कुओ के पानी के अनुपात म बहुत कम मात्रा मे ठोस पदाथ होते ह। छिछले कुओ के पानी मे ठोस पदाथ बहुत ज्यादा मात्रा मे पाये जाते है। जिस पानी म मृदुपन ज्यादा हो वह स्वास्थ्य के लिए ज्यादा अच्छा नही होता है। इस तरह का पानी घरेलू व कारखानो के उपयोग के लिये बेहतर होता है। अत्य त कठोर पानी पीने के लिये, घरेलू काम के लिये व कारखाना के लिये ठीक नही रहता। बहुत कठार पानी पीने से वृक्क पथरी (Renal calculı), गलगण्ड (Goıtre) दुष्पचन तथा पेट मे विकार पैदा होते देखे गये हैं।

पानी की कठोरता (Hardness)

एक 50 एम एल के बीकर मे 10 एम एल नमूने का पानी लेकर उसमे दो बूदें अमोनिया बफर (Ammonıa buffer) व दो बूदें यूरोक्रोम ब्लक 'टी' (Erıochrome Black 'T') मिलाते हैं। अब पानी के नमूने को ई डी टी ए (E D T A) घोल के साथ टाइट्रेट (Tıtrate) करवाते है। जब उसका रग हल्का स्याही जसा नीला हो जाये तब ई डी टी ए की बूदें नमूने के पानी मे डालनी ब द कर देते हैं।

पानी की कठोरता (पी पी एम) = कुल काम मे आई ई डी टी ए की मात्रा × 100

अनुमान कठोर पानी वह पानी होता है, जिसे साबुन के साथ काम में लिया जाय तो आसानी से झाग नहीं बनते। बाइकार्बोनेट लवण प्राकृतिक पानी में मुख्यत सामान्य रूप मे पाये जाते हैं तथा उनकी उत्पत्ति पानी मे घुलने वाली कार्बन डाइआक्साइड की कैल्शियम और मैग्नीशियम कार्बोनेटो पर रासायनिक क्रिया के कारण होती है। सल्फेटस व कैल्शियम और मैग्नीशियम क्लोराइड के लवण भी पानी को कठोर बनाते हैं। पानी मे कठोरता होने से और उसे पीने पर कई तरह की बीमारिया जसे गलगण्ड, वृक्क पथरी व पेट की बीमारियां इत्यादि पदा हो जाती हैं जब पानी को गम किया जाता है तब उसमे से कार्बन डाइआक्साइड निकल जाती है और कल्शियम व मैग्नीशियम के कार्बोनेट्स अवक्षेपित होकर उसके बर्तनों व बायलरो की दीवारो पर परत (Fur) के रूप मे जम जाते हैं। बायलर स्केल, सल्फेट के जमाव के कारण होता है तथा जब पानी को निश्चित दाब पर गम करते हैं तो ये पानी के घोल के बाहर फेंक दिये जाते हैं। कठोर पानी भेड पर रहने वाले बाह्य परजीवियो के नियन्त्रण के लिये रासायनिक स्नान मिश्रण (Sheep-dips) बनाने के काम मे भी नहीं आता है।

क्लोराइडस की मात्रा का पता लगाना (Quantitative estimation for chlorides)

एक बीकर मे 10 एम एल पानी का नमूना लेकर उसमे पोटेशियम क्रोमेट (Potassium chromate) की दो बूदें डालते हैं। इसे सिल्वर नाइट्रेट के घोल के साथ लाल रग आने तक टाइट्रेट करवाते हैं।

$$\frac{\text{पानी मे क्लोराइडस की}}{\text{मात्रा (पी पी एम)}} = \text{कुल काम मे आई सिल्वर नाइट्रेट की मात्रा} \times 100$$

अनुमान पानी मे क्लोराइड साधारणतया सोडियम क्लोराइड के रूप मे पाया जाता है। शुद्ध पानी म लवण की मात्रा सीमित रहती है तथा गदे पानी मे भी उसकी मात्रा कम रहती है जबकि मूत्र म यह अधिक मात्रा में पाया जाता है। धरातल के पानी मे क्लोराइड 2 पी पी एम से अधिक नही पाया जाता, जबकि गहरे कुओ के पानी म क्लोराइडस की मात्रा अधिक होती है। पानी मे क्लोराइड के साथ सोडियम आयन जब बढ जाते हैं तो यह सोडियम क्लोराइडयुक्त पानी सूअरो के लिये हानिकारक पाया गया है। सूअरो मे आसपास की वस्तुओ का ज्ञान न होना, अधापन, उदासी, अपच, खुजली, बेहोशी व चौबीस घटे मे सूअर की मृत्यु तक के लक्षण देखे गये हैं। कभी कभी इसमे पशु खाना पीना छोड देते हैं, मुह से लार गिरती है वे पूण रूप से थके स लगते हैं और उनकी मृत्यु तक हो जाती है। इस अवस्था म पशु को नमकयुक्त पानी नही पीने देना चाहिये। ऐसे पशुओं के रक्त म कल्शियम की मात्रा म कमी हो जाती है अत उनको कल्शियम देना ठीक रहता है।

नाइट्राइट की मात्रा का परीक्षण (Quantitative estimation for nitrites)

नाइट्राइट के लिए स्टेण्डड ग्राफ बनाना —

100 एम एल के दस नपना जार लें। प्रत्येक जार मे स्टाक नाइट्राइट घोल की 0 0, 0 1, 0 2 0 5, 1 0, 1 5, 2 0, 2 5, 3 5 और 4 0 एम एल मात्रा लें। हरेक जार मे आसुत पानी मिलाकर उसकी मात्रा 50 एम एल कर लें। प्रत्येक जार मे पहले एक एम एल भाग ई डी टी ए घोल व बाद मे सल्फानिलिक अम्ल डालें। उसे हिलाकर दस मिनट के लिए रखें। प्रत्येक जार मे एक एम एल नेप्थलमीन हाइड्रोक्लोराइड और सोडियम एसिटेट बफर का घोल मिलाकर रखें। पहले से आखिर तक के जार मे से घोल को निकाल कर एक एक परखनली मे डालें और उन पर 1 से 10 तक हिसाब से सख्या लिख दें। पहली परखनली रखकर कोलोरिमीटर को 100 प्रतिशत ट्रासमिसन पर 520 550 mμ फिल्टर लगाकर सेट करते है। फिर कोलोरिमीटर में 0 1 से 4 0 एम एल स्टण्डड वाली परखनली रख कर रीडिंग उतार लेते हैं। फिर एक ग्राफ पेपर पर स्टैण्डड नाइट्राइट का कर्व बना लेते हैं। इसके लिये ग्राफ पेपर पर एक तरफ ट्रासमिसन की प्रतिशत और दूसरी तरफ नाइट्राइट स्टेण्डड की रीडिंग के बि दु अकित कर लेते हैं। इस प्रकार हर बिन्दु को मिलाकर एक स्टेण्डड कव बना लेते हैं।

विधि – एक जार मे 50 एम एल पानी का नमूना लेते हैं और उसमे एक एम एल भाग ई डी टी ए और सल्फानिलिक अम्ल का मिलाते हैं। इसको हिलाकर दस मिनट के लिए रख देते हैं। इसम एक एम एल नेप्थलमीन हाइड्रो क्लोराइड और सोडियम एसिटेट बफर का घोल मिलाकर रख देते हैं। इसमे गुलाबी रग दिखने पर इसे एक परख नली म लेते हैं।

अब कोलोरिमीटर को 100 प्रतिशत ट्रासमिसन पर ऊपर बनाये गये दस नमूने मे से पहले नमूने की भरी हुई परखनली को रखकर सेट करते हैं (जो स्टेण्डड कव के लिये बनाया गया था)। पानी के नमूने की परखनली जिसम गुलाबी रग आया था, कोलारिमीटर मे रखते है और उसकी रीडिंग ले लेते हैं। इस रीडिंग को स्टण्डड ग्राफ म रखकर नाइट्राइट (μg नाइट्राइट एन) का पता लगा लेते हैं और नीचे दिये तरीके के आधार पर नमूने के पानी म नाइट्राइट की मात्रा ज्ञात कर लेते हैं।

$$mg/l \text{ नाइट्राइट एन} = \frac{\mu g \text{ नाइट्राइट एन}}{\text{नमूने के पानी की मात्रा}}$$

$$mg/ \text{ नाइट्राइट } (NO_2) = mg/l \text{ नाइट्राइट एन} \times 3\ 29$$

नाइट्रेट्स की मात्रा के लिये परीक्षण (फीनोल डाई सल्फोनिक अम्ल का तरीका)

नाइट्रेटस के लिए स्टेण्डड ग्राफ बनाना सौ एम एल के नौ नपना जार लें।

हर एक जार मे स्टेण्डड नाइट्रेट घोल की 0 00, 0 05, 0 10, 0 15, 0 20, 0 25, 0 30, 0 35 और 0 40 एम एल मात्रा लें। अब हरेक जार मे 2 एम एल फिनोल डाइसल्फोनिक अम्ल व उसमे पीला रग आने तक 6 से 7 एम एल पोटेशियम हाइड्रोआक्साईड घोल की मात्रा डालें। हर एक जार मे आसुत पानी मिलाकर उसकी मात्रा 50 एम एल कर लें। इस बनाये गये स्टेण्डड घोल को अलग-अलग परखनलियो म लेकर उसमे पहले 1 से 9 नम्बर तक हिसाब से लिख दें। नाइट्रेट के लिये कोलोरिमीटर मे 400 से 425 mμ का बैगनी रग (Violet) का फिल्टर लेते हैं और एक नम्बर की परखनली उसमे रखकर 100 प्रतिशत ट्रासमिसन पर सेट कर लेते हैं। अब 2 से 9 नम्बर तक की परखनलिया को स्टेण्डड कोलोरिमीटर मे एक के बाद एक रखकर रीडिंग ले लेते हैं। ग्राफ पेपर पर एक तरफ ट्रासमिसन की प्रतिशत अकित करते हैं और दूसरी तरफ नाइट्रेट स्टेण्डड की रीडिंग के बिन्दु अकित कर लेते हैं। इस प्रकार ग्राफ पेपर पर लगाये गये सभी बिन्दुओं को मिलाकर एक स्टेन्डड कव बना लेते हैं। जब कभी नया स्टेण्डड ग्राफ बनाना हो तो काम मे आने वाले सभी रसायन घोल ताजे बनाकर ही काम में लेने चाहिये।

वितरण पानी के नमूने म क्लोराइड की मात्रा का पता लगाते हैं और उसके लिये जितना सिल्वर नाइट्रेट काम म आया हो वह अलग से लिख लेना चाहिये। अब 10 एम एल नमूने का पानी लेकर उसमे उतना सिल्वर सल्फेट का घोल डालें, जितना कि सिल्वर नाइट्रेट काम मे आया था। उसे पन्द्रह मिनट के लिये रखें। फिर उसे छान लें और छने हुए घोल को होट एयर ओवन मे रखें ताकि उसमे से पानी पूणतया उड जाये। इसमे 2 एम एल फीनोल डाइ सल्फाइड अम्ल और कुछ असुत जल मिला दें। अब पोटेशियम हाइड्रोआक्साइड की मात्रा उतनी ही मिलावें जितनी स्टेण्डड कव ग्राफ बनाने के वक्त मिलाया गया था। उसमे आसुत जल मिलाकर उसकी मात्रा 50 एम एल कर लेवें और उसे अच्छी तरह हिलाकर एक परखनली मे निकालें। स्टेन्डड ग्राफ के लिये तयार की गयी पहली परखनली कोलोरिमीटर मे रख कर उसे 100 प्रतिशत ट्रासमिसन पर सेट करें। उपरोक्त तयार किये गये नमूने के पानी को एक परखनली मे लेकर कोलोरिमीटर मे रख कर रीडिंग नोट करें। रीडिंग को ग्राफ के स्टेण्डड कव के माफत देखकर नाइट्रेट की मात्रा का पता निम्न तरीके से लगाएँ—

$$\text{नाइट्रट एन की मात्रा} = \frac{\text{नाइट्रेट की मात्रा} \times 1{,}000 \; (\text{स्टेण्डड कव मे नमूने की रीडिंग})}{\text{नमूने की ली गयी मात्रा}}$$

नाइट्रेट No_3 के रूप मे, mg/लीटर NO_3 = नाइट्रेट एन की मात्रा × 4 43

फ्लोराइड की मात्रा के लिये परीक्षण (एलीजरीन फोटोमिटरिक तरीका)

फ्लोरीन के लिये स्टेण्डड कव ग्राफ बनाना आठ नपना जार 150 एम एल क्षमता वाले लें। फ्लोराइड का स्टेण्डड घाल बनाकर हर जार मे 0 00, 0 05, 0 10, 0 15, 0 20, 0 25, 0 30 और 0 35 एम एल घोल भरें और उनमे 100 एम एल निशान तक आसुत जल भर लें। अब हर जार मे 5 एम एल एलिजरीन लाल और 5 एम एल जरकोनिल अम्ल डालें। इस मिश्रण को कमरे मे ही एक घटे तक पडा रखें। आसुत पानी को एक परखनली मे लें और 520 से 550 mμ का ग्रीन फिल्टर लगाकर कोलोरिमीटर को 100 प्रतिशत ट्रांसमिसन पर सेट करें। अब परखनलियो मे 0 00 से 0 35 मिलीग्राम प्रति लीटर का फ्लोरीन स्टेण्डड लें और उसे बारी बारी कोलोरिमीटर मे रखकर ट्रासमिसन की रीडिंग लिखते जायें। स्टेण्डड कव ग्राफ बनाने के लिये ग्राफ पेपर पर एक तरफ ट्रासमिसन का प्रतिशत अकित करें और दूसरी तरफ फ्लोरीन की स्टेण्डड रेंज लिखें। अब ग्राफ पेपर पर अकित हर बिन्दु को मिलाकर फ्लोरीन का स्टेण्डड कव ग्राफ तैयार करें। जब भी एलिजरीन लाल या जरकोनिल अम्ल का घोल समाप्त हो जाये और उनमे से अगर एक भी दुबारा बनाना पडे तो उसके लिये फ्लोरीन का स्टेण्डड कव ग्राफ भी नया बनाना चाहिये।

विधि जब पानी के नमूने मे फ्लोरीन की मात्रा ज्ञात करनी हो तो, नमूने के पानी की 100 एम एल मात्रा एक जार मे लें और उसमे 5 एम एल एलिजरीन लाल और पांच एम एल जरकोनिल अम्ल की डालकर उसे एक घटे तक कमरे म रखे रहने दें। उस जार मे से 5 एम एल घोल एक परखनली में लें। अब फोटो कोलोरिमीटर को आसुत पानी का उपयोग करते हुए 100 प्रतिशत ट्रासमिसन पर सेट कर। नमूने के पानी से भरी हुई परखनली को फोटो कोलोरिमीटर मे रखें और रीडिंग नोट करें। इस रीडिंग द्वारा स्टेण्डड ग्राफ की सहायता से फ्लोराइड (ए) की मात्रा का पता लगाएँ और निम्नाकित तरीके के द्वारा mg/ लीटर फ्लोरीन निकाल लें।

$$\text{mg/लीटर फ्लोरीन} = \frac{\text{ए} \times 1,000}{\text{नमूने के पानी की ली गयी मात्रा एम एल मे}}$$

प्रदूषित व गट्टर के पानी मे बी ओ डी की मात्रा (Biochemical demand in polluted water and sewage)

एरोबिक जीवाणु बायोकेमिकल क्रिया द्वारा सडने वाले कार्बनिक पदार्थों की स्थिरता बनाये रखते हैं और उनकी इस क्रिया के लिए एक लीटर पानी में घुली हुई जितनी मि ग्रा आक्सीजन की जरूरत पडती है उसे बी ओ डी कहते हैं। बी ओ डी का पता लगाने के लिये नमूने के पानी को 20° सी तापक्रम पर पाच दिनो तक रखा जाता है और उसमे जितनी घुली हुई ऑक्सीजन की मात्रा कम हो

जाती है उसे अवित कर लेते है। बायोकेमिकल क्रिया म जीवाणु अपने भोजन के लिए कार्बनिक पदार्थों को विभाजित करके उनका आसानी से अच्छी तरह उपयोग कर सकते हैं। जीवाणुओं की इस क्रिया को आसान करने क लिये गटटर में पानी का पी एच 6 5 से 8 होना चाहिये। उसमे नाइट्रोजन व फासफोरस मिलाने से बी ओ डी की क्रिया तीव्र हो जाती है। जब कारखानो के अवशेष बहुत ही ज्यादा तादाद म नदी या दूसरे जल स्रोत मे मिल जाते हैं तो पानी म घुली ऑक्सीजन की मात्रा इतनी कम हो जाती है कि मछलिया व पानी म रहने वाले अन्य जीव उसमे जी ही नही सकते। इस प्रदूषण के कारण पानी का रग काला, भूरा, लाल इत्यादि हो सकता है और उसमे बदबू आती रहती है। इस तरह के पानी को पीने से मनुष्यो व जानवरो म कई तरह की बीमारिया हो जाती हैं जिनमे शारीरिक दर्द, चम रोग, फुसिया, कब्ज, अपच, पेचिश व आखो के रोग व कैंसर प्रमुख हैं। इसके कारण फसलो पर भी बुरा असर पडता है, जैसे कि फसल की उपज घट जाना या जमीन बजर हो जाना आदि। जब नदियो का गदा पानी उसके दोनो किनारो पर बने कुओ मे रिसता है तो पानी के मुख्य स्रोत भी दूपित हो जाते हैं। वतमान मे सतही पानी की तरह भूमिगत पानी के प्रदूषण की समस्या भी बढ रही है। पानी के स्रोतो के प्रदूषण के लिए कपडा रगाई छपाई, रेशा, चम व अन्य रसायन उद्योग आदि प्रमुख घटक हैं।

यन्त्र काच की ढक्कन सहित 300 एम एल क्षमता की छ बी ओ डी बोतलें, बी ओ डी इन्क्यूबेटर, सल्फ्यूरिक अम्ल, सोडियम थायोसल्फेट, एलकली आयोडीन एजाईड घोल, मगनीज सल्फेट घोल, गटटर का पहले का रॉ (Raw) व बाद मे साफ (Trea) किया हुआ पानी।

विधि बी ओ डी की 300 एम एल क्षमता वाली छ बोतलें लें। उनम से दो बोतल ब्लैंक (Blank) टाइट्रेसन के लिये लें। उन बोतलों मे ब्लैंक टाइट्रेसन के लिये डाइल्यूसन के लिये तयार किया गया पानी (परिशिष्ट प्रथम) भरें। फिर दूसरी दो बोतलो मे गट्टर का पानी लें। अब 1 5 एम, एल गट्टर के पानी (रा) का नमूना लें (0 5 प्रतिशत) और बाकी आसुत जल मिलाए। फिर दो दूसरी बोतलो म गट्टर का साफ किया हुआ पानी लें। उनमे 60 एम एल गटटर का साफ (Treated) किया पानी (20 प्रतिशत) और बाकी आसुत जल मिलाए। ब्लैंक के लिये बनायी गयी दोनो बोतलें ले और उनमे से एक पर शून्य दिन और दूसरी पर पाचवा दिन लिखें। शून्य दिन वाली बोतल लें और उसमे 2 एम एल मैंगनीज सल्फेट और उतना ही एलकली आयोडीन घोल डालें और उन्हे अच्छी तरह मिला कर उसमे 2 एम एल सल्फ्यूरिक अम्ल भी डालें। उसे $\frac{N}{80}$ सोडियम थायोसल्फेट (जो पोटेशियम डाइक्रोमेट घोल द्वारा स्टेण्डराइज किया हुआ हो) से टाइट्रेट करके उसकी रीडिंग लिख ल। उस ब्लैंक की शून्य दिन की रीडिंग कहा जायेगा।

उसके साथ वाली बोतल को पाच दिनो के लिये बी ओ डी इ कूबेटर मे 20° सी पर रखे जिससे उसमे से आक्सीजन कम हो जाए। पाच दिनो बाद उसे बी ओ डी इक्यूबेटर से निकाल कर उसमे 2 एम एल मैंगनीज सल्फेट और उतना ही एलकली आयोडीन और सल्फ्यूरिक अम्ल मिलाए। उसे $\frac{N}{80}$ सोडियम थायोसल्फेट से टाइट्रेट करके उसमे जितनी मात्रा लगे उसे अंकित कर लें। उसे ब्लैक की पाचवें दिन की रीडिंग कहेंगे।

गट्टर के पानी के लिये तयार की गयी दो बोतलें लें और एक पर शू य दिन तथा दूसरी पर पाचवा दिन लिखें। उन्हें भी ऊपर लिखे गये तरीके के अनुसार शू य दिन और पाचवे दिन टाइट्रेट करें। इस प्रकार शून्य दिन और पाचवें दिन की गट्टर के पानी की रीडिंग ज्ञात कर लेते है।

अब बाकी बची हुई दो बोतलें जिनमे गट्टर का साफ किया हुआ (Treated) पानी है, लें और ऊपर लिखी हुई विधि द्वारा इस पानी को भी टाइट्रेट करे। इस प्रकार जो रीडिंग आयेगी उसे शून्य दिन की और पाचवें दिन की ट्रीट किये हुए पानी की रीडिंग कहगे।

ऊपर की रीडिंग को काम म लेकर निम्न तरीके से रा गट्टर के पानी का बी आ डी mg/ लीटर का पता कर लेते है। ट्रीट किये हुए गट्टर के पाना का बी ओ डी 30 mg/ लीटर होना चाहिये।

(रॉ पानी म आक्सीजन की कमी – ब्लैक मे आक्साजन की कमी)
(शू य दिन–पाचवें दिन की रीडिंग) (शून्य दिन–पाचवें दिन की रीडिंग)
रॉ पानी का बी ओ डी mg/लीटर= ———————————— × 100
लिये गये गट्टर के रॉ पानी की प्रतिशत

(ट्रीट किये पानी मे आक्सीजन की कमी – ब्लैक मे आक्सीजन की कमी)
(शून्य दिन–पाचवें दिन की रीडिंग) (शून्य दिन–पाचवें दिन की रीडिंग)
ट्रीट किये गये गटटर के पानी= ———————————— × 100
मे बी ओ डी mg/लीटर ट्रीट करके लिये गये गट्टर के पानी
का प्रतिशत

केमीकल आक्सीजन डिमान्ड (सी ओ डी)

डाइक्रोमेट रीफ्लेक्स विधि इस विधि द्वारा गट्टर के पानी म कार्बनिक पदार्थों की माना का ज्ञान होता है जिनका शीघ्र ही तीव्र रासायनिक आक्सीडेन्ट के प्रभाव से आक्सीडेसन हो जाता है। इस जाच द्वारा गदे पानी मे पायी जाने वाली कार्बनिक पदार्थों की मात्रा का पता लगता है जिनमे जविक क्रिया नाशक तत्व भी होते हैं। इसलिये बहते रहने वाले और औद्योगिक कारखानो स निकलन वाल पानी का सी ओ डी परीक्षण करना बहुत जरूरी होता है। सिल्वर सल्फेट केटलिस्ट

की उपस्थिति मे स्टेट चेन अम्ल आल्काहाल और एमिनोएसिड पूरी तरह से आक्सीडाइज हो जाते है। डाइक्रोमेट रीफ्लेक्स विधि द्वारा सी आ डी का परीक्षण करते है।

यन्त्र 300 और 500 एम एल क्षमता के फ्लास्क, स्टेण्डड पोटेशियम डाइक्रोमट घोल फेरोइन इण्डीकेटर, फेरस अमोनिया सल्फेट घोल, सल्फ्यूरिक ऐसिड एव सिल्वर सल्फेट के दाने।

विधि – एक 300 एम एल क्षमता वाल फ्लास्क म 50 एम एल नमूने का पानी (या 50 एम एल तनुकरण किया हुआ आलीक्वाट) लें और उसमे 25 एम एल (0 25 एम एल प्रतिशत) पोटेशियम डाइक्रोमेट घोल, 75 एम एल सल्फ्यूरिक अम्ल और एक ग्राम सिल्वर सल्फेट डालकर अच्छी तरह हिलाकर फ्लास्क को कडेंसर से मिलाएँ और इस मिश्रण को दो घटा तक रिफ्लेक्स करें। फ्लास्क म मिश्रण को उछलने से रोकने के लिए उसमे काच की छाटी छोटी गोलिया जरूर रखें। कडेंसर को ठडा करें और उसम 25 एम एल आसुत जल डालकर हिलाए तथा उसे एक 500 एम एल फ्लास्क मे निकाल ले। रीफलक्स फ्लास्क का चार पाच बार आसुत पानी स और धोए और आसुत पानी से इस मिश्रण का 350 एम एल तक तनुकरण करें। उसम छह बूदें फेरोइन इडीकेटर की डालें और उसम बचे हुए डाइक्रोमेट को स्टेन्डड फेरस अमोनिया सल्फेट घोल द्वारा तब तक टाइट्रेट करें जब तक कि उसका रग नीले हरे से लाल नीला न हो जाये।

एक फ्लास्क म 50 एम एल आसुत पानी और ट्रीट किया हुआ पानी मिलाकर लें और उपरोक्त सभी रसायन भी मिलाए। ऊपर लिखि विधि द्वारा इस नमूने को भी टाइट्रेट करें। ट्रीट किये हुए पानी म सी ओ डी 250 mg/लीटर होनी चाहिये। नीचे लिखे तरीके से सी ओ डी का पता किया जाता है—

$$\text{सी ओ डी mg/लीटर} = \frac{(a-b) \times N \times 8\ 000}{V}$$

a = ब्लैंक को टाइट्रेट करने के लिये ली गयी अमोनिया सल्फेट का मात्रा

b = *नमूने के पानी (राँ या ट्रीट किया हुआ गट्टर का पानी)* को टाईट्रेट करने के लिये ली गयी अमोनियम सल्फेट की मात्रा।

N = फेरस अमोनियम सल्फेट की नारमलिटी (तरीका परिशिष्ट I मे दिया गया है।

V = पानी के नमूने की ली गयी मात्रा।

धात्विक अशुद्धियों के लिये पानी का रासायनिक गुण शोधन

धात्विक अशुद्धिया

पानी मे पाई जाने वाली धात्विक अशुद्धियो की विषाक्तता का अनुमान मनुष्यो

व जानवरो द्वारा पीये गये पानी से उत्पन्न लक्षणा से मालूम पड जाता है। कुछ मुख्य धात्विक अशुद्धिया निम्न प्रकार की हैं —

लोहा

एक परखनली मे 10 एम एल पानी का नमूना लेकर उसम कुछ बूदें पोटेशियम फेरो सायनाइड की डालें। पानी के नमूने म नीले रग का दिखाई देना लोहे की उपस्थिति बताता है।

अनुमान वितरण के लिए ले जाये जाने वाले भूमिगत पानी म लोहे की कुछ मात्रा पायी जा सकती है तथा यह ज्यादातर नगण्य मात्रा म ही होता है। अधिक मात्रा म होने पर यह पानी के स्वाद म कडवापन पैदा करता है, पानी गदा व मटमैला दिखाई देता है। लोहे की उपस्थिति के कारण पानी मे लोहे वाले जीवाणुओ (Crenothrix) की सख्या मे वृद्धि होती है। ये पानी मे से लोहा हटाते है और उसे फेरिक हाइड्रोआक्साइड के रूप मे एक लसलसे पदार्थ का आवरण बनाकर जमा कर लेते हैं तथा उसी मे रहते हैं। दूसरी तरह के लोह जीवाणु गेलिओनेला (Gallionella) कहलाते हैं। य पानी ले जाने वाले लोहे के नलो की भीतरी सतहो पर एक पतली परत बना देते हैं जिसस फीते जसे पदार्थ पानी म लटकते दिखाई देते हैं। कुछ समय बाद ये नलो की भीतरी सतह को भी छोटा कर देते हैं तथा वहा आक्सीकरण की क्रिया द्वारा जग व जगयुक्त कठोर गाठें बनाते हैं। अम्लीय व हल्का तथा मुक्त कार्बोलिक अम्लयुक्त व अधिक आक्सीजनयुक्त पानी भी लोहे मे जग उत्पन्न कर सकते है।

तांबा

एक परखनली मे पानी का 10 एम एल नमूना लेकर उसमे कुछ बूदे पोटेशियम फेरो सायनाइड की डालें। पानी के नमूने मे चाकलेट रग का दिखाई देना तावे की उपस्थिति बताता है।

अनुमान प्राकृतिक पानी म तावा अनुपस्थित रहता है, मगर जब पानी को किसी ताबे के बतन म ज्यादा समय तक रख दिया जाये तब उसमे तावे के अश आ जाते हैं और अगर पानी अम्लीय हो तो उसमे ताबा ज्यादा मात्रा मे घुलता है। पानी म शवाल, जीवाणुओ व अन्य परजीवियो की वृद्धि को रोकने के लिये आजकल जलदाय विभाग द्वारा तावा (कापर सल्फेट) का सफलतापूवक प्रयोग किया जाता है क्योकि ये सभी जीवाणु कभी कभी भारी सख्या मे पानी की टकियो मे तथा फिल्टर हाउस म पानी साफ करने वाली बिछावन की ऊपरी सतहो पर जमा हो जाते हैं। ऐसा सोचा जाता है कि शवाल व जीवाणु पानी से सारा ताबा सोख लेते है। परन्तु इस धातु के लिये ऐसे पानी के नमूने का परीक्षण करना जरूरी है, क्योकि ऐसे पानी मे सूक्ष्म जीवाणुओ के मरने व बाद मे उनके सडने गलने से उनमें से कापर सल्फेट

स्रोता के नजदीक काम म लिया जाये तो यह जल वितरण प्रणाली का गदूगित कर सकता है। यह खानो क पानी म भी पाया जाता है। पीने के पानी म इसकी उप स्थिति अत्यन्त हानिकारक है। आर्सेनिक की विषाक्तता के कारण पशुआ म तीव्र असन्तना, लडखडाना, कापना, मासल ऐंठन, तज श्वास, बचनी, कराहट आदि लक्षण देखे जा सकते हैं। विष का प्रभाव ज्यादा होने पर रोग ग्रस्त पशु की तीन या चार घटे म मृत्यु भी हो सकती है। पशुआ के सास म लहसुन जसी गध, बालो का गिरना, त्वचा का खुरदरा व रूसीयुक्त होना, आखो का लाल होना, दस्त आना और पिछले परो का आशिक पक्षाघात आदि लक्षण भी प्रमुख रूप स दिखाई दत है।

सूची–1 जानवरो क पीने के पानी म विषल रासायनिक पदार्थों की सीमित मात्रा* का मार्गदर्शन

रसायन	ऊपरी सीमा mg/लीटर
आल्यूमिनीयम	5 0
आर्सेनिक	0 2
बरिलियम[1]	0 1
बारोन	5 0
काडमियम	0 05
क्रोमीयम	1 00
कोबाल्ट	1 00
ताबा	0 5
फ्लोराइड	2 0
लोहा	जरूरत नही
सीसा[2]	0 1
मैग्नीज[3]	0 5
पारा	0 01
नाइट्रेट + नाइट्राइट (NO_3-N+NO_2-N)	100 00
नाइट्राइट (NO_2-N)	10 0
सलीनियम	0 05
वीनेडियम	0 10
जस्ता	24 0

सूची–2 जानवरो के लिए पीने के पानी मे मैग्नीसियम की सीमित मात्रा**—

जानवर	मैग्नीसियम की मात्रा (mg/L)	(me/L)[4]
मुर्गी[5]	<250	<21
सूअर[5]	<250	<21

[illegible]		
मास के लिए गायें	400	33
मादा भेड व मेमने	250	<21
वयस्क भेड जो सूखे चारे पर रहती है	500	41

सूची–3 जानवरो और मुर्गियों के लिये लवणयुक्त पानी के बारे मे मानक *** –

पानी मे नमक (EC_w)[6] (dS/m)	निश्चित करना	ध्यान देने योग्य बातें
< 1 5	श्रेष्ठ	सभी तरह के जानवरो और मुर्गियो के पीने योग्य।
1 5– 5 0	बहुत संतोषजनक	सभी तरह के जानवरो और मुर्गियो के पीने योग्य। जिन जानवरो ने पहले ऐसा पानी नही पीया हो उनमे कुछ समय के लिए दस्त लग सकती है और मुर्गियो मे भी पानी जसी बीटें होने लगती हैं।
5 0– 8 0	जानवरो के लिए सन्तोषजनक	अगर जानवरो ने ऐसा पानी पहले कभी नही पीया हो तो पहले तो वे मुश्किल से पीयेंगे और फिर पीने के बाद उनको कुछ समय के लिए दस्त लगती है।
	मुर्गियो के लिए अयोग्य	ज्यादातर पानी जसी बीट और खास तोर से टर्की की शारीरिक बढोतरी ठीक स नही होती है और वे मरने लगती हैं।
8 0–11 0	जानवरो के लिए कम काम मे ल	मांस के लियें रक्खी गयी गायो, भेडो और घोडो के लिए सावधानीपूर्वक काम मे लें। दूध देने वाले तथा गर्भावस्था वाले जानवरो को यह पानी नही पिलाए।
	मुर्गियो के लिये अयोग्य	मुर्गियो के वास्ते काम म नही लिया जा सकता।
11 0–16 0	बहुत कम उपयोगी	मुर्गियो और सूअरो के लिए बिलकुल ठीक नही। गर्भावस्था, दूध देने वाले पशु, घोडे भेड व छोटे जानवरो के लिय काफी खतरनाक। सामान्यत ऐसा पानी नही पिलाना चाहिये,

		जबकि ज्यादा उम्र वाले चौपाये जानवर, मुर्गी आदि कुछ स्थितिया मे ऐसे पानी पर निर्वाह र र सकते हैं।
< 16 0	अयोग्य	अत्यधिक नमक्युक्त पानी काफी खतरनाक होने के कारण किसी भी स्थिति मे पीने के लिये योग्य नही ठहराया जा सकता है।

सूची–4 मनुष्यो के पीने के पानी म रासायनिक पदार्थों की मात्रा का माग दर्शन ****

		आई सी एम आर (1975)		डब्लू एच ओ (1971)
		ऊपरी वाछित मात्रा	अधिकतम रहने योग्य मात्रा	अधिकतम स्वीकृत मात्रा	अधिकतम स्वीकार योग्य मात्रा
पी एच		7 0–8 5	6 5–9 2	7 0–8 5	6 9–9 2
घुले हुए ठोस पदाथ		500	1500[7]	500	1500
कलिशयम	भाग	75	200	75	200
मग्नीशियम	प्रति	50	100	50	150
क्लोराइड	दस	200	1000	200	600
सल्फेट	लाख	200	400	200	400
फ्लोराइड	भाग	1 0	1 5	0 8–1 0	1 0–1 5
नाइट्रेट		50	–[8]	10	45

1 जानवरो के लिए उपलब्ध नही समुद्री जीवो के लिए उपयोगी।

2 सीसा शरीर मे जमा होता है और इसकी 0 05 mg/लीटर मात्रा भी विकार पदा करने लग जाती है।

3 जानवरो के लिए इसकी मात्रा उपलब्ध नहीं है, मनुष्यों के लिए दी गयी मात्रा यहा बताई गयी है।

4 $\text{me/L} = \dfrac{\text{mg/l of the element or ion}}{\text{Equivalent weight of element}}$

5 मुर्गी व सूअर के लिए इसकी मात्रा का पता नही, परन्तु यह 250 mg/लीटर से कम होती है।

6 EC_w = पानी की विद्युत सचालकता।
dS/m = डैसी साइमन/मीटर (640 भाग प्रति दस लाख भाग)।

7 अगर पानी का कोई दूसरा स्रोत न हो तो घुले हुए ठोस पदार्थ 300 एम जी/लीटर तक की छूट है।

8 मात्रा निर्धारण करने के लिए और सूचना चाहिये। मगर किसी भी हालत म यह 100 एम जी / लीटर से ज्यादा नही होनी चाहिये।

---

* National Academy of Science (1972) National Academy of Sciences and National Academy of Engineering water quality criteria United Environmental Protection Agency, Washington D C Report No EPA-R 373-033 p 592

** Australian Water Resources Council (1969) Quality aspects of farm water supplies Department of National Development, Canberra 45p

*** National Academy of Scinces (1972) National Academy of Sciences(1974) *Nutrients and toxic substanes in water* for livestock and poultry Washington DC 93p

**** W H O (1971) International Standards of drinking water 3rd Edi Geneva

I C M R (1975) Manual of Standards of quality of drinking water supplies Special eport series No 44

पानी का जीवाणुओ के लिए परीक्षण

परिचय

अच्छे स्वास्थ्य के लिए पीने के पानी का जीवाणुओ के लिए परीक्षण उसमे उत्पन्न हुए गट्टर के पानी द्वारा प्रदूषण की उपस्थिति या अनुपस्थिति का पता लगाने के लिए किया जाता है। पानी मे साधारणतया निम्न दो तरह के जीवाणु पाये जाते हैं –

मृतजीवी जीवाणु (Saprophytic bacteria)

ये पानी मे प्राकृतिक रूप मे पाये जाते है और शारीरिक गर्मी से नीचे ताप क्रम पर (20–22° सी) वृद्धि करते है। ये सडने वाले कार्बनिक पदार्थों से अपना पोषण लेते हैं तथा स्वास्थ्य की दृष्टि से ये कम महत्वपूर्ण हैं। लेकिन पानी मे इनकी उपस्थिति इस बात की सूचक है कि इसमे कार्बनिक पदार्थों की मात्रा ज्यादा है।

बाह्य पानी के जीवाणु (Adventitious bacteria)

ये जीवाणु बाहर के स्रोतो से पानी के अन्दर आते है। इनके स्रोत हवा, वर्षा, मिट्टी, बर्फ इत्यादि हैं तथा एक निश्चित समय के बाद ये जीवाणु पानी मे जीवित नही रह सकते। पीने के पानी मे बाहर से कुछ जीवाणु मनुष्यो एवं पशुओ के मल–मूत्र व नलो मे बहने वाली गदगी से आते है। इसलिए ऐसे पानी का जीवाणुओ के लिये परीक्षण करना अत्यन्त आवश्यक है। ऐसे पानी मे मल मूत्र के जीवाणु उप–स्थित होते हैं तथा वे ज्यादातर कोलीफार्म, स्ट्रेप्टोकोक्साई तथा क्लोस्ट्रीडियम समूह के होते हैं। क्लोस्ट्रीडियम वेलशाइ की उपस्थिति पानी का ज्यादा समय पहले के सदूषण की सूचना देती है, क्योकि ये पानी मे लम्बे समय तक जीवित रह सकते हैं। जबकि पानी मे कोलीफार्म समूह के जीवाणुओ का पाया जाना मल मूत्र द्वारा हाल ही मे हुए सदूषण का सकेत देता है।

उद्देश्य

(1) जीवित जीवाणुओ की गणना (Viable bacterial count or standard plate count)

(2) अनुमानित कोलीफार्म की गणना (Presumptive coliform count)

(3) विभेदन कोलीफाम परीक्षा (Differential coliform test)

उपकरण

नमूने के लिये काच की बोतल जीवाणु रहित ग्रेजुएटेड पिपेट (1 व 10 एम एल) ब्लो लैम्प या गस बनर (बुनसन या स्प्रिट लम्प) जीवाणु रहित ब्लक के लिये काँच की परखनलिया, काँच के सामान पर लिखने वाली कलम जीवाणु रहित पेट्री प्लेट (4 से मी व्यास की), पोषक अगर मेकोन्की अगर द्रव्य मेकोन्की ब्रोथ डयुरहम नली, स्टण्ड, जाली की टोकरी, इन्क्यूबेटर, बी ओ डी इन्क्यूबेटर, होट एयर ओवन, ओटोक्लेव कोलोनी काउन्टर, को स्टेन्ट तापक्रम का वाटर बाथ, पी एच मीटर, फ्लास्क एव तुला।

उपकरणो को जीवाणुओ से मुक्त करना (Sterilization of equipments)

सभी काँच के उपकरणो को अच्छी तरह से साफ करना चाहिए, क्योंकि कावनिक व अकावनिक पदाथ कलचर के दौरान जीवाणुओ की वृद्धि व प्रजनन मे रुकावट पदा करते हैं। इसके वास्ते एक अच्छे किस्म के साबुन का पाऊडर काम म लेना चाहिए और उपकरणो को साबुन और पानी से साफ धोकर फिर आसुत पानी से धोकर सुखाना चाहिये। परखनली पर पानी न सोखने वाली रूई का डट्टा लगाना चाहिये। डट्टा न तो ज्यादा कसा हुआ और न ही ज्यादा ढीला होना चाहिए। ब्लंक की परखनलिया तयार करने क लिए उनम 9 एम एल आसुत पानी भरकर उस पर रूई का डट्टा लगा देना चाहिये। फिर इन परखनलियो को जाली की टोकरी मे रखकर एक कागज से ढककर, उसको चारो तरफ से एक धागे द्वारा बाध दें। पेट्रीप्लेट, पिपेट और जाली की टोकरी, जिसम यह सामान रखा जाता है सभी को अखबार के पुराने कागज से ढककर जीवाणु रहित कर लेते हैं।

होट एयर ओवन (Hot air oven) ओवन म थर्मामीटर और तापमान बराबर बनाये रखने के लिये थर्मोस्टेट भी लगा होना चाहिये। जिस सामान को जीवाणु रहित करना होता है उन्हे ओवन म रख देते हैं और इसे 160° सी पर सेट करके सभी सामान को डेढ घटे तक रहने देते हैं। इतने समय मे उसमे रहने वाले सभी सूक्ष्मजीवी मर जाते हैं। ओवन म जीवाणुओ से पानी वाष्प बनकर उड जाता है तथा उनका प्रोटीन जम जाता है। जीवाणुओ के प्रोटोप्लाज्म म 85 प्रतिशत नमी होती है जो कि ओवन की शुष्क गम हवा से समाप्त हो जाती है तथा नमी समाप्त होने पर जीवाणु मर जाते हैं। इस प्रकार काच के उपकरणो का ओवन द्वारा स्टर लाइजेशन हो जाता है। ओवन म जो भी सामान रखें तो ध्यान रहे कि उपकरणो पर लगे कागज ओवन की दीवार को न छूए। स्टरलाइजेशन के बाद तक ओवन का तापक्रम सामान्य (40° सी) पर न आ जाय तब तक उसका दरवाजा नही खोलना चाहिये वर्ना उसमे रखे कागज आग पकड सकते हैं और तापक्रम मे एकदम गिरावट आ जाने के कारण काच के उपकरण टूट भी सकते हैं।

ओटोक्लेव (Autoclave) यह जरा बडा होना चाहिये जिससे कि सभी उपकरण इसमे आसानी से आ सकें और उनको समान तापक्रम मिल सके। इस उपकरण के द्वारा सारे जीवाणु 15 पौण्ड हवा के दवाव पर 15 से 20 मिनट म मर जाते हैं। शकरा मिले मीडिया (Media) को 10 पौण्ड वायु के दवाव पर आधा या एक घटा तक ओटोक्लेव करना चाहिए। उच्च दवाव पर शकरा खराब हो जाती है। ओटोक्लेव की नमी वाली वाष्प, ओवन की सूखी हवा की तुलना मे जीवाणुओ को समाप्त करने का एक तीव्र व अच्छा माध्यम है। ओटोक्लेव मे नम वाष्प ज्योंही उसमे रखे उपकरणो के सम्पक मे आती है उनका तापक्रम बढ जाता है। इसम रखे उपकरणो का तापक्रम कम होने के कारण वाष्प उन पर जमती जाती है और वाष्पीकरण की गुप्त ऊष्मा मुक्त हो जाती है और इस प्रकार उपकरण गम होते रहते हैं। वाष्प छोटे छिद्रो से भी हवा को हटाकर उसका स्थान लेती है। ओवन की तुलना म ओटोक्लेव बहुत अधिक प्रभावशाली है क्योकि वाष्प का अपेक्षित घनत्व गम हवा की तुलना म कम होता है और ज्यो–ज्यो वाष्प उपकरणो पर जमती है, उसका आयतन लगभग $\frac{1}{1700}$ भाग कम हो जाता है जिससे आशिक शून्यता बढती रहती है और उस खाली स्थान को भरने के लिए तुरत ही तेजी से वाष्प, उपकरण की तरफ आती है और उस पर जमती रहती है। ऐसा तब तक होता है जब तक कि उपकरण का तापक्रम वाष्प के तापक्रम के बराबर न आ जाये। प्रभावशाली तरीके से उपकरण पर से जीवाणुओ को समाप्त करने के लिये वाष्प को उपकरणो के सम्पक म लाना जरूरी है और इसके लिए हर उपकरण को अलग-अलग रखना चाहिये जिससे वाष्प उस पर आसानी से पहुच सके। जीवाणुओ म पानी की मात्रा ज्यादा हो जाने के कारण उनके प्रोटीन का थक्का जम जाता है। चमडे के उपकरण व तेल का ओटोक्लेव द्वारा सूक्ष्मजीवीनाशन नही किया जा सकता। रूई, द्रव माध्यम, रबड के सामान कपडे, धातु के और कांच के उपकरण इत्यादि को ओटोक्लेव द्वारा अच्छी तरह से जीवाणुरहित किया जा सकता है। आपातकाल म प्रेशर कुकर को भी ओटोक्लेव की जगह काम मे ले सकते हैं।

ओटोक्लेव को काम मे लेते समय इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहियें कि ओटोक्लेव म जसे ही हवा का दाब बढने लगे, तब शुरू मे एक बार उसके अन्दर की गम हवा का वाल्व द्वारा पूण रूप से बाहर निकाल देनी चाहिये। अगर ओटोक्लेव मे स गम हवा नही निकाली जायेगी तो यह हवा गम होकर फलेगी और इसके कारण ओटोक्लेव हवा का सही दवाव नही दे पायेगा। काम की समाप्ति पर एव ओटोक्लेव को खोलते समय कुछ दूरी पर खडा होना चाहिये जिसस उसमे तेजी से निकलने वाली वाष्प से कोई दुघटना न हो।

स्टेण्डड प्लेट काउट

पानी के जीवाणु

पोषक अगर की तयारी व स्टरलाइजेशन स्टण्डड प्लेट काउट के लिये काम

म आने वाले पोषक अगर निम्नलिखित सामग्रियो को मिलाकर बनाया जाता है—

अगर पाउडर	15 ग्राम
बीफ (Beef) एक्स्ट्रेक्ट	5 ग्राम
पेप्टोन	10 ग्राम
ए डियम क्लोराइड	5 ग्राम
आसुत पानी	1,000 एम एल

सभी सामग्रियो को काच के फ्लास्क म डालकर, वाटर वाथ पर रखकर गम करके घोल लेते हैं। फिर उसका पी एच 7 4 सेट करते हैं। फ्लास्क पर रूई का डाट लगाकर उसे 15 पौण्ड दवाव पर उपरोक्त दी गयी विधि के अनुसार मीडियम को ओटोक्लेव के द्वारा स्टरलाइज करते हैं। जब हवा का दवाव शून्य हो जाय तब मीडियम को ओटोक्लेव से निकाल कर उसे जब तक अन्य काय म न लिया जाय, 50° सी पर वाटर वाथ म रखना चाहिये या लम्बे समय तक उसे खराब होने से बचाने के लिये रेफ्रीजरेटर म रख देना चाहिये।

ब्लक की तयारी व उसका स्टरलाइज करना ब्लक वह आसुत पानी होता है जिससे नमून के पानी का तनुकरण किया जाता है। इसके लिये हर परखनली मे 9 एम एल आसुत पानी लेते हैं और उस पर रूई का डाट लगाते हैं। उसे जाली की टोकरी मे रखकर कागज स ढक देते हैं और 15 पौण्ड दवाव पर ओटोक्लेव करके तयार करते हैं।

पानी के नमूने लेना

इसकी विधि पिछले अध्याय मे दी हुई है।

पानी के नमूने का तनुकरण करना

(1) नल के पानी का परीक्षण करने के लिये उसे 1 10 एव 1 100 के अनुपात म तनुकरण करना काफी होता है क्योकि ऐसे पानी मे सदूषण की सभावना कम होती है।

(2) जलाशय के पानी का परीक्षण करने के लिये उसे 1 10, 1 100, 1 1 000 एव 1 10,000 के क्रम तक तनुकरण करते हैं क्योकि ऐसे पानी म सदूषण की सभावना ज्यादा रहती है।

(3) कुण्डी के पानी के नमूने के परीक्षण के लिये उसका 1 10, 1 100, 1 1,000 और 1 10,000 क्रम तक तनुकरण करते हैं। ऐसे पानी के पशुओ के मल मूत्र द्वारा सदूषित होने की बहुत ज्यादा सभावना रहती है। नमूना एकत्रित करने के बाद जितना जल्दी हो सके पानी का परीक्षण कर लेना चाहिये। पानी का नमूना लेने के बाद और उसके परीक्षण करने के बीच के समय तक पानी के नमून की बोतल को 6 स 8° सो पर बफ म रखनी चाहिये। नमूने का परीक्षण 24 घट

तक नही किया जा सके और अगर परीक्षण करना जरूरी हो तो ऐसे मे परीक्षण के परिणाम पर सोच समझ कर निणय लेना चाहिये ।

पानी के नमूने की बोतल को पच्चीस बार, एक फुट के अतराल पर ऊपर नीचे करके जोर स हिलाना चाहिये । इस विधि से पानी म जीवाणुओ के समूह बिखर जाते हैं और नमूने के सही परिणाम निकलते हैं । परीक्षण काय करते समय वहा पर बिजली का पखा नही चलाना चाहिये, तथा सब दरवाजे और खिडकिया बन्द करके काम करन वाली टेबल को हल्के रासायनिक घोल से साफ करके ब्लो लेम्प की ज्वाला से टेबल के पूरे वातावरण को जीवाणु रहित कर लेना चाहिये ।

पिपेट की सहायता से पानी के नमूने की बोतल मे से एक एम एल नमूना लेकर उसे 9 एम एल वाली ब्लैक की परखनली मे डाल देते हैं । इस प्रकार यह एक 1 10 तनुकरण नमूने का पानी तयार हो जाता है । इस परखनली को हाथ की हथेलियों के बीच अच्छी तरह घुमाकर नमूने का ब्लक के साथ मिला देते है । *अब इस 1 10 तनुकरण किये नमूने मे से पिपेट द्वारा 2 एम एल पानी निकाल कर* उसमे से एक एम एल पानी एव स्टरलाइज पेट्री प्लेट मे तथा एक एम एल पानी एक दूसरी ब्लैक की परखनली म डालें । इस पहली प्लेट पर 1 10 लिख देंगे तथा ब्लैक की दूसरी परखनली पर 1 100 लिखेंगे । अब इस 1 100 वाली ब्लक परखनली स फिर 2 एम एल पानी का नमूना निकाल कर दूसरी पेट्री प्लेट मे एक एम एल डालें । इसे 1 100 तनुकरण की प्लेट कहेगे । पिपेट म बचा हुआ एक एम एल नमूना ब्लक की तीसरी नली म डालें जिसे 1 1,000 तनुकरण अनुपात वाला नमूना कहेगे । अब पिपेट द्वारा इस परखनली से एक एम एल नमूना लेकर उस तीसरी खाली पेट्री प्लेट मे डालें और यह प्लेट 1 1,000 तनुकरण अनुपात वाली प्लेट कहलायेगी । इस प्रकार 1 10, 1 100 और 1 1,000 तनुकरण अनुपात की तीन पेट्री प्लेटस तयार हो जाती है । इस तरह जितने ही तनुकरण अनुपात के पानी का नमूना तयार करना हो आगे फिर किया जाता है और इस विधि स हम किसी एक पेट्री प्लेट मे 30 स 300 तक जीवाणुओ के समूह *मिल सकते हैं । जिस पेट्री प्लेट म 30 से कम और 300 स ज्यादा जीवाणुओ* के समूह हा तो वह परिणाम के लिये उपयुक्त नही मानी जाती है ।

पोषक अगर मीडियम को पेट्री प्लेट मे भरना पोषक अगर को ठडा करके उसका तापक्रम 50° सी तक लाए । अब ब्लो लम्प के पास मे 1 10, 1 100, 1 1,000 तनुकरण की प्लेट म 10 एम एल मीडियम डाले और प्लेट को धीरे धीरे टेबल पर गोलाई म घुमाकर नमूने और मीडियम को अच्छी तरह मिलाए । इस विधि द्वारा मीडियम म जीवाणुओ का वितरण एक समान होता है । कुछ समय बाद जब पेट्री प्लेट म *अगर जम जाये तब प्लेट को उल्टा करके* 37° सी *तापक्रम*

पर 24 से 48 घटे तक रखा जाता है। प्रयो। व। प्रामाणिकता के लिये नमूने के पानी के हर तनुकरण अनुपात की दो या तीन पे ्री प्लेट बनानी ठीक रहती है।

गणना जीवाणुआ की कोलोन ी गणना के लिये 30 से 300 कोलोनी वाली प्लेट को चुनना चाहिये। उपरोक्त किये गये प्रयोग म से कोलोनी गणना के लिये एक ही तनुकरण अनुपात की ायी गयी तीनो पेट्री प्लेटस के जीवाणुओ के कोलोनी का औसत मान निकाल लेना चाहिये। कोलोनी की गणना कोलोनी काउटर द्वारा करनी चाहिये और उसकी अनुपस्थिति मे एक बडा अवतल लस (मैग्नीफिकेसन I 5 व्यास) से भी कोलोनी की गणना की जा सकती है। जब मृतोपजीवी जीवाणुओ के परीक्षण का परिणाम लिखना हो तो उसे 'स्टेण्डड प्लेट गणन 20° सी' कहेगे तथा जब वाह्य जल जीवाणुओ के परीक्षण का परिणाम लिखना हो तो उसे 'स्टेण्डड प्लेट गणना 37° सी' कहेंगे।

एक एम एल पानी मे जीवाणुओ की सख्या का पता लगाने के लिये उस पेट्री प्लेट म गिनती की हुई कोलोनीज को पेट्री प्लेट के तनुकरण अनुपात से गुणा करते हैं। इस प्रकार निकाले गये परिणाम को निम्नलिखित तालिका से तुलना करके नमूने के पानी की श्रेणी का पता लगा लिया जाता है।

वितरण किये जाने वाले पानी के नियम (माइक्यूल 1891)

श्रेणी	प्रति एम एल पानी मे जीवाणुओं की सख्या
अत्यत शुद्ध पानी	10 से कम
बहुत शुद्ध पानी	10 से 100
शुद्ध पानी	100 से 1,000
मध्यम पानी	1,000 से 10 000
अशुद्ध पानी	10,000 से 1,00,000
बहुत अशुद्ध पानी	1,00,000 से ज्यादा

कोलीफाम जीवाणु

पानी मे कई तरह के हानिकारक जीवाणु पाये जाते हैं व प्रत्येक जीवाणु को अलग से पहचान पाना एक कठिन काय है। यह एक प्रमाणित तथ्य है कि मनुष्यो व पशुओ के मल मे साधारणतया कोलोन बेसिलाई नामक जीवाणु पाये जाते हैं और जब इनके द्वारा पानी का सदूषण होता है तो ई कोलाई जीवाणु पानी मे आ जाते हैं। पानी म पाये जाने वाले दूसरे जीवाणुओ की अपेक्षा इस जीवाणु का पता आसानी से लगाया जा सकता है। इसलिये पानी की दूषितता का पता लगाने के लिय ई कोलाई की उपस्थिति के लिये परीक्षण किया जाता है। वसे कालोन समूह के जीवाणु हानिकारक नही होते हैं पर तु ये हमेशा मल म पाये जाते हैं इसलिये पानी

म इनका पाया जाना, मल द्वारा पानी के सदूषण का द्योतक है। इससे इस बात का पता लगता है कि ऐसे पानी द्वारा पानी से फलने वाले कई रोग हो सकते है। कोलाइ जीवाणु लम्बे समय तक पानी म जीवित नही रह सकता और उसका पानी के नमून म पाया जाना इस बात का सकेत है कि पानी स फलने वाली बीमारियो क हानिकारक जीवाणु उस पानी म विद्यमान हैं।

मेको की अगर मीडियम बनाकर उसे स्टरलाइज करना

इस मीडियम को निम्नलिखित सामग्री मिलाकर बनाया जाता है—

सोडियम टाउरोकोलेट	2 5 ग्राम
सोडियम क्लोराइड	2 5 ग्राम
पेप्टोन	10 0 ग्राम
अगर	7 5 ग्राम
लेक्टोस	5 0 ग्राम
न्यूट्रल रेड (एक प्रतिशत घोल)	2 0 एम एल
आसुत पानी	500 एम एल
पी एच	7 4

मेकोन्की अगर को तयार करने की विधि, पोषण अगर को तयार करने की विधि की तरह ही है। लेक्टोस और न्यूट्रल रेड को 10 पौण्ड हवा के दाब पर आटोक्लेव म रखकर जीवाणु रहित कर लेते हैं और फिर उन्हे ऊपर बनाये गय अगर म मिलाकर मेको की अगर तयार कर लेते हैं।

पानी के नमूने का तनुकरण करना उसे पेट्री प्लेट मे लेना, उसम मेको की अगर मीडियम मिलाना, जीवाणुओ की गणना करना आदि सभी ऊपर लिखी विधि के अनुसार ही किये जाते हैं। गुलाबी रग की कोलोनीज को कोलोनी काउन्टर की सहायता से गिना जाता है। नमून के पानी म कोलीफाम जीवाणुओ की सख्या का पता लगान के लिये, कोलोनी की सख्या को उसी पेट्री प्लेट के पानी के तनुकरण के अनुपात से गुणा करते हैं। इस विधि द्वारा अनुमानित कोलीफाम जीवाणुओ की सख्या ही ज्ञात कर सक्ते है क्योकि कुछ जीवाणुओ की कालोनी अगर मीडियम क नीचे रह जाती है जिससे सही परिणाम नही निकाला जा सकता परन्तु इस परीक्षण को शीघ्र किये जा सकने के कारण पानी म कोलीफाम जीवाणुओ का पता लग जाता है। पानी से फलने वाल रोगो से बचने म यह परीक्षण बहुत उपयोगी है।

अनुमानित कोलीफाम की गणना (Most Probable Number, M P N)

मेको कीज लक्टोज बाइल ब्रोथ (सिगल व डबल स्ट्रे थ मीडियम)

(1) सिंगल स्ट्रेंथ मीडियम बनाना और स्टरलाइज करना

सोडियम टाइरोकोलेट	5 ग्राम
लक्टोज	10 ग्राम
पेप्टोन	10 ग्राम
सोडियम क्लोराइड	5 ग्राम
आसुत पानी	1,000 एम एल
ब्रोमोक्रिसोल पपल	1 एम एल

(मिथेनोल म एक प्रतिशत घोल)

(2) डबल स्ट्रेंथ मीडियम बनाना और स्टरलाइज करना

डबल स्ट्रेंथ मीडियम बनाने के लिए 1,000 एम एल की जगह सिर्फ 500 एम एल आसुत जल ही लें और बाकी उपरोक्त सभी अवयव उतने ही मिलाए।

फ्लास्क म लिये गये अवयवो को गम करके घोलते हैं तथा उसे पी एच 7 2 पर समायोजित करते हैं। अब मीडियम को परखनलियो म समान रूप से वितरित करते हैं व हर एक नली मे ड्यूरहम्स ट्यूब को उल्टी अवस्था मे रख देते हैं। मीडियम की इन परख नलियो को 15 पौण्ड हवा के दबाव पर 20 मिनट तक ओटोक्लेव करते हैं। जब एक एम एल अथवा इससे भी कम पानी का नमूना मिलाना हो तो सिंगल स्ट्रेंथ मीडियम काम मे लाते हैं, जबकि 10 एम एल अथवा उससे अधिक नमूने के पानी को मीडियम मे मिलाना हो तो डबल स्ट्रेंथ मीडियम काम मे लेते हैं। इस माध्यम मे केवल कोलीफाम जीवाणु ही पनप कर वृद्धि कर सकते हैं। मीडियम मे उपस्थित सोडियम टाइरोकोलेट (बाइल साल्ट) दूसरे जीवाणुओं की वृद्धि को रोक देता है। आतो मे भी बाइल साल्ट पाया जाता है तथा ये कोलीफाम जीवाणु बाइल साल्ट की उपस्थिति म अपने आपको जीवित रख लेते हैं। कोलीफाम जीवाणु लेक्टोज को काम मे लेकर अम्ल और गस पदा करता है। अम्ल के कारण मीडियम का ब्रोमोक्रिसोल ब्ल्यू रग लाल नीले से पीले रग म बदल जाता है, जबकि गस ड्यूरहेम्स ट्यूब म इकट्ठी होकर इसे मीडियम की सतह पर ले आती है।

तनुकरण (Dilution) इसके लिये पाच ट्यूबो की व्यवस्था वाली विधि काम म लेते है। मीडियम की तयार की हुई कुल 15 परखनलिया लेते हैं। अब पहले सेट की डबल स्ट्रेंथ मीडियम की पाचो परख नलियो म से हर नली म 10 एम एल नमूने का पानी डालते हैं। दूसरे सेट की प्रत्येक मीडियम (सिंगल स्ट्रेंथ) वाली परखनली म एक एम एल नमूने का पानी डालते है। तीसरे सट की प्रत्येक मीडियम (सिंगल स्ट्रेंथ) वाली परख नली म सिफ 0 1 एम एल नमूने का पानी डालते है। इन सभी परखनलिया को 37° सी पर चौबीस घट तक रखकर नायूबेट करन ह तथा गस व बदल हुए रग की परखनलियो से परिणाम [illegible] कर [illegible]।

सभावित जीवाणुओ की सख्या (Most Probable Number) दर्ज किये हुए परिणाम के द्वारा मेक्क्रेडी टेबल से तुलना करके (परिशिष्ट द्वितीय) 100 एम एल पानी म उपस्थित जीवाणुओ की सख्या ज्ञात कर लेते हैं।

कन्फर्मेटरी परीक्षण (Confirmatory tests)

ऊपर किये गये परीक्षण की जिन परखनलियो मे अम्ल व गैस का होना दिखाई देता है उन परखनलियो मे से ई कोलाई के लिये कन्फर्मेटरी परीक्षण किया जाता है। इन परख नलियो मे से हर एक जीवाणुओ को दो ब्रीलयेन्ट ग्रीन बाइल ब्रोथ मीडियम की नलियो मे सब कल्चर किया जाता है। इनमे से एक नली को 30° सी व दूसरी को 40° सी पर 48 घण्टो के लिये इनक्यूबेट किया जाता है तथा इनका 8 और 24 घण्टो के पश्चात् ई कोलाई की बढोतरी के लिये देखा जाता है। ई कोलाई ही ऐसा जीवाणु है जो 44° सी पर लेक्टोस से अम्ल और गैस पैदा करता है। इसका पता लगाने के लिये 44° सी पर इ डोल पदा करने वाला परीक्षण भी लगाया जा सकता है।

ब्रीलयेन्ट ग्रीन लेक्टास बाइल ब्राथ —

पेप्टोन	10 ग्राम
लेक्टोस	10 ग्राम
सोडियम टाउरोकालेट	20 ग्राम
ब्रीलये ट ग्रीन	0 0133 ग्राम
आसुत पानी	1,000 एम एल

ऊपर दिये गये अवयवो को एक फ्लास्क म लेकर आसुत पानी मे घोलते है। इसका पी एच 7 2 पर सेट करन के बाद उसे परखनलियो मे भरते हैं और 15 पौण्ड हवा के दवाव पर 15 मिनट के लिये ओटोक्लेव द्वारा स्टरलाइज करते है।

मेम्ब्रेन द्वारा छानने की विधि (Membrane filtration technique)

यह विधि भी कोलीफाम जीवाणुओ का पता लगाने के लिये काम म ली जाती है। नमूने के पानी की निश्चित मात्रा सैल्युलोस एसीटेट मेम्ब्रेन के द्वारा छानी जाती है। जीवाणु इसकी ऊपरी सतह पर ही रह जाते है। इन्हे दो मेकान्की अगर मीडियम की सतह से छुआते है और मीडियम की पेट्री प्लेट को 24 घण्ट तक इनक्यूबेट करके परिणाम नोट कर लेते हैं। यह विधि दी गयी दूसरी विधियो के मुकाबले कम समय मे कोलीफाम जीवाणु का पता लगान म सक्षम है।

कम्प्लीटेड परीक्षण

यह परीक्षण क फर्मेटरी पराक्षण के बाद किया जाता है। इस परीक्षण स पानी क स्टरना नान न पहन आर नमके बाद न न वार ज नर रा अनुमान [illegible]

रग्मननी स ए। लूप (Loop) ब्रोथ को ईयोसिन मीथाइलिन ब्ल्यू की तयार की गई पेट्री प्लेट पर लगाते है। इस प्लेट को 24 घटे के बाद 35° सी पर इन्क्यूबेट करते हैं। मैटेलिक लस्टर देने वाली कालोनी को अगर मीडियम की नली पर और लेक्टोस ब्रोथ फरम टेशन वाली नली पर लगाकर इन्हे 35° सी पर 24 से 48 घटे के लिये इन्क्यूबेट करते हैं। मीडियम से स्लाइड तयार करके ग्राम स्टेन (Gram stain) करके उसकी सूक्ष्मदर्शी द्वारा जाच करते हैं। इस परीक्षण म लेक्टोस ब्रोथ मे गस का बनना, स्लाइड पर ग्राम नेगेटिव बिना स्पोर के जीवाणु का दिखाई देना, कोलीफाम जीवाणुओं के होने की सूचना देते हैं।

इयोसिन मीथाइलिन ब्ल्यू अगर	
पेप्टोन	10 ग्राम
डाइपोटेशियम फॉस्फेट K_2HPO_4	2 ग्राम
अगर	20 ग्राम
पानी म बना 20% लेक्टोस	50 एम एल
पानी मे बना 1% इयोसिन	40 एम एल
पानी मे बना 0 5% मीथाइलिन ब्ल्यू	13 एम एल
आसुत पानी	900 एम एल
पी एच –8 0	

मीडियम को ओटोक्लव द्वारा 15 पौण्ड पर 15 मिनट में स्टरलाइज करके पेट्री प्लेट मे डालें। इसके लिये पहले से तयार किया हुआ हाइड्रेटेट मीडिया भी काम मे लें तो अच्छा रहता है।

पानी का फीकल स्ट्रेप्टोकोकआई के लिये परीक्षण (Examination of water for faecal streptococci)

ये जीवाणु गोलाकार, ग्राम पोजेटिव, बिना स्पोर के और बडी या छोटी चेन (Chain) के रूप मे दिखाई देते हैं। मीडियम की प्लेट पर इन जीवाणुओ की कोलोनी ओस की बूदो जसी दिखाई देती है। यह जीवाणु चमडी, म्यूकस मेम्ब्रेन, दूध व मनुष्यो और जानवरो की आतो मे पाया जाता है। आतो मे रहने वाली किस्म हमेशा मल म पाई जाती है और इसे फीकल स्ट्रेप्टोकोकआई कहते हैं। इसकी सामान्य किस्म स्ट्रेप्टोकोकआई फीकलिस (मनुष्यो की), स्ट्रेप्टोकोकआई फीइसीयस (सूअर की), स्ट्रेप्टोकोकआई बोविस (गायो की) और स्ट्रेप्टोकोकआई इक्वाइन (घोडो की) है। इनको एन्टरोकोकआई भी कहते हैं और इन सभी किस्मो को लन सफील्ड क्लासिफीकेशन (Lancefield classification) द्वारा समूह डी (Group–D) का दर्जा दिया गया है।

परीक्षण की विधि (एम पी एन)

उपकरण परखनली का स्टेंड, 25 एम एल क्षमता की परखनलिया, 10,

1 और 0 1 एम एल के पिपेट, स्प्रिट लम्प, एन्टराकाकआई अनुमानित ब्रोथ मीडियम (सिंगल और डबल स्ट्रेंथ मीडियम), (सेन्ड होल्जर और विन्टर, Sandholzer and Winter)

(1) सिंगल स्ट्रेन्थ मीडियम बनाकर स्टरलाइज करना

ट्रीपटोन	5 ग्राम
यीस्ट्र एक्स्ट्रेक्ट	5 ग्राम
ग्लूकोज	5 ग्राम
सोडियम आजाइड	0 4 ग्राम
ब्रोमोथाइमोल ब्लू	0 32 ग्राम
आसुत पानी	1,000 एम एल

(2) डबल स्ट्रेंथ मीडियम बनाकर स्टरलाइज करना

इसे बनाने के लिये ऊपर लिखी सामग्रियो को तोलकर उसमे 1,000 एम एल आसुत पानी को जगह सिर्फ 500 एम एल आसुत पानी ही मिलाए।

सारी सामग्री को गम करके घोलते हैं और उसका पी एच 8 4 पर सेट करके ओटोक्लेव मे 15 पौण्ड पर 15 मिनट रखकर स्टरलाइज करत हैं। इस मीडियम द्वारा पीने के पानी, स्विमिंग पूल, गट्टर व अन्य दूषित पानी मे फीकल स्ट्रेप्टोकोकआई के होने का पता लगाते हैं। मीडियम को परखनलियो मे लेना, नमूने का पानी मिलाना, इनक्यूबेट करना, परिणाम लिखना व इसे मैक्क्रेडी टेबल (परिशिष्ट द्वितीय) से तुलना करके 100 एम एल पानी मे उपस्थित जीवाणुओ की सख्या आदि ठीक अनुमानित कोलीफाम की गणना की तरह ही ज्ञात करते हैं। परीक्षण के लिये मीडियम को 45° सी पर 24 घटे के लिये इन्क्यूबेट करते हैं और अम्ल व टरबीडिटी दोनो ही नोट करते हैं। अम्ल बनने के कारण मीडियम का रग ब्ल्यू से पीला हो जाता है। फीकल स्ट्रेप्टोकोकआई के लिये सोडियम आजाइड सामग्री बहुत ही उपयुक्त है।

पानी के मानक (यू के मिनिस्टरी आफ हैल्थ फार वाटर सप्लाई 1939)

पानी की श्रेणी	प्रति 100 एम एल पानी मे अनुमानित कोलीफाम जीवाणुओ की सख्या
अति सतोषप्रद	एक से कम
सतोषप्रद	एक से दो
सदेहास्पद	तीन से दस
असतोषप्रद	दस से ज्यादा

उपचारित पानी

सौ एम एल पानी को क्लोरीनेशन करने पर कोलीफाम जीवाणु समाप्त हो जाते हैं। कोलीफाम जीवाणुओ का एम पी एन एक से कम होना चाहिये।

अनुपचारित पानी

नब्बे प्रतिशत नमूनो म कोलीफाम जीवाणुओ का एम पी एन पूरे सालभर देखने पर दस से कम होता है।

स्विमिंग पूल का पानी

श्रेणी	प्रत्येक 100 एम एल मे औसत ई कोलाई
ए	0–50
बी	51–500
सी	501–1,000
डी	1,000 से ज्यादा

पानी का सूक्ष्मदर्शी यत्र द्वारा परीक्षण

सूक्ष्मदर्शी यत्र की सहायता स पानी म पाय जाने वाले हानिकर अविलेय खनिज पदार्थ, वनस्पति, जीवाणु और प्रवाल आदि का परीक्षण किया जाता है। ये सामान्य तौर पर आखो की सहायता से नही देखे जा सकते। परीक्षण के लिए पानी के नमूने को सेंट्रीफ्यूज करते हैं या उसके अभाव म पानी के नमूने को काच की बोतल मे 4 से 24 घटे तक बिना हिलाए रखते हैं। जब इस अवधि मे ठोस पदार्थ बोतल के पैंदे म पहुच जाय तो उसे बिना ज्यादा हिलाये उसमे से ऊपर का पानी बाहर निकाल देते हैं। बोतल के पैंदे से पानी की कुछ बूदें एक स्लाइड पर लेते हैं और उस पर सावधानी से एक कवर स्लिप रखकर सूक्ष्मदर्शी की सहायता से निम्न प्रकार से (चित्र 13) परीक्षा करते हैं –

1 जो पानी नदी, नालो व गहरे कुओ से लिया जाता है उसमे रेत के कोण-युक्त कण समूहो मे दिखाई देते हैं।

2 चिकनी मिट्टी (Clay) चिकनी मिटटी के कण गोल, चिकन, दानेदार व हरे रग के होते हैं। ये समूहो म भी मिल सकते हैं। तनुकृत हाइड्रोक्लोरिक अम्ल डालने म इन पर कुछ भी असर नही होता है।

3 खडिया मिट्टी (Chalk) यह चिकनी होती है और क्रिस्टल-युक्त दिखाई देती है। नमूने के साथ स्लाइड और कवर स्लिप के बीच मे तनुकृत हाइड्रोक्लोरिक अम्ल डालने पर इस मिट्टी के कण आखो से ओझल हो जाते हैं और गस के बुलबुले दिखाई देते हैं।

4 पानी मे अक्सर लोह के आक्साइड भी पाये जाते हैं। लोह पर पनपने वाले तत्वो जीवाणु पानी के नलो मे लोहे की दीवारो पर विकसित होते हैं और इस कारण लोह तत्वो के नलो से बाहर आ जाने से पानी का रग गदला हो जाता है। यह ललाईयुक्त भूरे भूरे पदार्थ के रूप मे दिखाई देता है। इनकी परीक्षा करने के लिए नमूने के पानी के साथ यानी कि कवर स्लिप और स्लाइड के बीच मे एक बूद पोटेशियम फेरो साय-नाइड की डालें। पानी के नमूने मे नीले रग का दिखाई देना लोहे की उपस्थिति बताता है। अगर अम्लीय पानी तावे के बतन मे रखा जाय तो वह अपने म ताबे को घोल लेता है। ताबा युक्त पानी की परीक्षा के लिए पोटेशियम फेरो सायनाइड

की कुछ बूद डालने से स्लाइड पर पानी मे चाकलेटी रग दिखाई देगा। यह पान म तावे के तत्वो के घुले होने का ज्ञान कराता है।

चित्र 13 पानी का सूक्ष्मदर्शी यत्र द्वारा परीक्षण। (I) मिट्टी, (II) चिकनी मिट्टी, (III) खडिया मिट्टी, (IV) लोह के आक्साइड, (V) गेलिओनेला बक्टीरिया, (VI) क्रिनोथ्रीक्स बक्टीरिया, (VII) शवाल, (VIII) यीस्ट्, (IX) फफूदी, (X) क्रस्टेशियन, (XI) प्रोटोजोआ, (XII) कीडा, (XIII) ऊन, (XIV) बाल, (XV) रूई और (XVI) रेशम।

5 पानी म शाक सब्जियो की गदगी, शवाल, फफूदी, लोहे पर विकसित होने वाले जीवाणु, मग्नीज जीव तथा क्रस्टेशियन और प्रोटोजोआ आदि पाये जाते हैं। इन जीवाणुओ को प्लेन्क्टन कहते हैं। इनके पानी म रहने से उसमे आपत्तिजनक रग, स्वाद और गध पैदा हो जाते हैं। ऐसा पानी प्रदूषण का द्योतक होता है। ऐसे पानी का जवाणविक परीक्षण करना चाहिये। छानने की विधि द्वारा पानी मे से बडे जीव तो हट जाते हैं परन्तु छोटे जीव जन्तु छने हुए पानी के साथ निकल जाते हैं।

6 प्रदूषण-युक्त छिछले कुओ व धरातल के पानी मे भेड की ऊन, बाल एव मास के रेशे भी पाये जा सकते हैं। ऐसे पानी मे कावनिक पदाथ की अशुद्धिया होने पर यह कहा जा सकता है कि यह नालियो म बहने वाली गन्दगी क द्वारा सदूषित पानी है। भेड के ऊन मे मड्यूला (भीतरी भाग) व कोरटेक्स (बाहरी भाग) होते

हैं व उसके दोनो ओर करोती जसे दातेदार रेशे भी दिखाई देते हैं, जबकि बालो मे मडयूला काफी गहरे रग का व बडा होता है और उसमे कोरटेक्स कम होता है तथा दातेदार रेशे नही होते हैं। इसकी सतह चिक्नी होती है। मडयूला विभिन्न रगो के भी पाये जाते हैं, तथा हवा की उपस्थिति के कारण उसका रग गहरा होता है। गदे पानी म फफूद भी पायी जाती है। सूक्ष्मदर्शी यत्र मे रूई के रेशे सांप के आकार मे मुडे हुए से दिखाई देते हैं तथा उनम मड्यूला का अभाव होता है और वे हमेशा समूह मे पाये जाते हैं।

13

वायु का जैविक परीक्षण

परिचय

विकास के वर्तमान दौर मे शहर, जनसख्या और उद्योगो को आश्रय देता है। सुविधा सम्पन्न स्थान की कमी और ठीक से सफाई का न होना, वातावरण मे जीवाणुओ की वृद्धि करता है। इसकी चपेट मे हर साल सैकडो हजारो लोग और जानवर आ रहे हैं। सूक्ष्मजीवी हवा मे प्रजनन नही कर सकते और हवा मे ज्यादातर उनकी वृद्धि मनुष्यो या जानवरो से ही होती है। जीवाणुओ का हवा मे उपस्थित होना प्रदूषण का सूचक है। ये स्वस्थ मनुष्यो एव पशुओ मे रोग उत्पन्न करते हैं और दूध, मास, अण्डे, पानी एव इनसे बनी खाद्य सामग्री का हवा के जीवाणुओ द्वारा सदूषण होता जाता है। हवा से फलने वाली कुछ सामान्य बीमारियो मे क्षय रोग, सेप्टिक सोर थ्रोट, एन्थ्रक्स न्युमोनिया मम्पस इन्फ्लूएजा, ओरनिथोसिस, रानी खेत और खुले घावो मे फलने वाले कुछ जीवाणु भी सम्मिलित हैं। हवा शुद्ध है या अशुद्ध, यह वहा के लोगो और पशुओ की सख्या वातावरण एव पेड-पौधो की सख्या पर निर्भर करती है। धूल म विद्यमान सूक्ष्मजीवी हवा द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर आसानी से पहुच जाते है। रहने के स्थान पर सूक्ष्मजीवी की अधिक सख्या म उपस्थिति यह जताती है कि उस स्थान पर गन्दी हवा की निकासी की समुचित व्यवस्था म कुछ कमी है तथा यह अत्यधिक प्रदूषण की सूचना देता है। सूक्ष्मजीवियो की सख्या म वृद्धि के साथ ही तापक्रम म वृद्धि आद्रता एव कार्बन डाइआक्साइड की मात्रा का वायुमण्डल मे अधिक होना प्रदूषण का सूचक है। ये सभी मनुष्यो तथा जानवरो के शरीर म रोग प्रतिरोध की क्षमता को कम करते हैं तथा इससे ऐसे दूषित वातावरण मे रहने वाला प्राणी रोगग्रस्त हो जाता है। घरो के अन्दर व्याप्त सूक्ष्मजीवी प्राय धूल के कणो, सास के साथ निकलने वाले पानी के कणो लार एव नाक से निकलने वाले स्राव के साथ हवा मे तरते रहते हैं। भारी पदार्थ जमीन पर जल्दी ही बठ जाते हैं, जबकि विकारजनक रोग के जीवाणु के उपर्युक्त हल्के कणो को जब कोई प्राणी श्वास के साथ ग्रहण करता है तो ये उसमे बीमारी पदा कर देते हैं।

उद्देश्य जीवाणुओ को हवा से अलग करके उसकी सख्या या किस्म ज्ञात करना।

विधियाँ

(1) जीवाणुओं को प्लेट विधि द्वारा स्थापित करना (Settle plate method)

पोषक अगर की दो प्लेटें लेते हैं और उनम से एक को कुछ निश्चित समय के लिए घर के अन्दर एव दूसरी को घर के बाहर आधा या एक मिनट तक खुला रखें। पोषक अगर बनाने की विधि हम पिछले अध्याय म लिख चुके हैं। दोनो प्लेटो को 37° सी पर 24 घटे तक इन्क्यूबेट करते हैं। फिर उसम उत्प न सूक्ष्मजीवाणुओ की कोलोनी की सख्या को गिनत हैं और जीवाणुओ के साथ कणो को आधा या एक मिनट (जितनी देर प्लेट खोली हो) तक 4 इच प्लेट पर 37° सी के हिसाब से व्यक्त करते हैं।

इस तरह से घर के अन्दर और बाहर खोली गयी प्लेटो के परिणाम का तुलनात्मक अध्ययन करके वायु प्रदूषण के स्तर का पता लगाया जा सकता है। यह एक साधारण विधि है, क्योकि प्लेट को खोलकर रखने पर सिफ बडे कण ही प्लेट पर आ पाते हैं।

(2) छिद्र द्वारा वायु का नमूना लेने की विधि (Slit sampler method)

इस विधि द्वारा हवा की एक निश्चित मात्रा को 25 मि मि आकार के छिद्र से गुजारा जाता है। यह हवा सीधी सवधन माध्यम की प्लेट पर गिरती है। फिर इस प्लेट को 37° सी पर 24 घण्टो तक इन्क्यूबेट करते हैं और उस पर आने वाल जीवाणुओं के कोलोनी की सख्या को गिन लेते हैं। इस विधि द्वारा एक घनफुट हवा म कणो के साथ चिपके हुए जीवाणुओ की सख्या का पता चल जाता है।

मान्य तुल्यता (Acceptable level)

उद्योगो, दफ्तरो व घरो म एक घनफुट क्षेत्रफल के लिये जीवाणु युक्त कणो की मान्य सख्या पचास है। जबकि शल्य चिकित्सा गृह के लिये इनकी मा य सख्या दस है।

हवा में व्याप्त सूक्ष्मजीवों को हटाना

नीचे दिये गये तरीको मे से कोई एक तरीका अपनाकर भवन की हवा से जीवाणुओ की सख्या म कमी की जा सकती है।

(1) प्रति 100 घनफुट जगह के लिये 1 5 औस फार्मेलिन और एक औस पोटेशियम परमैगनेट का रासायनिक घोल काम म ले सकते हैं। जो कमरा जीवाणु रहित करना हो उसे पूणतया ब द कर दें और एक बतन मे परमैगनेट के रवो पर फार्मेलिन डाले तथा इस काम म लगे व्यक्ति को शीघ्र ही कमरे के बाहर चला जाना चाहिये। कमरे को पूणतया ब द कर दें ताकि गस बाहर न निकल सके। कमरे को बारह घण्टे बाद खोलें और गस को बाहर निकलने दें।

(2) सोडियम हाइपोक्लोराइड का एक प्रतिशत घोल बनाकर कमरे में छिड़काव करने से जीवाणुओं की संख्या में कमी होती है।

(3) एक भाग ग्लिसरीन का छिड़काव करने से एक से 4 लाख भाग हवा को पूर्ण रूप से सूक्ष्मजीवियों से मुक्त किया जा सकता है।

(4) आयोनर (Ionaire) का उपयोग जीवाणुओं द्वारा वायु प्रदूषण के सम्भावित खतरे की रोकथाम के लिये आयोनर (चित्र 14) का उपयोग काफी
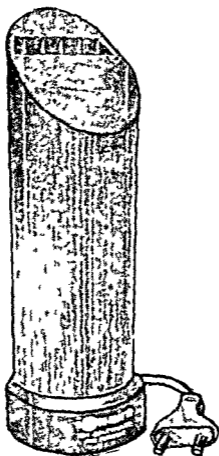
चित्र 14 आयोनर*

प्रभावकारी होता है। आयानर बिजली द्वारा सचालित किया जाता है। यह यन्त्र घरो मे सोने के या अन्य कक्ष, एयर कण्डीशन कक्ष, अस्पताल, नर्सिंग होम, क्लीनिक्स, कारखाना मे, डेयरी प्लाट, कार्यालयो, पाठशालाओ, प्रयोगशालाओ वाणिज्यिक प्रतिष्ठानो, जानवरो के रहने वाली जगहो जिसमे खासकर दूध दुहने का स्थान, कुक्कट शाला आदि स्थानो के लिए बहुत उपयोगी है। इसका उपयोग खासकर फेफडो के रोगो से ग्रस्त, मिट्टी, पराग (Pollen), जीवाणु और विषाणु द्वारा

* Available at M/s Emkaypee enterprises Marketing & Allied Services, Gandhi Chowk, Jodhpur-342001

एलर्जिक रोगियो (Allergic Patients) के लिये बहुत फायदेमद है। इस चौबीसो घण्टे चालू रखा जा सकता है। इसमे किसी तरह की आवाज भी नही होती। इसका उपयोग बन्द भवनो के लिये ज्यादा अच्छा है। इसका असर एक कमरे मे 30 मीटर तक रहता है, तथा यन्त्र इतने भाग म रहने वाले कणो को नेगेटिव चार्ज कर देता है, जिस कारण कण हवा म ठहर नही पाते हैं और फर्श पर आ जाते हैं। इस प्रकार वातावरण स कणो क साथ जीवाणु भी फर्श पर आ जाते हैं और उस स्थान का वातावरण काफी हद तक स्वच्छ हो जाता है।

कार्बन डाइआक्साइड की मात्रा ज्ञात करना

परिचय

सास क्रिया एक विधि है जिससे वातावरण और जीव के बीच गसो का आदान प्रदान होता है, जिससे इस क्रिया के दौरान सास द्वारा बाहर निकली वायु का रासायनिक व भौतिक परिवतन हो जाता है। पल्मोनरी शिराओ मे रक्त द्वारा आक्सीजन के ग्रहण करने व कावन डाइआक्साइड के छोडने स फेफडो से निकलने वाली हवा मे रासायनिक परिवतन होता है। हवा, जो सास की क्रिया द्वारा बाहर छोडते है उसम 16 4 प्रतिशत आक्सीजन व 4 24 प्रतिशत कावन डाइआक्साइड होती है, जबकि दूसरी गसो मे कोई परिवतन नही आता है। जुगाली करने वाले चौपाये जानवरो के सास द्वारा छोडी गई हवा मे आक्सीजन कावन डाइआक्साइड व नाइट्रोजन के अलावा मिथेन गस भी पायी जाती है। सास द्वारा छोडी गयी हवा मे भौतिक परिवतन उसके गम व हल्के होने से, आद्रता तथा इसके आयतन के बढने स होता है। यह हवा गम व हल्की होने के कारण ऊपर की तरफ उठती है जिससे इसका स्थान खिडकी या दरवाजे से भीतर आने वाली ठडी हवा ले लेती है। अत प्राय घरो म प्राकृतिक तरीके से वायु के आदान प्रदान का आधार यही है। हवा का आदान प्रदान अगर ठीक से नही होगा तो उस स्थान पर कावन डाइआक्साइड की मात्रा ज्यादा होगी तथा इसकी मात्रा मे वृद्धि हवा मे प्रदूषण का सूचक मानी जायेगी। इसलिये घरो म बढी हुई कार्बन डाइआक्साइड की मात्रा परोक्ष रूप से वहा की हवा के आदान प्रदान की प्रणाली की क्षमता का पता लगाने का एक आसान तरीका समझी जाती है। शुद्ध हवा कई गसा का मिश्रण है जिसमे पानी की वाष्प भी शामिल है। हवा मे निम्न आयतन से गसें पाई जाती हैं —

आक्सीजन	20 94 प्रतिशत
कावन डाइआक्साइड	0 028–0 04 प्रतिशत
ना॰ट्रोजन	78 04 प्रतिशत
आगन	0 94 प्रतिशत
आ॰ना	1 4 प्रनिशत

[illegible]

उद्देश्य भवन मे उपलब्ध कार्बन डाइआक्साइड गैस की प्रतिशत निकालना।

विधियां

कार्बन डाइआक्साइड गैस का प्रतिशत ज्ञात करने के लिये दो तरह के उपकरणो को काम मे ला सकते हैं—

(1) लग्स जैकोण्ड्रोफ उपकरण (Lung's Zecondroff Apparatus) और

(2) हल्दाने का इधर उधर ले जा सकने वाला उपकरण (Haldane's Portable Apparatus)

यहा सिर्फ पहली विधि की ही विस्तार से व्याख्या की जा रही है—

(1) लग्स जैकोण्ड्रोफ विधि

स्टाक घोल बनाना सोडियम कार्बोनेट का $\frac{N}{10}$ घोल बनाने के लिये उबाल कर ठडा किया हुआ 1,000 एम एल आसुत पानी लेकर उसमे 5 3 ग्राम सोडियम कार्बोनेट डालें। इस घोल मे एक ग्राम फिनोपथलीन मिलाएँ। इसके डालने पर घोल का रग गुलाबी हो जाता है। प्रयोग के वास्ते घोल बनाने के लिये स्टाक घोल की एक एम एल मात्रा लेकर उसमे इतना आसुत पानी (उबालकर ठडा किया हुआ) मिलाए कि घोल की मात्रा 100 एम एल हो जाए।

विधि प्रयोग के वास्ते काच की एक बोतल लेते है। उसे साबुन व पानी से धोते हैं और फिर उसे उबालकर ठडा किये हुए आसुत पानी से धोकर साफ करते हैं। इस साफ की हुई बोतल (चित्र 15) म 10 एम एल तनु किया हुआ सोडियम
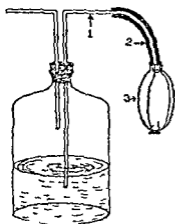
चित्र 15 लग्स जकोण्ड्राफ उपकरण। (1) काच की नली, (2) रबड की नली और (3) रबड का पम्प।

कार्बोनेट का घोल लेते है। अब बोतल के मुह पर रबड का काक लगाए। काक पर दो गोल छेद होते है जिनमे काच की मुडी हुई नलिया लगाते है। लम्बी काच की नली [illegible]

[illegible]

एक सिरा बोतल के अन्दर उसके आधे भाग तक ही उठा हुआ रहना चाहिये। इस नली का दूसरा सिरा हवा में खुला रहता है। इस प्रयोग को पहले भवन के बाहर खुले में किया जाता है। काच की लम्बी वाली नली में लगी रक्तचाप नापने वाले पम्प को दबाकर वायुमण्डल की हवा को बोतल के अन्दर प्रविष्ट करवाते हैं। प्रत्येक बार पम्प दबाने पर पम्प में आई हुई हवा घोल में से होती हुई बुलबुलों के रूप में बाहर निकलेगी। हर बार पम्प दबाने के बाद बोतल को अच्छी तरह हिलाते हैं जिससे बोतल में उपस्थित कार्बन डाइआक्साइड गस घोल में ठीक तरह से घुल जाये। पम्प दबाने और बोतल हिलाने की इस क्रिया को घोल के रंगहीन होने तक दोहराते हैं। इस क्रिया के लिये जितनी बार पम्प दबाया हो वह संख्या (ए) नोट कर लेते हैं। इस पूरी विधि के पीछे सिद्धान्त यह है कि घोल में कार्बन डाइआक्साइड का अवशोषण (Absorption) कराया जाता है। यह गस अम्लीय प्रकृति की होती है, अतः घोल के साथ क्रिया करने पर वह घोल को क्षारीय से अम्लीय कर देती है जिससे घोल रंगहीन हो जाता है।

अब बोतल को ऊपर लिखी गई विधि के अनुसार धोकर साफ कर लेते हैं। बोतल में फिर से 10 एम एल तनु किया हुआ सोडियम कार्बोनेट का घोल लेकर प्रयोग को भवन के अन्दर दोहराते हैं। वायुमण्डल की हवा को पम्प द्वारा बोतल के भीतर तब तक प्रविष्ट करवाते रहते हैं जब तक कि घोल रंगहीन न हो जाय। पम्प को इस दौरान जितनी बार दबाया गया हो वह संख्या (बी) नोट कर लेते हैं। अब नीचे दिये गये सूत्र की सहायता से भवन में पाई जाने वाली कार्बन डाइआक्साइड का प्रतिशत ज्ञात कर सकते हैं।

सूत्र

प्रति 10,000 वायु के भाग पर कार्बन डाइआक्साइड का भाग $डी = \frac{4ए}{बी}$

जबकि ए = भवन के बाहर खुली जगह पर जितनी बार पम्प दबाया गया हो वह संख्या।

बी = भवन के अन्दर जितनी बार पम्प दबाया गया हो वह संख्या।

4 = वायुमण्डल में निश्चित कार्बन डाइआक्साइड की सामान्य मात्रा।

$$कार्बन\ डाइआक्साइड\ की\ प्रतिशत = \frac{डी \times 100}{10\,000}$$

भवन में कार्बन डाइआक्साइड की मात्रा सामान्य से ज्यादा होने पर सांस क्रिया तेज हो जाती है। इसकी 5 प्रतिशत मात्रा होने पर आदमी हांपने लगता है।

आपेक्षिक आर्द्रता व ओस बिन्दु का अनुमान

परिचय

जब कोई प्राणी किसी कम हवादार भवन मे रहता है तो यह देखा गया है कि वहा के वायुमडल के तापक्रम और नमी मे बढोतरी होती है। यह शरीर के द्वारा निकली गर्मी व पानी के कारण होती है। अगर इसकी मात्रा भवन म बहुत ज्यादा बढ जाय तो शरीर से गर्मी निकलनी कम हो जाती है। अत उच्च वातावरणीय ताप विकिरण द्वारा शरीर से निकलने वाली ऊष्मा को घटा देता है तथा अधिक आद्रता शारीरिक वाष्पीकरण को कम कर देती है। अगर भवन मे वायु की गति ठीक से न हो तो शरीर से वाष्पीकरण और भी कम हो जाता है। दूसरे शब्दो म भवन के वायुमण्डल मे आद्रता के बहुत बढने से शरीर से ऊष्मा बाहर निकलनी स्थिर हो जाती है और इससे बेचनी बढ जाती है। इस कारण पशुओ म उत्पादन क्षमता भी कम हो जाती है। पशुघरो म आद्रता बढाने वाले अन्य स्रोत जसे मल और मूत्र का जमाव, घास का बिछौना तथा फर्श की धुलाई के लिये काम मे लिया गया पानी इत्यादि हैं। आद्रता को मापने से भवन के वे टीलेशन और वातावरण की उपयुक्तता का पता चलता है।

उद्देश्य

(1) आपेक्षिक आद्रता मापना (To measure the relative humidity)

(2) ओस बि दु को ज्ञात करना (To find out dew point)

परिभाषा

सम्पूर्ण आद्रता (Absolute Humidity) यह किसी निश्चित आयतन की वायु मे उपस्थित पानी के वाष्प का भार है।

आपेक्षिक आद्रता – यह किसी तापक्रम पर एक दिये गये आयतन की वायु म पानी के वाष्प की सम्पूर्ण मात्रा व उसी तापक्रम पर उतने ही आयतन की वायु को सतप्त करने के लिये आवश्यक पानी के वाष्प की मात्रा का अनुपात है।

$$\text{आपेक्षिक आद्रता} = \frac{\text{ओस बि दु पर सतृप्त वाष्पीय दबाव}}{\text{वायुमण्डलीय तापक्रम पर सतृप्त वाष्पीय दबाव}}$$

ओस बिन्दु

यह तापक्रम, जिस पर हवा से आद्रता टपकती है उसे ओस बिन्दु कहते हैं। परिवर्तनशील है तथा वातावरण म पानी के वाष्प की मात्रा पर निर्भर करता है।

उपकरण

स्लिगस साइक्रोमीटर या ह्वर्लिग हाइग्रोमीटर (चित्र 16),साइक्रोमिटि टेबल।
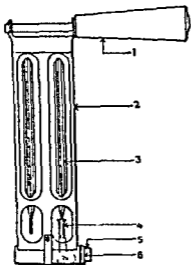
चित्र 16 ह्वर्लिग हाइग्रोमीटर (1) हेण्डिल, (2) लक का फ्रेम, (3) थर्मामीट (4) विग, (5) काक औ (6) प्लास्टिक की नली

विधि – मेसन टाइप हाइग्रोमीटर उपकरण मे गीले बल्ब वाला थर्मामीट स्थिर वायु का तापक्रम दर्ज करता है। सही परिणाम के लिये उपकरण के थर्मामी टर के बल्ब पर हवा गति से प्रवाहित होनी चाहिये और ह्वर्लिग हाइग्रोमीटर को काम म लेकर इस शर्त को पूरा किया जा सकता है। ह्वर्लिग हाइग्रोमीटर उपक रण मे लकडी के फ्रेम मे एक जोडी सेन्टीग्रेड अथवा फारेनहाइट तापक्रम बताने वाले थर्मामीटर लगे होते हैं। लकडी का यह फ्रेम एक हैण्डल से जुडा होता है जिसमे दोनो थर्मामीटरो को एक साथ तेजी से हवा मे घुमाते हैं। दो थर्मामीटर मे से नीचे वाले थर्मामीटर का बल्ब मलमल के कपडे से ढका रहता है। फ्रेम के दूसरे सिरे पर प्लास्टिक की एक नली लगी रहती है। इसे आसुत पानी से भरा जाता है। इसके एक छिद्र मे से विग को निकालकर मलमल के कपडे के पास सटाकर रखा जाता है। इससे थर्मामीटर पर लगा मलमल का कपडा गीला रहता है। परीक्षण के समय मलमल के कपडे को एक बार बाहर से आसुत पानी द्वारा गीला कर देना चाहिये।

ह्वरलिंग हाइग्रोमीटर उपकरण को हेंडिल से पकडकर तीस सकिण्ड तक हवा मे तेजी से घुमाते रहते हैं। इसके पश्चात् गील बल्ब वाले थर्मामीटर की रीडिंग सूखे बल्ब वाले थर्मामीटर से पहले दर्ज कर लेते हैं। आवश्यकतानुसार तीन या चार

रीडिंग लेते हैं यानि कि जब तक गीले बल्ब वाले थर्मामीटर की लगातार दो रीडिंग एक जैसी न आ जाए। इससे यह पता चलता है कि यह अपने न्यूनतम तापक्रम पर पहुच गया है। शुष्क एव गीले बल्ब के थर्मामीटर की रीडिंग लिख लेते हैं। थर्मामीटर का बल्ब लगभग 600 फीट प्रति मिनट की गति से घूमना चाहिये।

शुष्क व गीले बल्ब के तापक्रम के अन्तर को डिप्रेसन कहते हैं। चार्ट की सहायता से डिप्रेसन व शुष्क बल्ब की रीडिंग काम मे लेते हुए आपेक्षिक आद्रता ज्ञात कर लेते हैं (परिशिष्ट III) तथा ओस बिन्दु सारिणी की सहायता से ज्ञात कर लिया जाता है।

किसी अच्छे हवादार भवन की आपेक्षिक आद्रता उस भवन के बाहर की वायु की आपेक्षिक आद्रता से पाच प्रतिशत से ज्यादा नही होनी चाहिये।

16

हवा की शीतलन शक्ति एव वायु-वेग का अनुमान

परिचय

भवन मे हवा के सही आवागमन का मुख्य उद्देश्य उसमे व्याप्त ऊष्मा को नियत्रित रखना है। शरीर म ऊष्मा बराबर बनती रहती है। शरीर के तापमान को सामान्य बनाये रखने के लिये इसकी कुछ मात्रा का शरीर से निकलना जरूरी होता है। कम हवादार घरो म हम कुछ प्रतिकूलता का अनुभव करते हैं, क्योकि उसम हवा रुकी हुई होती है। ठडे वातावरण म जब शरीर स पसीना नही निकलता है तब शरीर की उष्मा विकिरण द्वारा और ठडी हवा के शरीर को छूकर निकलते रहने से बाहर निकलती है। इस प्रकार शरीर से जो ऊष्मा निकलती है उसका हम बराबर पता लगता रहता है। गर्मी के मौसम म या ज्यादा परिश्रम करने पर शरीर से बहुत पसीना निकलता है और इस प्रकार शरीर स ऊष्मा निकलती है। जब वातावरण का तापक्रम शरीर के तापक्रम से ज्यादा होता है उस समय शरीर से ऊष्मा के निकलने म गिरावट आती है तथा ऊष्मा का निकास वाष्पीकरण द्वारा होता है। इसे हम गुप्त उष्मा का ह्रास कहते हैं। ऊष्मा की मात्रा म गिरावट का पता लगाने से भवन के वेन्टीलेशन की क्षमता का ज्ञान आसानी से लगाया जा सकता है। जिस दर से ऊष्मा की मात्रा मे गिरावट आती है उसे वातावरण की शीतलन शक्ति कहा जाता है। वायुमण्डलीय हवा को ठडा करने की शक्ति को मापने के लिये कटा थर्मामीटर का प्रयोग किया जाता है। कटा थर्मामीटर सीधे ही वायु के अदान प्रदान को दरसाता है। अत इस उपकरण की सहायता स वेन्टीलेशन की काय प्रणाली का पूण रूप से पता लगाया जा सकता है।

उद्देश्य

(1) हवा की शीतलन शक्ति का पता लगाना।

(2) हवा के वेग का पता लगाना।

शीतलन शक्ति

उपकरण कम और ज्यादा सीमा वाले कटा थर्मामीटर व कटा चाट।

कम सीमा वाले कटा थर्मामीटर इसका आविष्कार सर लियोनार्ड हिल ने किया था। थर्मामीटर का मुख्य उद्देश्य वायुमण्डल की हवा की शीतलन शक्ति को

मापना है और इसके द्वारा शरीर की ऊष्मा ह्रास का पता लगाया जा सकता है। यह एक स्प्रिट थर्मामीटर (चित्र 17) है जिसमे एक बल्ब 4 से मी लम्बा व 2 से मी

व्यास का होता है। इस बल्ब मे लाल रंग का एल्कोहल भरा रहता है। इसके ऊपर जुडी हुई 5 से मी लम्बी काच की एक नली होती है और उसके अंतिम सिरे पर सेफ्टी बल्ब लगा रहता है। थर्मामीटर की इस नली पर 100° एफ तथा 95° एफ के दो निशान अंकित रहते है। इस नली पर एक 'एफ'' फैक्टर भी अंकित रहता है जो प्रत्येक उपकरण के लिये निश्चित होता है। जब एल्कोहल 100° एफ से 95° एफ पर ठडा होकर लम्बी नली मे नीचे उतरता है तब यह फैक्टर प्रति वर्ग से टीमीटर पर मिलिकलोरी मे ऊष्मा के हानि को दिखाता है जो कि बल्ब के कुल क्षेत्रफल से भाग देने से ज्ञात होता है। कटा थर्मामीटर को गीला करके काम मे लेने के लिये उसके बल्ब पर रेशम के कपडे की टोपी चढा देते हैं और इसके बाद जो रीडिंग लेते है उसे गीली कटा रीडिंग कहते है। भवन मे आरामदायक वातावरण का पता लगाने के लिये शुष्क और गीले कटा शीतलन शक्ति का साथ साथ पता लगाना जरूरी होता है।

चित्र 17 कटा थर्मामीटर

उच्च सीमा का कटा थर्मामीटर यह कटा थर्मामीटर भी कम सीमा वाले कटा थर्मामीटर जैसा ही बना हुआ होता है लेकिन इसके बल्ब मे नीले रंग का एल्कोहल भरा रहता है। इसकी नली पर 130° एफ व 125° एफ के दो निशान अंकित होते हैं। भवन मे हवा की शीतलन शक्ति का पता लगाने के लिये जब वायुमण्डल का तापक्रम 100° एफ से कम हो तो कम सीमा वाला कटा थर्मामीटर काम मे लेते हैं और अगर वायुमण्डल का तापक्रम 100° एफ से ज्यादा हो तो उच्च सीमा वाला कटा थर्मामीटर काम मे लेते हैं।

विधि कटा थर्मामीटर को एक स्टैण्ड से लटकाकर उसके बल्ब को तब तक गुनगुने पानी के अ दर डुबोये रखते है जब तक कि एल्कोहल इसके बल्ब तक न पहुच जाय। शीघ्र ही पानी को हटाकर बल्ब के बाहरी भाग को एक साफ कपडे के द्वारा पाछ लेते हैं तथा विराम घडी (Stop watch) को चालू कर देते है और एल्कोहल के ऊपर वाले निशान से नीचे वाले निशान तक जाने मे लिया गया समय अंकित कर लेते हैं। पहली रीडिंग को छोडकर बाकी तीन रीडिंगो का औसत (टी) लेते है। फैक्टर "एफ" को ऊपर ली गयी रीडिंग से भाग देने पर शुष्क कटा रीडिंग प्राप्त हो जाती है। इसको मिलिकलोरीज प्रति वर्ग से मी प्रति सेकण्ड से दरसाते हैं (1,000 मिलिकलोरी=1 ग्राम कलोरी)। गीले कटा रीडिंग लेने के लिए थर्मामीटर के बल्ब पर रेशम के कपडे का खोल चढा देते है और रीडिंग लेने के लिए उपर्युक्त विधि को दोहराते है। पहली रीडिंग को छोड देते हैं और बाकी ली गयी तीन

रीडिंगो का औसत निकाल लेते हैं।

$$\text{शीतलन शक्ति} = \frac{\text{एफ}}{\text{टी}}$$

जबकि F= कटा फक्टर

T= एल्कोहल द्वारा ऊपर के निशान से नीचे के निशान तक आने मे लिया गया औसत समय।

कटा थर्मामीटर के स्तर के मानक आरामदायक पशुघरो म शुष्क कटा की अनुक्रमणिका का औसत 6 होता है और इसकी सीमा 4 स 8 तक है। गीले कटा थर्मामीटर की औसत अनुक्रमणिका 18 है तथा इसकी सीमा 16 से 20 तक होती है।

वायु वेग

वायु वेग का पता लगाने के लिये थर्मामीटर स मिलान करते हुए कटा चार्ट का प्रयोग करते हैं। वायुमण्डलीय तापक्रम की रीडिंग भी लिख लेते हैं। वायुमण्डलीय तापक्रम तथा शुष्क कटा रीडिंग को जोडते हुए समय के लिये एक रेखा खीचते हैं और यदि समय बढा दिया जाय तो यह वायु वेग को फीट प्रति मिनट मे दरसाता है।

परिशिष्ट—I

पानी के परीक्षण के लिये काम मे आने वाले रीएजे ट्स (Reagents) को तयार करना —

1 अमोनिया परीक्षण के लिये रीएजेन्ट

नेस्लरस रिएजेन्ट

एक फ्लास्क म 100 ग्राम मरक्युरिक आयोडाइड व 70 ग्राम पोटेशियम आयोडाइड लें और 400 एम एल आसुत पानी डालकर कुछ देर तक हिलाए। अब 500 एम एल आसुत पानी मे 100 ग्राम सोडियम हाइड्रोआक्साइड को घोलें और ठडा होने पर उसे ऊपर तयार किये गये घोल मे मिलाएँ। इस मिश्रण म आसुत पानी मिलाकर कुल एक लीटर घोल बनाएँ। जब इसमे आया लाल अवक्षेप नीचे बठ जाय तो ऊपर के घोल को अलग निकाल कर प्रयोग क लिये काम म लें।

2 क्लोराइड परीक्षण के लिये रीएजेन्ट

सिल्वर नाइट्रेट का घोल

इसे बनाने के लिये 396 ग्राम सिल्वर नाइट्रेट को एक लीटर आसुत पानी म घोलें।

3 सल्फेट परीक्षण के लिये रीएजेन्ट

बेरियम क्लोराइड का घोल

इसे बनाने के लिये 10 ग्राम बेरियम क्लोराइड को 100 एम एल आसुत पानी म घोलते हैं।

4 नाइट्राइट परीक्षण के लिये रीएजेन्ट

(1) सल्फानेलिक अम्ल

इसे बनाने के लिये 0 60 ग्राम सल्फानेलिक अम्ल को 70 एम एल गम आसुत पानी मे मिलावें और ठडा होने पर 20 एम एल सान्द्र सल्फ्यूरिक अम्ल डालें। इस घोल म आसुत पानी मिलाकर इसकी मात्रा 100 एम एल कर लें।

(11) नेप्थलमीन हाइड्रोक्लोराइड रीएजेन्ट

एक एम एल सान्द्र सल्फ्यूरिक अम्ल मिले आसुत पानी म 0 60 ग्राम

1–नेफ्थलमीन हाइड्रोक्लोराइड मिलाएँ। इसमे आसुत पानी मिलाकर घोल की मात्रा 100 एम एल कर ले। वह रंगहीन हो जाये तब उसे एक सप्ताह तक रखें। अगर परीक्षण सही परिणाम न दे तो उसे काम मे न लावें। ज्यादा समय तक काम मे लेने के लिये उसे रेफ्रीजरेटर मे रखना चाहिये। काम मे लेने से पहले उसे छान लें।

5 फ्लोरीन परीक्षण के लिये रीएजेन्ट

फेरिक क्लोराइड का घोल

इसे बनाने के लिये 100 ग्राम फेरिक क्लोराइड को 39 एम एल आसुत पानी मे मिलाएँ।

6 पानी की कठोरता के परीक्षण के लिये रीएजेन्ट

(i) इथाइलीन डाइअमीन टेट्रा एसीटिक अम्ल (ई डी टी ए) का घोल

इसे तयार करने के लिये 3 722 ग्राम ई डी टी ए को एक लीटर आसुत पानी मे घोलें।

(ii) अमोनिया बफर का घोल

इसे बनाने के लिये 16 9 ग्राम अमोनियम क्लोराइड को 143 एम एल द्रव अमोनिया मे मिलाएँ और आसुत पानी मिलाकर घोल की मात्रा 250 एम एल करें।

(iii) यूरोक्रोम ब्लक टी

0 5 ग्राम यूरोक्रोम ब्लक टी को 100 एम एल एबसोल्यूट एल्कोहल मे मिलाकर बनाए।

7 क्लोराइड के (क्वांटीटेटिव) परीक्षण के लिये रीएजेन्ट

(i) सिल्वर नाइट्रेट का घोल

इसे बनाने के लिये 4 791 ग्राम सिल्वर नाइट्रेट को एक लीटर आसुत पानी मे घोल। एक एम एल घोल एक भाग क्लोराइड के बराबर होगा।

(ii) पोटेशियम क्रोमेट का घोल

इसे बनाने के लिये 5 0 ग्राम पोटेशियम क्रोमेट को 100 एम एल आसुत पानी मे उबाल कर घोल तयार करे। जब यह ठडा हो जाये तब सिल्वर नाइट्रेट का घोल, इसमें लाल रंग का अवक्षेप आने तक डालते रहे। घोल को छानकर परीक्षण के काम में लें। इसे काच की रंगीन ढक्कन वाली बोतल में ही रखें।

8 नाइट्राइट के क्वांटीटेटिव परीक्षण के लिये रीएजेन्ट

(i) इथाइलीन डाइअमीन टेट्रा एसीटिक अम्ल (ई डी टी ए) का घोल

इसे तयार करने के लिये 0 5 ग्राम ई डी टी ए को सौ एम एल आसुत पानी में घोलें।

(ii) सल्फानिलिक अम्ल रीएजेंट

सल्फानिलिक अम्ल की 0 60 ग्राम मात्रा को 70 एम एल गम आसुत पानी म मिलाकर घोलें। जब वह ठडा हो जाये तब उसमें 20 एम एल सा द्र हाइड्रो क्लोरिक अम्ल मिलाए और उसमें कुछ आसुत जल मिलाकर घोल की मात्रा सौ एम एल कर लें।

(iii) नेप्थलमीन हाइड्रोक्लोराइड का घोल

आसुत जल की 99 एम एल मात्रा मे 0 60 ग्राम 1–नेप्थलमीन हाइड्रो क्लोराइड घालें और उसम एक एम एल सान्द्र हाइड्रोक्लोरिक अम्ल मिलाए। उस घोल को छान कर काम में लाएँ और हमेशा रेफ्रिजरटर म ही रखें।

(iv) साडियम एसिटेट बफर का घोल, 2 एम

इस बनाने के लिये 16 4 ग्राम $NaC_2H_3O_3$ ले तथा उस आसुत पानी मे घोले और उसकी मात्रा सौ एम एल कर लें। इसे उपयोग में लाने से पूव छानना चाहिये।

(v) सोडियम नाइट्राइट का घोल

इस बनाने के लिये साडियम नाइट्राइट की 1 322 ग्राम मात्रा लेकर उस कुछ भाग आसुत पानी मे घोल लें और उसम आसुत पानी और मिलाते हुए घोल की मात्रा 1,000 एम एल कर लें। इसमे एक एम एल क्लोराफाम मिलाकर रखन से यह सुरक्षित रहता है, 1 00 एम एल =0 25 मि ग्राम एन। जब घोल को काम म लेना हो तो, 10 एम एल नाइट्राइट का घोल लें और उसमे आसुत पानी मिलाते हुए कुल मात्रा 1 000 एम एल कर लें। एक एम एल घोल=0 500 μgN और परीक्षण करने के समय घोल का उसी समय बनाकर तयार करें।

9 नाइट्रेट के क्वाटीटेटिव परीक्षण के लिये रीएजेंट

(i) सिल्वर सल्फेट का घोल

इस घोल को तयार करने के लिय 4 40 ग्राम सिल्वर सल्फेट को 1,000 एम एल आसुत पानी म मिलावे। एक एम एल = एक मि ग्राम क्लोराइड।

(ii) फिनोल डाइसल्फोनिक अम्ल का रीएजेंट

\ इसे बनाने के लिये 25 ग्राम सफेद फीनोल (C_6H_5OH) लें और उसम 150 एम एल सान्द्र सल्फ्यूरिक अम्ल मिलाएँ, 75 एम एल सल्फ्यूरिक अम्ल गम करें और उसमे जब धूआ उठने लगे (15 प्रतिशत मुक्त SO_3) तब उसे घोल मे डाल कर मिलाएँ। इस घोल को दो घटे तक गम पानी के टब म रख कर गम होने दें।

(iii) 12 एन पोटेशियम हाइड्रोआक्साइड का घोल

इस घोल को तयार करने के लिये 673 ग्राम पोटेशियम हाइड्रोआक्साइड

का कुछ भाग आसुत पानी मे मिलाए। यह जब घुल जाय तब इसम आसुत पानी मिलाते हुए घोल की मात्रा एक लीटर कर लें।

(iv) नाइट्रेट का मुख्य घोल

0 7218 ग्राम एनहाइड्रस पोटेशियम नाइट्रेट लें और इसमे आसुत पानी मिलाते हुए घोल की कुल मात्रा 1,000 एम एल कर लें, इसम 100 मि ग्राम प्रति एक एन होती है।

(v) स्टेण्डड नाइट्रेट का घोल

50 एम एल मुख्य नाइट्रेट घोल लें और उसका सारा पानी वाष्प के द्वारा उडा दें। पैंदे मे बचे रसायन को 2 एम एल फिनोल डाइसल्फोनिक अम्ल रीएजेन्ट मिलाकर घोलें और उसमे आसुत पानी मिलाकर घोल की मात्रा 500 एम एल कर लें। एक एम एल =10 00 मि ग्राम एन=44 3 μgNO_3

10 फ्लोराइड के क्वाटीटेटिव परीक्षण के लिये रीएजेन्ट

(i) एलिजरीन लाल रीएजेन्ट

इसे तयार करन के लिये 0 75 ग्राम 3–एलिजरीन सल्फ्यूरिक अम्ल सोडियम साल्ट (Alizarin red S)को 1,000 एम एल आसुत म घोलें।

(ii) जरकोनिल अम्ल रीएजेन्ट

0 354 ग्राम जरकोनिल क्लोराइड ओक्टाहाइड्रेट ($ZrOCl_2$ $8H_2O$) को 600 एम एल आसुत पानी म मिलाए। इसम 33 3 एम एल सान्द्र सल्फ्यूरिक अम्ल और 101 एम एल सान्द्र हाइड्रोक्लोरिक अम्ल मिलाएँ। इन दोनो अम्ल को घोल मे थोडा थोडा डालें और धीरे धीरे हिलाते रहें। इसमे आसुत पानी मिलाकर घोल की मात्रा एक लीटर कर लें तथा इसे एक घटे बाद काम मे लें।

(iii) सोडियम फ्लोराइड का घोल

0 221 ग्राम सोडियम फ्लोराइड को एक लीटर आसुत पानी मे मिलाकर घोल तयार करें। परीक्षण करने के वक्त बनाये गये घोल की 100 एम एल मात्रा लेकर उसमे 900 एम एल आसुत पानी मिलाकर काम म लाए। एक एम एल घोल 10 0 μgF के बराबर होता है।

11 बी ओ डी के परीक्षण के लिये रीएजेन्ट

(i) तनु करन के लिये पानी

इस परीक्षण के लिये काम म लिए जाने वाले पानी मे क्लोरीन, क्लोरामीन, क्षार और अम्ल की मात्रा बिल्कुल ही नही होनी चाहिये तथा इसमे ताबे की मात्रा 0 01 मि ग्राम प्रति लीटर से कम होनी चाहिये।

(ए) फॉसफेट बफर

पोटेशियम डाइहाइड्रोजन आरथोफासफेट (KH_2PO_4) 8 5 ग्राम

पोटेशियम फॉसफेट डाइबेसिक (K_2HPO_4) 21 75 ग्राम

सोडियम फॉसफेट डाइबेसिक (Na_2HPO_4) 33 4 ग्राम

अमोनियम क्लाराइड (NH_4Cl) 1 7 ग्राम

इन सभी रसायनो को एक लीटर आसुत पानी म घोलें और उसका पी एच 7 2 स्थापित करें।

(बी) मैगनीसीयम सल्फट का घोल

22 5 ग्राम मैगनीसीयम सल्फेट को एक लीटर आसुत पानी म घोलें।

(सी) कलिशयम क्लोराइड का घोल

27 5 ग्राम एनहाइड्रस कलिशयम क्लोराइड को एक लीटर आसुत पानी मे घोलें।

(डी) फेरिक क्लोराइड का घोल

इसे बनाने के लिये 0 25 ग्राम फेरिक क्लोराइड को एक लीटर आसुत पानी म घोलें।

तनुकरण के लिये जो पानी बनाया जाता है उसके लिये उपरोक्त ए बी, सी और डी तयार किये घाल की एक एक एम एल मात्रा लें और उसम आसुत पानी मिलाकर एक लीटर घोल तयार करें। मशीन द्वारा उसम हवा प्रवाहित करके काम म लें।

(ii) सान्द्र सल्फ्यूरिक अम्ल

इस अम्ल की शक्ति 36 एन होती है इसलिये इसका एक एम एल एलकली आयोडीन घोल की 3 एम एल मात्रा के बराबर होता है।

(iii) सोडियम थायोसल्फेट का घोल($\frac{N}{80}$)

24 82 ग्राम सोडियम थायासल्फेट को एक लीटर आसुत पानी मे घोले($\frac{N}{10}$) परीक्षण करने के समय ($\frac{N}{80}$) 125 एम एल घोल लें और उसमे आसुत पानी मिलाकर उसकी मात्रा 1,000 एम एल कर लें। इसमे पोटेशियम क्रोमेट की मात्रा मिलाकर स्टेन्डराइज करें तथा इसके लिये स्टाच घोल को इन्डीकेटर के रूप मे काम मे लाएँ।

(iv) पोटेशियम डाइक्रोमेट का घोल (0 025 एन)

पोटेशियम डाइक्रोमेट को 103° सी पर दो घटे तक रख कर सुखाए और इसके 1 226 ग्राम को एक लीटर आसुत पानी म घोलें।

(v) स्टाच का घोल

इसे बनाने के लिये 6 ग्राम स्टाच को 20 एम एल पानी म डालें और

हिलाकर घोलें। इस 980 एम एल उबलते हुए आसुत पानी म डालें और कुछ समय तक उबलता रहने दें। उसे ठडा करके रात भर के लिये रेफ्रिजरेटर म रखें। इसके ऊपर के पानी को धीरे धीरे निकाल कर अलग करें और उसमे 1 25 ग्राम सेलिसिलिक अम्ल या कुछ बूदें टोलउईन की मिलाकर उसे सुरक्षित स्थान पर रखें।

(vi) एलकली आयोडीन का घोल

सोडियम हाइड्रोआक्साइड	500 ग्राम
पोटेशियम आयोडीन	150 ग्राम
सोडियम एजाइड	10 ग्राम

इन सभी को आसुत पानी मे घोलें और इसकी मात्रा 1,000 एम एल करे। इस रीएजेन्ट को जब स्टाच के घोल के साथ तनु किया जाय या अम्लीय किया जाय तब किसी भी तरह का रग पदा नही होना चाहिय।

(vii) मैंगनस सल्फेट का घोल

480 ग्राम $MnSO_4, 4H_2O$ या 354 ग्राम $MnSO_4 H_2O$ को आसुत पानी मे घोलें और इसकी मात्रा एक लीटर करें।

12 केमीकल आक्सीजन डिमाण्ड के लिये रीएजेन्ट

(i) पोटेशियम डाइक्रोमेट का घोल (0 25 एन)

12 25 ग्राम पोटेशियम डाइक्रोमेट को एक लीटर आसुत पानी म घोल।

(ii) फेरोइन इन्डीकेटर का घोल

1 485 ग्राम 1,10– फीनेनथ्रोलीन (मोनोहाइड्रेट) और 0 695 ग्राम फेरस सल्फेट ($FeSO_4 7H_2O$) को 100 एम एल आसुत पानी म घोलें।

(iii) फेरस अमोनियम सल्फेट का घोल (0 25 एन)

98 ग्राम फेरस अमोनियम सल्फेट को 100 एम एल आसुत पानी म घोलें और उसमे 20 एम एल सान्द्र सल्फ्यूरिक अम्ल मिलाएँ। जब वह ठडा हो जाय तब उसमे कुछ आसुत पानी और मिलाकर घोल की मात्रा एक लीटर कर लें। परीक्षण के समय उस घोल को हमेशा पोटेशियम डाइक्रोमेट घोल से स्टेन्डराइज करते हैं। इसके लिय 25 एम एल पोटेशियम डाइक्रोमेट घोल को 250 एम एल तक तनु करके उसमे 20 एम एल सान्द्र सल्फ्यूरिक अम्ल मिलाए। जब वह ठडा हो जाय तब उसम 3 से 6 बूदें फेरोइन इडीकेटर की मिलाकर उसे फेरस अमोनियम सल्फेट के घोल से टाइट्रेट करें।

$$\text{फेरस अमोनियम सल्फेट की नारमलेटी} = \frac{\text{जितना एम एल पोटेशियम डाइक्रोमेट का घोल लिया} \times 0\ 25}{\text{जितना एम एल फेरस अमोनियम सल्फेट टाइट्रेसन के दौरान काम मे आया}}$$

(iv) सा द्र सल्फ्यूरिक अम्ल 98 प्रतिशत

(v) सिल्वर सल्फेट के कण

13 लोहे व तांबे के परीक्षण के लिये रीएजेन्ट

पोटशियम फेरो सायनाइड का घोल

इस बनाने के लिये 8 ग्राम पोटेशियम फेरो सायनाइड को 100 एम एल आसुत पानी मे घोलकर उसे छान लें।

14 सीसे के परीक्षण के लिये रीएजेन्ट

पोटेशियम आयोडाइड का घोल

इस 25 ग्राम पोटेशियम आयोडाइड पाउडर को 50 एम एल आसुत पानी मे घोल कर बनाया जाता है।

परिशिष्ट–II

सभावित सारणी (मेक्कारडी)

पानी की मात्रा	10 एम एल	1 एम एल	0 1 एम एल *		पानी की मात्रा	10 एम एल	1 एम एल	0 1 एम एल *	
पानी की हर एक मात्रा के नमूनो वा परीक्षण	5	5	5		पानी की हर एक मात्रा के नमूनो का परीक्षण	5	5	5	
1	2	3	4	*	5	6	7	8	*
स्पष्ट प्रतिक्रिया बताने वाले नमूनो की सख्या (अम्ल एव गैस)	0	0	0	0	+पष्ट प्रतिक्रिया बताने वाले नमूनों की सख्या (अम्ल एव गैस)	4	0	0	13
	0	0	1	2		4	0	1	17
	0	0	2	4		4	0	2	20
	0	1	0	2		4	0	3	25
	0	1	1	4		4	1	0	17
	0	1	2	6		4	1	1	20
	0	2	0	4		4	1	2	25
	0	2	1	6		4	2	0	20
	0	3	0	6		4	2	1	25
	1	0	0	2		4	2	2	30
	1	0	1	4		4	3	0	25
	1	0	2	6		4	3	1	35
	1	0	3	8		4	3	2	40
	1	1	0	4		4	4	0	35
	1	1	1	6		4	4	1	40
	1	1	2	8		4	4	2	45
	1	2	0	6		4	5	0	41
	1	2	1	8		4	5	1	50
	1	2	2	10		4	5	2	55
	1	3	0	8		5	0	0	25
	1	3	1	10		5	0	1	130
	1	4	0	11		5	0	2	45

1	2	3	4	*	5	6	7	8	*
	2	0	0	5		5	0	3	60
	2	0	1	7		5	0	4	70
	2	0	2	9		5	0	0	35
	2	0	3	12		5	1	1	45
	2	1	0	7		5	1	2	65
	2	1	1	9		5	1	3	85
	2	1	2	12		5	1	4	115
	2	2	0	9		5	2	0	50
	2	2	1	12		5	2	1	70
	2	2	2	14		5	2	2	95
	2	3	0	12		5	2	3	120
	2	3	1	14		5	2	4	150
	2	4	0	15		5	2	5	175
	3	0	0	8		5	3	0	80
	3	0	1	11		5	3	1	110
	3	0	2	13		5	3	2	140
	3	1	0	11		5	3	3	175
	3	1	1	14		5	3	4	200
	3	1	2	17		5	3	5	250
	3	1	3	20		5	4	0	130
	3	2	0	14		5	4	1	170
	3	2	1	17		5	4	2	225
	3	2	3	20		5	4	3	275
	3	3	0	17		5	4	4	350
	3	3	1	20		5	4	5	425
	3	4	0	20		5	5	0	250
	3	4	1	25		5	5	1	353
	3	5	0	25		5	5	2	550
						5	5	3	900
						5	5	4	1600
						5	5	5	1800+

* कोलीफाम जीवाणुओ की 100 एम एल पानी म सम्भावित सख्या।

परिशिष्ट–III

गीले और शुष्क बल्ब हाईग्रोमीटर की सारणी (वे टीलेटेड किस्म का हाईग्रोमीटर)
सूची के रूप में दी गयी आपेक्षिक आर्द्रता की दर*

गीले बल्ब में डिप्रेसन °C में	0	3	5	6	9	10	12	15	18	20	21	24	25	27	30	33	35	36	39	40
0 5°C	90	92		94	94		94	95		96		96		96	96	96		97	97	
1	81	84	87	87	88	88	89	90	90	90	91	92	92	93	93	93	93	93	94	94
1 5	71	76		80	82	83	84	85	86		87	88		90	90	90		90	91	
2	64	69	72	73	76	76	78	80	82	82	83	85	85	86	86	86	87	87	88	88
2 5	55	62		66	70		73	76	78		79	81		82	82	83		84	85	
3	46	54		60	65		68	71	73		75	77		79	79	80		81	85	
3 5	38	46		54	59		63	66	69		71	74		76	76	77		78	79	
4	29	40		47	53		58	62	65		67	70		72	73	74		75	76	
4 5	21	32		41	48		53	58	61		64	66		68	70	71		72	74	
5	13	25	33	35	42		48	53	57	59	60	63	63	65	67	68	70	70	71	72
6		12	21	23	32	34	38	44	52	52	53	56	57	59	61	63	64	64	66	66
7			9	11	22	25	30	36	42	45	46	49	50	53	55	57	59	59	61	61
8					12	15	21	28	35	38	39	43	44	47	50	52	54	54	56	56
9					3	6	12	20	27	30	32	37	38	41	44	47	50	50	52	52
10							4	13	20	24	26	31	33	36	39	42	44	45	47	48
11								4	13		19	26		31	35	37		41	43	
12									6		13	21		26	30	33		36	39	

(शुष्क बल्ब का तापक्रम °C में)

* नेशनल इन्स्ट्रूमेंट लिमिटेड जादवपुर कलकत्ता

लेखक परिचय

डॉ एस के पुराहित पशुचिकित्सा एव पशुविनान महाविद्यालय, राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर के औपध एव जनस्वास्थ्य तथा स्वास्थ्य विनान विभाग म सहायक प्राध्यापक (Assistant Professor) हैं। आप पशुचिकित्सा और जनस्वास्थ्य विज्ञान के क्षेत्र म एक जानमाने लेखक हैं। इनकी तीन पुस्तके और 44 शोध-पत्र राष्ट्रीय एव अन्तर्राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हो चुके है।